Centre for Distance & Online Education

UNIVERSITY OF JAMMU
JAMMU

SELF LEARNING MATERIAL
B.Ed.
SEMESTER-III

SUBJECT : Teaching of Hindi	**UNIT : I-IV**
Course No. : 301	**LESSON NO. : 1 to 12**

Programme Coordinator

Dr. Jaspal Singh Warwal

jaspaljammuuniversity@yahoo.com

Printed and Published on behalf of the Centre for Distance & Online Education,
University of Jammu, Jammu by the Director, CD&OE, University of Jammu, Jammu

http:/www.distanceeducationju.in

TEACHING OF HINDI हिन्दी शिक्षण

COURSE CONTRIBUTORS

Dr. Usha Koul
Principal
Harvard College of Education,
Jammu

Dr. Jaspal Singh
CDOE, University of Jammu,
Jammu

FORMAT EDITING/COURSE EDITING

Dr. Jaspal Singh
CDOE, University of Jammu,
Jammu

© Centre for Distance & Online Education, University of Jammu, Jammu, 2025

- All rights reserved. No part of this work may be reproduced in any form, by mimeograph or any other means, without permission in writing from the CD&OE, University of Jammu
- The script writed shall be responsible for the lesson/script submitted to the CD&OE and any plagiarism shall be his/her entire responsibility.

Printed at : Mehjoor Art Press, Sidco Industrial Complex, Rangreth, Srinagar Ph : 9419009510

Bachelor of Education (B.Ed) through Open and Distance Learning (ODL)
Semester III

(For the examination to be held in the year 2025, 2026 & 2027)

Course No. : 301(Theory) — **Title : Teaching in Hindi**
Credit : 4 — **Total Marks : 100**
Maximum Marks Internal : 30 — **Maximum Marks External : 70**
Duration of Exam.: 3 Hrs.

हिन्दी शिक्षण

उद्देश्यः–

हिन्दी शिक्षण के लिए सम्बन्धी योग्यताओं का विकास करना।

भावी शिक्षकों में हिन्दी भाषा शिक्षण की कुशलताओं का विकास करना।

आधुनिक शिक्षण विधियों के उचित प्रयोग के बारे में भावी शिक्षकों को परिचित करवाना।

हिन्दी शिक्षण में सहायक सामग्री के निर्माण और प्रयोग की योग्यता का विकास करना।

भावी शिक्षकों में मूल्यांकन क्षमता का विकास करना।

प्रथम इकाई

पाठयक्रम तथा पाठय सहगामी क्रियांए

- ❖ पाठयक्रम – अर्थ, महत्व एंव आदर्श हिन्दी पाठयक्रम निर्माण के सिद्धान्त।
- ❖ पाठयपुस्तक – अर्थ तथा महत्व / हिन्दी भाषा की पाठयपुस्तक की विशेषताएं।
- ❖ पाठयसहगामी क्रियांए – अर्थ तथा हिन्दी शिक्षण में विद्यालय पत्रिका, नाटक एंव साहित्यिक क्लब का महत्व

द्वितीय ईकाई

शिक्षण पद्वति एवं सामग्री

- ❖ शिक्षण पद्वति – अर्थ तथा भेद। व्याख्यान, प्रश्नोत्तरी, प्रोजेक्ट एंव विचार – विमर्श, आगमन तथा निगमन विधि
- ❖ शिक्षण सामग्री – अर्थ, महत्व तथा भेद
- ❖ हिन्दी शिक्षण में चाक बोर्ड, मॉडल, टेलीविजन चाट आडियो टेप, कम्प्यूटर ई–मेल, पी॰पी॰टी॰, विडियो कान्फरोर्न्सिग तथा भाषा प्रयोगशाला का महत्व।

तृतीय ईकाई

पाठ–योजना

- ❖ पाठ योजना – अर्थ तथा महत्व/ ईकाई/ मासिक तथा वार्षिक पाठ–योजना का लक्ष्य।
- ❖ कविता, कहानी, निबन्ध व नाटक की पाठ–योजनाओं के सोपान तथा उद्देश्य।
- ❖ हरबर्ट तथ आर॰ सी॰ इ॰ एम॰ उपागमों के पदों का हिन्दी शिक्षण में प्रयोग/ इन उपागमों के गुण तथा सीमाएं।

चतुर्थ ईकाई

हिन्दी भाषा शिक्षण में मूल्याकंन

- ❖ मूल्याकंन – अर्थ, प्रकार (रचनात्मक, समकलित, मौखिक तथा लिखित) तथा महत्व।
- ❖ मूल्याकंन प्रविधियाँ – अर्थ, भेद (निबन्धत्मक तथा वस्तुनिष्ट), महत्व तथा उपयोग/ सभी प्रकार के प्रश्नों का अभ्यास।
- ❖ भाषिक कौशलो को जांचने के मौखिक तथा लिखित प्रश्नों के स्वरूप तथा अभ्यास।
- ❖ भाषा के मूल्यांकन के प्रश्नपत्रों का स्वरूप तथा निर्माण के सिद्धान्त, विषय–वस्तु, अर्थ ग्रहण तथा भाषाभिव्यक्ति कुशलता ।

सत्रीय कार्य

- ❖ रेडियो स्टेशन तथा एफ॰ एम॰ स्टेशन का भम्रण
- ❖ वाद–विबाद प्रतियोगिता

सहायक पुस्तक सूची :–

नायक सुरेश, ''हिन्दी भाषा शिक्षण,''टवंटी फार्स्ट सेचुरी पब्लिकेशन्स, पटियाला।

बराड़ सर्वजीत कौर, ''हिन्दी अध्यापन'', कल्याणी पब्लिकेशन्स, देहली।

खन्ना ज्योति, ''हिन्दी शिक्षण'', धनपत राय ए.ड़ सन्ज़, देहली।

गोयल ए॰के॰, ''हिन्दी शिक्षण'', हरीश प्रकाशण मनिदर, आगरा।

मक्कड़ नरिन्द, ''हिन्दी शिक्षण'', गुलनाज़ पब्लिकेशन्स़, जालन्धर।

Note for Paper Setters

The Question paper consists of 9 questions having Q no 1 as Compulsory having four parts spread over the entire Syllabus, with a weightage of 14 marks .The rest of Question paper is divided into four Units and the students are to attend four Questions from these units with the internal choice. The essay type Question carries 14 marks each. Unit IV having the sessional work/field work (section) could also be a part of the theory paper.

Internship/field work Unit IV having the components/activities of the internship are to be developed in the form of the Reflective Journal. All the activities under the internship are to be evaluated for credits and hence all the activities are to be showcased by the trainee and are to be fully recorded with the complete certification of its genuineness .

The Theory paper is to have 70 marks (external) . 30 Marks are for the In House activities

B.Ed SEMESTER-III

Course No. 301

इकाई	पाठ	विषय संख्या	लेखक	पृष्ठ संख्या
1.	1	पाठ्यक्रम–अर्थ, महत्त्व एवं आदर्श हिन्दी पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त	डॉ उषा कौल	**7**
	2	पाठ्य पुस्तक – अर्थ तथ महत्त्व		**18**
	3	पाठ्य सहगामी क्रियायेः अर्थ एवं हिन्दी शिक्षण में 1. विद्यालय पत्रिका, 2. साहित्यक गोष्ठी 3. नाटक		**29**
2	4	शिक्षण पद्धति	डॉ उषा कौल	**38**
	5	शिक्षण सामग्री – अर्थ, महत्व तथा भेद।		**52**
	6	हिन्दी शिक्षण में : चॉक बोर्ड, मॉडल, टेलीविजन, चार्ट, ऑडियों टेप, कम्प्यूटर, पी.पी.टी., वीडियों कान्फ्रेंसिग तथा भाषा प्रयोगशाला का महत्व		**61**
3	7	पाठ योजना	डॉ जसपाल सिंह	**71**
	8	गद्य एवं पद्य शिक्षण की पाठ योजना का निर्माण		**97**
	9	हरबर्ट एवं आर सी ई एम उपागमों		**136**
4	10	मूल्यांकन	डॉ जसपाल सिंह	**160**
	11	मौखिक कौशलों को जांचे		**184**
	12	भाषा के मूल्यांकन के प्रश्न पत्र		**191**

UNIT - I (इकाई – 1) पाठ/ **LESSON** : 1

पाठ्यक्रम – अर्थ, महत्त्व एवं आदर्श हिन्दी पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त

1.1. भूमिका

1.2. उद्देश्य

1.3. अर्थ

1.4. महत्त्व

1.5. आदर्श पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त

1.6. निष्कर्ष

1.7. आत्मजांच और परीक्षण

1.8 सहायक ग्रंथ सूची

1.1 भूमिका :

अध्यापक शिक्षा की यह मौलिक अवधारणा रही है कि एक प्रवीण तथा प्रभावशाली शिक्षक के लिए अपने विषय का गहन ज्ञान होना अनिवार्य है। अपने विषय पर प्रमुत्व एवं स्वामित्व होना ही पर्याप्त नहीं है अपितु शिक्षण के लिए जो व्यावहरिक और सैद्धन्तिक पक्ष विद्वानों द्वारा स्थापित किए हो, उनका पूर्ण एवं गहन बोध होना अनिवार्य है निःसंदेह शिक्षण एक कला है और यह कला किसी में जन्मजात होती है और कोई अपने संघर्षपूर्ण अध्ययन / अध्यापन से इसे अर्जित करता है। जिनमें यह कला जन्मजात होती है, वे सीमित मात्रा में है। विज्ञान ने शिक्षण क्षेत्रा में, प्रतिभाशाली शिक्षकों के हेतु प्रशिक्षण प्रक्रिया को प्रोत्साहित किया है जिसमें ऐसे शोध प्रयोग, किये जाते है जिन्होंने शिक्षण विधियों, कौशलों को विकसित किया है। भाषा शिक्षण एव विस्तृत क्षेत्र है, इसलिए विद्यालयी विषयों में भी शिक्षण एवं वस्तु प्रक्रिया भिन्न–भिन्न है। यह भिन्नता दो पक्षों पर आधारित है–

'अ' भाषा का शिक्षण।

'ब' साहित्य का शिक्षण ।

दो पक्ष भिन्न–भिन्न होते हुए भी एक दूसरे के पूरक हैं, अर्थात् सम्बन्धित हैं। भाषों के बिना साहित्यिक शिक्षण सम्भव नहीं हैं, इसलिए जब 'भाषा शिक्षण' का नाम आता है, उसमें 'साहित्यिक शिक्षण' निहित रहता है। अतः साहित्यिक शिक्षण, भाषिक तत्त्वों के माध्यम से होती है, इसलिए भाषा शिक्षण में 'काल' तथा 'विज्ञान' दोनों का मिश्रण है। 'पाठ्य क्रम' भाषा शिक्षण का अंग होकर भी साहित्यिक अंश को स्पष्ट करता है। यह साहित्य, को एक स्तर प्रदान करता है जो 'क्या, कब, कैसे,

क्यों और किस प्रकार जैसे तत्त्वों को स्पष्ट करता है। शिक्षा प्रदान करने वाले साधनों में यह एक संशक्त, सार्थक और महत्वपूर्ण साधन है। यह शिक्षण व्यवस्था का ऐसा अनिवार्य अंग है जो अध्यापकों को एक निश्चित समय में अपनी कक्षा के पाठ्यक्रम को समाप्त करना होता है। इसमें सुनियोजित योजना का आयोजन किया जाता है। बिना विचार–विमर्श किए निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव नहीं है।

1.2 उद्देश्य

1. प्रत्येक के लिए शिक्षा के अवसर प्रदान करना। इन अवसरों में सफलता की दिशायें भी निहित हों।
2. पाठ्यक्रम का दूसरा उद्देश्य शिक्षा का सामान्य ढाँचा स्थापित करना।
3. छात्र छात्राओं की सूझ बूझ तथा विवके शक्ति का अधिक से अधिक विकास करना।
4. छात्रों में गद्य,पद्य आदि के विभिन्न अंगों, भेदों, तथा प्रभेदों को भली प्रकार समझने की क्षमता विकसित करना।
5. विद्यार्थियों में भाषण, वाद–विवाद और अन्य प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए प्रेरित करना।
6. पाठ्यक्रम द्वारा छात्रों भावात्मक एकता का आभास दिलाना।

इस प्रकार पाठ्यक्रम मानव संसाधन विकास का एक महत्त्वपूर्ण साधन है।

1.3. अर्थ

शिक्षण पद्धति का आवश्यक अंग होने के कारण, अध्यापक को एक निश्चित क्रम के अनुसार अपना शिक्षण कार्य करना होता है, इसके लिए वह किसी भी शिक्षा पद्धति, शिक्षण विधि, या कोई भी विषय वस्तु का शिक्षण करायें या पढ़ाये लेकिन पाठ्यक्रम का निर्वाह करना अनिवार्य है। इसे निर्वाहित करने में अगर असावधानी रह जाती है तो शिक्षण व्यवस्था त्रुटि पूर्ण रह जाती है परिणाम स्वरूप तात्कालिक उद्देश्यों की प्राप्ति संतोषजनक नहीं होती।

इसके (पाठ्यक्रम) विषय में कहा गया है कि इसका योग दो शब्दों के मेल से हुआ है – पाठ्य + क्रम अर्थात् पढ़ने योगय सामग्री। यह इसका शाब्दिक अर्थ है। इसका अर्थ यह हुआ कि छात्रों के सम्मुख जो भी विषय समाग्री अधिगम हेतु रखी जायें, उसका एक निश्चित क्रम निर्धारित होना अनिवार्य है।

शिक्षा के मुख्यरूप से तीन आधार भूत अंग होते हैं – 1. शिक्षक, 2. विद्यार्थी और 3. पाठ्यक्रम। शिक्षा नियोजित ढंग से प्रदान की जाये, उसके लिए कुछ निश्चित उद्देश्य होते है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कुछ विषयों का ज्ञान तथा क्रियाओं का प्रशिक्षण होना आवश्यक है जिसे 'पाठ्यक्रम' की संज्ञा दी जाती है। अंग्रेजी में इसका अर्थ है – 'करीक्य्लम' जो लेटिन भाषा से निर्मित है, इस भाषा

में इसे कुरियर की व्युत्पति मानते है। इसका अर्थ है– 'दौड़ना' या 'दौड' का मैदान। जिस प्रकार इस मैदान में दौडनेवाला दौडकर अपना लक्ष्य प्राप्त करता है उसी प्रकार शिक्षा के दौड रूपी मैदान में 'दौड' पाठ्यक्रम रूपी मार्ग पर दौडी जाती है, जिसका उद्देश्य छात्र/छात्रों के व्यक्तित्व का विकास करना होता है। पाठ्यक्रम शिक्षा क्षेत्र में विषय प्रकारणों का एक ऐसा व्यौरा है जिसे छात्र को निश्चित समय में पढ़ना पड़ता है। ताकि अपनी सौद्देश्यता प्राप्त कर सके।

विद्वानों द्वारा पाठ्यक्रम की विभिन्न परिभाषायें –

1. **'कनिंधन'** में पाठ्य क्रम के सन्दर्भ में कहा है, ''पाठ्क्रम कलाकार (शिक्षक) के हाथ में वह यन्त्र (साधन) है जिससे वह अपनी वस्तु (छात्र) को अपने कलाकेन्द्र (कक्षा) में अपने–अपने आदर्शों (विद्यार्थी नियमों) के अनुसार ढालता है या बनाता है।''

2. **किलपैट्रिक की शब्दावली के अनुसार** :– ''पाठ्यक्रम में वे सभी अनुभव निहित हैं जिनको शिक्षा संस्था (स्कूल) द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है।''

3. **वेन्ट और क्रोनेन** :– इस विद्वान के अनुसार ''पाठ्यक्रम पाठ्य वस्तु का सुव्यवस्थित रूप है जो छात्रों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु तैयार किया जाता है।

4. **क्रो एण्ड क्रो के विचारानुसार** : ''पाठ्यक्रम में वे सभी अनुभव सम्मिलित हैं जिन्हें छात्र स्कूल के भीतर या बाहर प्राप्त करता है। इन अनुभवों को एक कार्यक्रम में नियोजित किया जाता है जो छात्रों के मानसिक, शरीरिक, समाजिक, भावात्मक, आध्यात्मिक तथा नैतिक विकास के लिए बनाया जाता है।

5. **मनुरों के अनुसार** :– ''पाठ्यक्रम में वे सभी क्रियायें शामिल है जिनको हम शिक्षा के उद्देष्य को प्राप्त करने के लिए विद्यालय में प्रयोग करते हैं।''

विद्वानों की इन परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि पाठ्यक्रम में विषय सामग्री व्यवस्थित रूप से होती है। यह किसी भी कक्षा विशेष के लिए एक ऐसी पाठ्य–सामग्री है जिसे निश्चित अवधि में पढ़कर विद्याथियों को उसमें निहित ज्ञान को आत्मसात करना होता है। किसी भी विद्यालय में कक्षा स्तर के अनुसार तथा विशय के अनुसार पाठ्य क्रम निधारित किया जाता है। पाठ्यक्रम निर्धारण में शिक्षा उद्देष्य को सामने रखना अनिवार्य है।

इस तथ्य के उद्देश्य बहुत व्यापक है जिसमें समय की आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन भी किये जाते है। इन सबका सामूहिक रूप पाठ्यक्रम करीक्यूलम कहलाता है या उसी में समाहित होता है। आधुनिक युग में पाठ्यक्रम व्यापक अर्थ में अपनाया जाता है। व्यापक अर्थ में छात्र द्वारा विद्यालय में प्राप्त होने वाले समस्त अनुभव सम्मिलित है और सीमित अर्थ में इसका तात्यर्प विषय सामग्री से है जिसे अध्यापक को सीमित समय में समाप्त करना होता है ताकि छात्र वांछित योग्यताएं प्राप्त करें।

भाषा शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार के ज्ञान से अवगत कराया जाता है ताकि उनका व्यक्तित्व संतुलित विकास की ओर अग्रसर हो। इस उद्देश्य प्राप्ति हेतु छात्रों को शिक्षा के विभिन्न कक्षा स्तरों से गुजरना पड़ता है – प्राईमरी – मिडल – हाई (माध्यमिक) – उच्च माध्यमिक

(हायर) – स्तातक – स्नातकोत्तर आदि प्रत्येक स्तर पर छात्रों को कितना ज्ञान दिया जाये, किस कौशल में किए सीमा तक प्रशिक्षित किया जाये, किन रूचियों, अमिरूचियों अमिवृतियों को किस सीमा तक विकसित किया जाये इसका ध्यान रखते हुए पाठ्यक्रम निर्धारित किया जाता है।

अतः पाठ्य क्रम विषय सामग्री का क्रमबद्ध रूप है जिसे निश्चित एवं निर्धारित समय में पढ़ाना और पढ़ना होता है। इनता अवश्य है कि विषय सामग्री का कुछ अंश पाठ्य प्रस्तुकों के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। और कुछ अध्यापक के निर्देशित संकेतों द्वारा।

उदाहरण स्वरूप कक्षा में हिन्दी अध्यापन करने हेतु एक/दो तीन पुस्तके निश्चित/निर्धारित की जाती हैं, परन्तु रचना कार्य अध्यापक द्वारा निर्देशित संकेतों द्वारा सुनियोजित किया जाता है। संक्षेप में कह सकते हैं कि पाठ्य क्रम केवल पाठ्य पुस्तकों तक ही सीमित नहीं होता अपितु उसमें कई निर्देशक संकेत भी निहित होते है। इसी पाठ्यक्रम द्वारा छात्रों की योग्यताओं का परीक्षण किया जाता है। 'मुदलियार कमीशन' के कथनानुसार पाठ्यक्रम का तात्त्पर्य हमारे स्कूलों में परम्परा से पढ़ाये जाने वाले चंद विषयों से नहीं है अपितु उन अनुभवों से है जो विभिन्न क्रिया कलापों से प्राप्त होते है। आजकल पाठ्यक्रम में छात्रों के सर्वागीण विकास पर बल दिया जाता है, जिसके लिए पाठ्यक्रम में विभिन्न विषय, उपकरण एवं साधन निहित होते हैं और छात्रों की शिक्षा पूर्ण होती है। एक तथ्य यह भी है कि पाठ्यक्रम मात्र साधन है, न साध्य।

1.4 महत्त्व

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि बच्चा औपचारिक साधनों से भाषा का ज्ञान प्राप्त करता है और अनौपचारिक रूपों से अन्य विषयों की जानकारी प्राप्त करता है लेकिन यह अनौपचारिक रूप अपूर्ण माना जाता है और उसे पढ़ा लिखा व्यक्ति नहीं माना जाता है। शिक्षण प्रक्रिया आजीवन प्रक्रिया है फिर सही रूप से निमयबद्धता के अनुसार शिक्षा प्राप्त करने हेतु औपचारिक केन्द्र मात्र विद्यालय है जिनमें उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु पाठ्यक्रम निर्धारित किया जाता है उनकी महत्ता इस तरह से आंकी जाती है:–

1. लक्ष्य निर्धारण करना।
2. शिक्षण को व्यवस्थित करना।
3. पाठ्यक्रम शिक्षण को निय मित करता है।
4. शिक्षण विधियों का चुनाव करना
5. अभिभावकों का सहयोग प्राप्त करना
6. पाठ्यक्रम निरीक्षण करने के लिए
7. मुल्यांकन में सहायक
8. समय के सदुपयोग में सहायक
9. शिक्षा स्तर समान करने में सहायक
10. छात्रों का मार्ग दर्शन में सहायक

11. विषयों के सभी पहलुओं को सन्तुलित में सहायक

12. प्रश्न पत्र बनाने में सहायक

13. पाठ्य – पुस्तकों के निर्माण में सहायक

14. भटकन से बचाने में सहायक

15. छात्रों की मनोवैज्ञामिकता पूर्ण करने में सहायक

16. उद्देश्यों की प्राप्ति में साहयक

लक्ष्यों की विवेचना :–

1. पाठ्यक्रम निर्धारण से शिक्षा के लक्ष्य रेखांकित होते हैं। शिक्षा का व्यापक उद्देश्य (व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास) पूर्ति हेतु विकास के सोपान निश्चित किए जाते है। विकासात्मक लक्ष्यों के सोपानआरंभ्कि कक्षा से लेकर विश्वविद्यालीय स्तर तक विभाजित किए जाते है। ऐसा करने से अपनी क्षमताओं एवं योग्यताओं में पहले से अपेक्षा अधिक विकास एवं वृद्धि होती है। इन लक्ष्यों की पहचान पाठ्यक्रम से होती है। समय के साथ–साथ परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार इन उद्देश्यों में भी परिवर्तन होता रहता है।

2. विद्वानों की विचारधारा यह है कि शिक्षण का प्रभावशाली होना आवश्यक है यह प्रभावशीलता तभी सम्भव है जब शिक्षा एव शिक्षण में सही व्यवस्था हो । यह व्यवस्था अध्यापक की बोधात्मकता पर आधारित है कि उसे किस कक्षा स्तर को क्या पढ़ाना है, कितना पढ़ाना है और कैसे अध्यापन कराना/करना है। उन्हीं बिन्दुओं के अनुसार शिक्षक शिक्षण साधनों को संगठित करता है और अपने कार्य को सही मार्ग पर लाता है। इस भांति पाठ्यक्रम शिक्षण को सही दिशा एवं दशा प्रदान करता है।

3. कार्य कोई भी हो उसकी पूर्णता उसके उचित नियोजन पर आधारित है। शिक्षण के क्षेत्र में भी यही नियम लागू होता है जिसे शिक्षण का नियमन कहते है। बिना नियम के किसी कार्य को अंत तक नहीं लाया जा सकता । शिक्षक को ज्ञात होना चाहिए कि पाठ्यक्रम को नियमित करने के लिए उसको मासिक साप्ताहिक और दैनिक शिक्षण के आधार पर विमाजित शिक्षण को नियमित करना सहज हो जाता है।

4. अध्यापन करने से पूर्व शिक्षक को यह जानना अपेक्षित है कि पाठ का प्रकरण कैसा है, ताकि उपयोगी एवं उचित शिक्षण विधियां संगठित कर सके। इतना ही नहीं उसे अपने कार्य की रूप रेखा स्पष्ट हो जाती है। पाठ्यक्रम से ही शिक्षक को ज्ञान हो जाता है कि किस कक्षा में रचना कार्य अथवा व्याकरण कार्य करवाना है। इस भान्ति पाठ्यक्रम से ही उचित शिक्षण विधियों का चयन हो जाता है।

5. पाठ्यक्रम अभिभावकों का सही सहयोग प्राप्त होने में सहायता मिलती है। बच्चे ने अध्ययन में कितनी प्रगति की है, नया क्या सीखा है, क्या पढ़ा है – यह सब जानने के लिए अभियावक। माता पिता सदैव उत्सुक जिज्ञासू होते हैं। यह तभी सम्भव है जब उनको बच्चों

के निश्चित पाठ्यक्रम की जानकारी होगी। उनको उसी से ज्ञात होगा कि बच्चा किस विषय में सुदृढ़ है और किसमें कमज़ोर / दुर्बल वे उसके लिए शिक्षक से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास करते है। इस प्रकार सहयोग प्राप्त करने का महत्वर्पूण साधन है।

6. विद्यालय में अध्यापकों के कार्य का निरीक्षण करना अनिवार्य है। यह कार्य मुख्याध्यापक का होता है। उसका कर्त्तव्य है कि वह लगातार इसका पालन करे जिसके लिए वह प्रत्येक कक्षा में निर्धारित पाठ्यक्रम की जानकारी रखे। उसे ज्ञात रहता है कि अध्यापक अपना निर्धारित कार्य कितने समय में पूर्ण किया या करना है या कर लेना चाहिए। ऐसा करने से निरीक्षक शिक्षक के शिक्षण कार्य की कुशलता एवं प्रभावशीलता का निरीक्षण कर सकता है।

7. पाठ्यक्रम एक ऐसा आधार स्तम्भ है जो न केवल छात्रों द्वारा ग्रहण किए गये अधिगम को मुल्यांकित करने में सहायक है अपितु शिक्षक के षिक्षक का भी अंकन हो जाता है। मुल्यांकन से छात्रों की योग्यता मापी जाती है।

8. 'पाठ्यक्रम' एक ऐसा साधन है जो अध्यापक और छात्र दोनों के कार्य कलाप को निश्चित कर लेता है। पाठ्यक्रम से विद्यार्थी को क्या सीखना है और अध्यापक को क्या सिखाना (पढ़ाना) है। अतः यह शिक्षण प्रक्रिया सुचारू रूप से चलती है। अध्यापक और विद्यार्थी दोनों ही निश्चित समय में अपना कार्य पूर्ण करते है और समय का सही उपयोग होता है।

9. 'पाठ्यक्रम' शिक्षा का स्तर समान करने में सहायक बनता है निश्चित पाठ्यक्रम पूरे समाज का शिक्षा स्तर एक समान बनाता है। ऐसा करने से शिक्षा में सुधार करने की दिशायें सही हो जाती है, अगर यह स्तर समान न हो तो शिक्षा स्तर के उठने गिरने के कारणों का पता नहीं लगा सकते। शिक्षा प्रसार में कई निजी संस्थाएँ हैं, जिनका कुछ विशिष्ट प्रयोजन होता है, लेकिन वे सामान्य स्तर के बिना राष्ट्रीय धारा का अंग नहीं बन सकते।

10. 'पाठ्यक्रम' छात्रों का मार्ग दर्शन करने में सहायक बनता है। उन्हें अपनी दुर्बलओं का ज्ञान हो जाता है कि वे किस विषय में कमज़ोर हैं या किस विषय में प्रगति कर रहें हैं। कमज़ोरियों से सजग होकर दूर करने का प्रयास करते है इस तरह उनका सही मार्ग दर्शन होता है।

11. पाठ्यक्रम विषय के भिन्न– भिन्न अंगों में सही संतुलन स्थापित करने में सहायक है। भाषा–शिक्षण में शुद्ध उच्चारण, वाचन, व्याकरण प्रयोग, लेखन, रचना कार्य, गद्य, पद्य, कहानी, नाटक, आदि अंगों में सही संतुलन रहना अनिवार्य है क्योंकि इन सबका ज्ञान प्रदान करना भी अनिवार्य है। यदि संतुलन न हो तो शिक्षक अपनी सुविधा हेतु एक या दो अंगों पर अधिक बल देकर कार्य पूर्ण करता है जिसके परिणाम स्वरूप छात्र अन्य अंशों/अंगों में रूचि नहीं दर्शाता और कमज़ोर रहता है। संतुलन को बनायें रखना अनिवार्य है।

12. छात्रों की एक कक्षा से दूसरी कक्षा में प्रवेश पाने हेतु परीक्षा में उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। परीक्षा के लिए प्रश्न पत्र की अनविार्यता आवश्यक है जिसके लिए एक निश्चित 'पाठ्यक्रम', प्रश्नपत्र निर्मित करने वाले अध्यापक के पास होना अनिवार्य है। ऐसा करने से न्याय संगत निष्पक्ष रूप से परीक्षण होता है।

13. 'पाठ्य–पुस्तक' और 'पाठ्यक्रम' दोनों का परस्पर गहन सम्बध है। पाठ्य पुस्तक कक्षा स्तर के लिए तभी निर्धारित की जाती है जब उस कक्षा स्तर के लिए पाठ्य क्रम निर्धारित किया जाता है। कहने का तात्पर्य है, पाठ्य–पुस्तक से ही पाठ्यक्रम निश्चित होता है, इसके बिना शिक्षा अनियोजित और अव्यस्थित हो जाती है।

14. 'पाठ्यक्रम' एक ऐसा मापदण्ड है जो विद्यार्थी और शिक्षक दोनों को भटकने से बचाता है। पूरे शिक्षण सत्र में कितना पढ़ना और पढ़ाना है, इसके लिए मानसिक रूप से तैयार हो जाते है।

15. छात्रों की मनोवैज्ञानिकता को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है, इसके लिए यह समझना अनिवार्य है कि छात्र किन क्रियाओं में रूचि रखता है? ऐसा कौनसा कार्य करना चाहता है कि उसकी वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति हो। वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्णता भावी आवश्यकताओं के लिए सम्भावना बनाती है। पाठ्यक्रम में इन तीनों बिन्दुओं को ध्यान में रखना अपेक्षित है, ताकि बच्चे (छात्र) निष्चित समय में निश्चित कार्य को प्रसन्नता पूर्वक और पूर्ण उत्साह से समाप्त कर सकें।

16. 'पाठ्यक्रम' निर्माण करते समय जो उद्देश्य सम्मुख रखे जाते है, उनकी पूर्णता ही पाठ्यक्रम के औचित्य को प्रामाणित करती है। यदि 'पाठ्यक्रम' सुचारू, सुनियोजित रूप से पूर्ण हो तो उद्देश्यात्मकता प्राप्त हो जाती है। यदि इसमें तनिक संदेह रहे या यह अनुभव हो जाये कि उद्देश्यप्राप्ति नहीं हो रहीं, थोड़े परिवर्तन अवश्य करने चाहिए। पाठ्यक्रम में किस प्रशिक्षण से उद्देश्य सार्थक हो रहा है और कहां निरर्थक सिद्ध हो रहा है, यह जानना अनिवार्य है। अतः पाठ्यक्रम और उद्देश्य प्राप्ति में सही तालमेल होना चाहिए।

संक्षेप में कुल मिलाकर कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम शिक्षण प्रक्रिया और अधिगम प्रणाली का महत्वपूर्ण अंग है जो शिक्षण को सही मार्ग पर आरूढ़ करता है, व्यवस्थित करता है, नियमित करता है। विद्यार्थियों के मुल्यांकन में सहायक है।

1.5 'आदर्श पाठ्मक्रम के सिद्धान्त'

पाठ्यक्रम के महत्व को दृष्टि (ध्यान) में रखकर यह तथ्य निश्चित हो जाता है कि 'पाठ्यक्रम' निर्माण करना सरल नहीं है। यह एक गम्भीर एक दायित्वपूर्ण कार्य है। शिक्षण कार्य का आधार पाठ्यक्रम है, अतः कोई भी दोषपूर्ण स्थिति (अवस्था) पूरे शिक्षण कार्य को प्रभावित करती है। अतः पाठ्यक्रम निर्माण में विशेषज्ञों का हाथ एवं सहयोग होना अनिवार्य है। पाठ्यक्रम ही छात्रों को भाषाई कौशलों में प्रशिक्षित करने में सहायता देता है। हिन्दी का व्यापक प्रयोग देखते हुए पाठ्यक्रम बनाने में सावधानी निर्वाहित करना अनिवार्य है। इसके लिए विद्वानों ने जो सिद्धान्त निर्धारित किए हैं, वे इस प्रकार हैः–

1. **उद्देश्यों के अनुकूल** – पाठ्यक्रम बनाते समय जो उद्देश्य समाने रखे जाते हैं, उनका प्रतिबिम्ब

उसमें झलकना चाहिए। पाठ्यक्रम की प्रत्येक इकाई शिक्षा का कोई न कोई सामान्य या विशिष्ट उद्देश्य लिए होती है, जिनका परिलक्षित होना अनिवार्य है।

2. **छात्रों की मनोवैज्ञानिकता के अनुकूल :** वर्तमान शिक्षण प्रद्धति छात्र केन्द्रित शिक्षण – पद्धति है, इसलिए छात्र उसी विषय को शीघ्र ग्रहण करता है जो उसके मानसिक, शारिरिक, सामाजिक विकास में वृद्धि करे। अतः छात्रों की इन्ही योग्यताओं के अनुकूल पाठ्यक्रम निर्मित करना अनिवार्य है। बच्चे अधिकांशतः प्राकृतिक रूप से, सुंदर दृश्यों से प्रभावित होते हैं, उनमें रोचकता दर्शाते है, अतः उनकी रोचकता के अनुकूल 'पाठ्यक्रम' का निर्माण करना अपेक्षित है।

3. **'पाठ्यक्रम'** निर्धारित करते समय 'संतुलन' का ध्यान रखन अनिवार्य है, उसमें विभिन्न अंगों का सामवेश होना आवश्यक है। भाषा के विभिन्न तत्वों का निहित होना चाहिए। चारों कौशलों के साथ साहित्य की विभिन्न विधाओं को समाविष्ट करना अनिवार्य है। ऐसा करने से छात्रों में साहित्यिक अमिरूचियों को विकसिकत किया जा सकता है।

4. **'पाठ्यक्रम में भाषायिक आवश्यकाओं को अनुरूप'**– भाषा ही ऐसा एक माध्यम है जो छात्रों को विचार व्यक्त करने की योग्यता प्रदान करता है, दूसरों के विचारों को समझने एवं आत्मसात करने का साधन है। छात्र जितना कक्षा स्तरों में वृद्धि करता है उसके विचारों में भी दिशा परिवर्तन होता है, परिणाम स्वरूप भाषायिक आवश्यकताओं में भी भिन्नता होती है। यही कारण है कि हिन्दी भाषायी क्षेत्रों की भाषयी आवश्यकताये अहिन्दी क्षेत्रों के छात्रों से भिन्न होती है। अतः इस भिन्ता का ध्यान रखना अनिवार्य सिद्धान्त है।

5. **पाठ्यक्रम में तत्वों का संतुलनः –** भाषा शिक्षण प्रदान करते समय छात्रों को भाषा के विभिन्न तत्वों का ज्ञान दिया जाता है। भाषा के चारों कौशलों से परिचित (अवगत) कराया जाता है। साहित्य की विभिन्न विधाओं/युगों, धाराओं से अनुभूत कराया जाता है। अतः इस सिद्धान्त का संतुलित होना अनिवार्य है।

6. **उपयोगिता का सिद्धान्तः** पाठ्यक्रम निर्धारण ऐसा होना चाहिए कि छात्र अपनी भाषा से सम्बंधित ज्ञान का सही उपयोग कर सके। 'निज भाषा उन्नत अहे, सब उन्नति की मूल'। यथार्थ रूप में भाषा का विधिवत अध्ययन करने से छात्र जीवन के भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में प्रवेश कर सकता है। पाठ्यक्रम में यह ध्यान रखना अवश्य है कि उसके अध्ययन से छात्र समाज का उपयोगी सदस्य बन सके।

7. **लचीलापन का सिद्धान्तः** पाठ्यक्रम निर्माण में लचीलपन होना अनिवार्य है क्योंकि समाज में निहित परिस्थितियाँ विज्ञान की नित्य नवीन खोजों के कारण बदलती रहती है, परिणामस्वरूप नवीन से नवीनतम तथ्यों की अनुरूपता पाठ्यक्रम में होना आवश्यक है। ऐसा करने से छात्रों की मानसिक वृद्धि अवरूद्ध नहीं होगी, उसमें निरन्तर विकास होगा। छात्र रूढ़िवादिता के अनुगामी नहीं बनेंगे।

8. **चरित्र विकास सम्बन्धित सिद्धान्त :–** पाठ्यक्रम निर्माण करते समय इस सिद्धान्त का परिपालन होना अनिवार्य है। पाठ्यक्रम में निहित ज्ञान, ही उनके चारित्रिक गुणों में वृद्धि

करता है। भाषा शिक्षण में जो भी साहित्य सामग्री सम्मिलित की जाए, उससे छात्रों के चरित्र में गुणवत्ता आ जाए। नये सदगुणों से उनके मनोविकारों का शामन हो जाता है। अन्य विषयों में इस विकास की सम्भावना नहीं है।

9. **'उज्जवल भविष्य निर्माण का सिद्धान्त –** शिक्षण कार्य मूलतः छात्रों को ज्ञान देना ही नहीं है अपितु उस ज्ञान को एक साधन मानकर स्वयं को उसके प्रयोग करने के योग्य बनाना है। इसलिए पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों का समावेश होना चाहिए जिनसे ज्ञान प्राप्त करके छात्र अपने उज्जवल भविष्य का निर्माण कर सके, वे जीवन में आस्थावन बने, समाज कल्याण हेतु प्रयोग करके अपना जीवन सुखमय/ आनन्दमय बना सके।

10. **न अधिक कठिन न अधिक सरल–** पाठ्यक्रम निर्माण करके समय वैयक्तिक भिन्नता का सिद्धान्त अपनाना अनिवार्य है। सभी छात्र कक्षा में एक जैसा बौद्धिक स्तर नहीं रखते। अतः पाठ्यक्रम यदि अधिक कठिन होगा तो सामान्य छात्रों के लिए होवा बनेगा और यदि अधिक सरल होगा तो मेघावी छात्र भी उसमें रूचि नहीं लेगें, अतः कठिन और सरल दोनों का मिश्रित रूप अपनाना अनिवार्य है ताकि सभी प्रकार के छात्र रूचि ले सकें।

11. **इकाईयों में विमाजित –** वर्तमान शिक्षण पद्धति में इस सिद्धान्त की प्रमावशीलता देखी जाती है। छोटी–छोटी ईकाईयों से पाठ्यक्रम सरल, सुगम, सहज, सुबोध और सुग्राहय बनाता है। प्रत्येक इकाई का सम्बन्ध उद्देश्यपूर्ण होना अपेक्षित है। उद्देश्य व्यावहारिक शब्दों में व्यक्त होना चाहिए। इससे शिक्षण प्रभावशाली और उद्देश्यपूर्ण हो जाता है और छात्रों का अधिगम भी सरल हो जाता है।

12. **निर्धारित समय में अनुकूल –** पाठ्यक्रम निर्माण करके समय शौक्षिक सत्र का ध्यान रखना अनिवार्य है। इसके लिए समयतालिका, कालांश आदि निर्धारित किए जाते है। पाठ्यक्रम उतना ही लम्बा होना चाहिए कि सरलता से सत्र में समाप्त हो सके। समय नियोजन करना अनिवार्य है।

13. **तत्परता का सिद्धान्त–** पाठ्यक्रम इस प्रकार संगठित किया जाए कि शिक्षक उपयुक्त समय पर पढ़ा सके। ऐसा करने से छात्रों को आगे के लिए भी प्रेरित किया जा सकता है। उपयुक्त समय पर अधिक कार्य करवाया जा सकता है। अतः 'तत्परता सिद्धान्त' अपनाना अनिवार्य है।

14. **देश के संविधान एवं विकास के अनुकूल –** पाठ्यक्रम में इस सिद्धान्त का पालन होना अपेक्षित है। भारत धर्मनिर्पेक्ष देश है। यहां अनेक विरोधी तत्वों द्वारा मतभेद कराये जाते हैं। अतः संविधान एवं विकास तंत्र को ध्यान में रखकर क्षेत्रीयवाद, भाईभतीजवाद, जातिवाद, भाषावाद, धार्मिक साम्प्रदायिकता जैसी समस्याओं को समाप्त करने वाली सामग्री पाठ्यक्रम में रखना अनिवार्य है। ताकि देश के संविधान से देशवासियों के लिए पवित्र भावनायें छात्रों के मन में विकसित हो।

15. **निर्देशें एवं रचाओं का उल्लेख –** पाठ्यक्रम निर्माण करते समय अध्यापक के लिए निर्देशों एवं सूचनाओं का उल्लेख करना अनिवार्य है ताकि पाठ के सामान्य/विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके।

1.6 निष्कर्ष:

निष्कर्ष रूप में कह सकते है इसके निर्माण के हेतु सतत प्रयत्न। प्रयास की आवश्यकता है क्योंकि यह सरल कार्य नहीं है कि एक बार बनाया तो पुनः निर्माण या परिवर्द्धन की आवश्यकता नहीं है। जीवन के परिर्वतन और नवीन प्रयोगों के परिणाम स्वरूप इसके निर्माण में भी परिवर्तन और परिवर्द्धन की आवश्यकता है। ऐसा करने से न केवल शिक्षण उपयोगी बनता है। अपितु परिवर्तन और परिवर्द्धन मांगों को भी पूर्ण करता है।

1.7 आत्मजांच और परीक्षण

1. पाठ्यक्रम से क्या अभिप्राय है? इस धारण पर अपने विचार विस्तश्त रूप से प्रकार करें।
2. पाठ्यक्रम निर्माण की आवश्यकता और महत्व की विवेचना विस्तार पूर्वक कीजिए।
3. पाठ्यक्रम का अर्थ स्पष्ट करके इसके सिद्धान्तों पर विवेचनात्मक चर्चा कीजिए।
4. हिन्दी का पाठ्यक्रम निर्माण करते समय किन–किन सिद्धान्तों का होना अनिवार्य है।
5. 'पाठ्यक्रम का निर्माण एक व्यक्ति का काम नहीं है', इस कथन की युक्ति में अध्यापक एवं अभियावकों की भूमिका स्पष्ट करे।

क. वस्तुतिष्ठ – प्रश्न

1. पाठ्यक्रम को कोई एक परिभाषा लिखिए
2. पाठ्यक्रम निर्माण का कोई एक सिद्धान्त लिखिए।
3. 'पाठ्य क्रम की कोई एक महत्त्व लिखिए।
4. पाठ्य क्रम भारतवर्ष में किस स्तर पर तैयार होता है?
5. पाठ्य–निर्माण में किनता विचार–विमर्श करना अनिवार्य है?

ख. रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न

(कूर्सक्यूलम, सर्वांगीण, दाघातु, सेमिनार, पाठ्य पुस्तक)

1. पाठ्य क्रम की महत्ता और आश्यकता पर अध्यापकों के लिए .... आयोजित करना चाहिए ।
2. पाठ्यक्रम निर्माताओं को .... के सिद्धान्त की ओर ध्यान देना चाहिए।
3. .... व्यक्तित्त्व का .... करना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है।
4. पाठ्यक्रम का अंग्रेजी र्प्याय .... है।
5. पाठ्यक्रम का शाब्दिक अर्थ .... के याग से बना है।

ग. बहुविकल्पीय प्रश्न

1. पाठ्यक्रम का निर्माण किसी –

   क. एक व्यक्ति   ख. दो व्यक्ति

   ग. पांच व्यक्ति   घ. विशेषज्ञों की समिति

2. पाठ्यक्रम सदुपयोग में सहयाक होता है–

   क. व्यक्ति   ख. समाज

   ग. राष्ट्र   घ. समय

3. पाठ्यक्रम मार्गदर्शन करता है –

   क. व्यक्ति का   ख. अध्यापक का

   ग. समिति का   घ. विद्यार्थी का

4. पाठ्यक्रम शिक्षण को बनाता है–

   क. सामान्य   ख. असामान्य

   ग. लचीला   घ. व्यवस्थित

5. पाठ्यक्रम विषय– समाग्री का वह क्रमबद्ध रू॰ है जिसे अध्यापक पूर्ण करता है–

   क. एक वर्ष   ख. अनिश्चित समय

   ग. दो वर्ष   घ. निश्चित समय

1.8 सहायक ग्रन्थ सूची

1. हिन्दी भाषा का इतिहास : डा. धीरेन्द्र वर्मा
2. हिन्दी शिक्षण विधियांः एम.एम. भाटिया
3. हिन्दी शिक्षण : डा. पूर्ण सिंह वर्मा, डा. सुधा चौहान
4. हिन्दी शिक्षणः डा. सावित्री सिंह

पाठ्य पुस्तक – अर्थ तथ महत्त्व

2.1. भूमिका

2.2 उद्देश्य

2.3. पाठ्य पुस्तक का अर्थ एवं परिभाषा प्रकार

2.4. महत्व।

2.5. पाठ्य पुस्तक की विशेषताये

2.5.1 आन्तरिक गुण

2.5.2 बाहय – गुण

2.6 निष्कर्ष

2.7 आत्मजांच और परीक्षण

2.8 सहायक ग्रंथ सूची

2.1 भूमिका :

पाठ्य पुस्तकों को इतिहास अधिक पुराना नहीं है। प्राचीन तथा मध्यकाल में पुस्तके ताभ–पत्रों पर तैयार की जाती थी। कई पुस्तके हस्तलिखित भी होती थी लेकिन उनकी संख्या उतनी अल्प होती थी कि सब विद्यार्थियों तक पहुंच या उपलब्ध नहीं होने पाती थी। इसीलिए उस काल में भौतिक शिक्षा का प्रचलन था। जब पुस्तकों का आविष्कार हुआ तो उनको भिन्न–भिन्न आकारों, रंगों में छापना सम्भव हुआ। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासनकाल में सबसे पहले मुद्रायल 1829 ई. में कलकत्ता में स्थापित हुआ जिसका नाम 'कलकत्ता शिक्षण प्रेस' था। इसी प्रेस से भारत में पुस्तकों को छापने का कार्य प्रारम्भ हुआ। मानवीय ज्ञान की तीन अवस्थायें होती हैं–

1. मानवीय ज्ञान तथा अनुभवों को संचित किया जाता है।
2. मानवीय ज्ञान तथा अनुभवों का संचार किया जाता है।
3. मानवीय ज्ञान में वृद्धि की जाती है।

मनुष्य अपने ज्ञान एवं अनुभवों को संचित करता है जिसके लिए कई साधन है जिनमें प्रमुख साधन पुस्तके/ पुस्तकालय है। पुस्तकों द्वारा संचित ज्ञान एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक संचरित होता है। शिक्षक अपने शिक्षण की तैयार हेतु इनका प्रयोग करता है। पाठ्यक्रम के प्रारूप को विकसित करने मे ंविषय वस्तु के प्रकरणों की सूची तैयार की जाती है लेकिन उस प्रकरण में कितनी पाठ्य वस्तु को सम्मिलित किया जायेगा – उसका बोध नहीं हाल है विभिन्न स्तरों पर वहीं प्रकरण निहित किये जाते हैं परन्तु उनके स्वरूप में महत्वपूर्ण

अंतर होता है जिनका स्पष्टिकरण पाठ्य पुस्तकों से होता है। इसीलिए पाठ्य पुस्तकों को पाठ्यक्रम का पूरक माना जाता है। इसके इतिहास पर दृष्टि डाले तो स्पष्ट हो जाता है कि 1854 ई० में 'वुड' के घोषण पत्र में पाठ पुस्तके अंग्रेजी, संस्कृत और फारसी में प्रकाशित हुई। 1882 'भारतीय शिक्षा आयोग, 1918 कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग 1929 हार्टागँ समिति, 1936–1937 वुडएक्ट रिपोर्ट में पाठ्य पुस्तकों की रचना और सुधार के सम्बन्ध में कोई सुझाव नहीं मिलता है। निःसदेह 1910 ई. के बाद भारतीय नेताओं में शिक्षा की ओर ध्यान दिया लेकिन बाधाओं का क्या कारण है – ये न जान सके।

1935 में 'गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट' के अनुसार जब कुछ प्रान्तों में स्वायत – शासन आरम्भ हुआ तो राष्ट्र के वरिष्ठ नेताओं ने पाठ्य–पुस्तकों की रचना और सुधार पर भी ध्यान दिया। पाठ्य पुस्तकों के सम्बन्ध में सुझाव देने वाले प्रथम आचार्य नरेन्द्र देव समिति' है जो 1937–38 में स्थापित हुई। उसके पश्चात 1943 ई० में केन्द्रीय शिक्षा सलाहाकार परिषद् की बैठक में कुछ और सुझाव निहित किए गये। 1953 में दूसरी आचार्य नरेन्द्र देव समिति गाठित हुई जिसमें पाठ्य पुस्तकों के विषय में अधिक सही एवं परिमार्जित सुझाव दिये गए। सन् 1952–53 मुदालियर आयोग गठित (स्थापित) हुआ जिसमें प्रचलित पाठ पुस्तकों की आलोचना करते हुए, उसमें सुधार लाने पर बल दिया गया। 1954 मे 'फोर्ड फाउण्डेशन' के तहत तय हुआ कि भारतीय सरकार प्रकाशन और लेखन सम्बधी कुछ नियम बनाये, जिनके निर्देशन में (अधीन) प्रकाशक एवं लेखक पुस्तकें तैयार करें लेकिन प्रकाशन का दायित्व सरकार के हाथ में हो। 1964 में 'कोठारी आयोग' ने पाठ्य–पुस्तकों पर बल देकर कहा कि श्रेष्ठ कोटि के विद्वान पाठ्य–पुस्तकों की रचना करने में रूचि नहीं लेते है, जिसके लिए अनुसन्धान की आवश्यकता है।

2.2 उद्देश्य

1. पाठ्य पुस्तक की आवश्यकता साधन रूप में स्वीकृत करना उचित है, साध्य रूप में नहीं।
2. पाठ्य पुस्तक का उद्देश्य छात्रों में रटन्त प्रणाली को विकसित करना कदापि नहीं है और इस प्रणाली को छात्रों में उत्साहित करना अनुचित है।
3. पाठ्य पुस्तक द्वारा छात्रों की कल्पना शक्ति को विकसित करना है।
4. छात्र इस योग्य हो जाये कि पाठ– पुस्तक द्वारा वे विविध विषयों को पहचान सके तथा वे शैली विभिन्नता के दर्शन कर सकें।
5. पाठ–पुस्तक की उद्देश्यात्मकता छात्रों की ज्ञान सीमा विस्तृत करना।
6. पाठ–पुस्तक द्वारा छात्रों को इस योग्य बनाये कि अपने प्राप्त ज्ञान को व्यावहारिकता दे सके।
7. छात्रों में स्वाध्याय की रोचकता विकसित हो जायें।
8. पाठ्य पुस्तक में निहित विषयों के अध्ययन से उनमें (छात्रों) अच्छे बुरे, शुभ, अशुभ, सत्य–असत्य का विवके जागृत हो।
9. पाठ्य पुस्तक द्वारा भाषा सम्बन्धी सांस्कृतिक उद्देश्य पूरा हो सके।
10. पाठ्य पुस्तक का उद्देश्य मुख्य रूप से यह है कि उसमें सामाजिक जीवन भी झलक मिले। लोगों के रीति–रिवाज, इच्छाऐं, आकांक्षाएं, प्रेरणाएं, राष्टीय चरित्र इन सबका दिग्दर्शन हो।

2.3 पाठ्य–पुस्तक – अर्थ एव परिभाषा प्रकार

पाठ्य पुस्तक मानव की अद्भुत और महत्वपूर्ण रचना है। वह अपनी व्यक्तिगत विचारधाराओं, अनुभवों अनुभूतियों को पुस्तक रूप में संचित करके इसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक प्रेशनीय बनाता है। दूसरों शब्दों में कह सकते हैं कि पुस्तके ज्ञानसंचय का साधन है जिससे नवीन से नवीनतम पीढी लाभान्वित होती है। पाठ्य पुस्तक दो शब्दों के मेल से बनी है। पाठ्य+पुस्तक अर्थात् पढ़ने योग्य सामग्री। पाठ्य पुस्तक शिक्षण की पूरक है। यह अनिवार्य नहीं है कि कक्षा में छात्र उस पूरी सामग्री को ग्रहण कर ले जो कक्षा में पढ़ाया जाता है। पढ़ते–2 अनेक शंकाओं की उत्पति होती है जिन्हें तुरन्त उसी समय दूर नहीं किया जा सकता । ऐसी अवस्था में छात्रों को पुस्तक की सहायता लेनी पड़ती है। इसी क्रिया से छात्रों में स्वाध्याय की आदत् विकसित होती है। प्राचीन समय में (भारत में) पाठ्य पुस्तक के लिए ग्रंथ शब्द का प्रयोग किया जाता था जिसक अर्थ– 1. बांधना 2. गूथना, 3. नियमित रूप से जोड़ना 4. क्रमानुसार रखना।

अंग्रेजी में पुस्तक के लिए ठववा/बुक शब्द प्रयुक्त होता है, जिसे जर्मन भाषा के बीक से उत्पति मानी जाती है। बीक का अर्थ है – वृक्ष। फ्रांसीसी भाषा में भी 'बीक' शब्द है, यहां इसका अर्थ वृक्ष की 'छाल' माना जाता है।

आज के तकनीकी एवं कम्यप्यूटर युग में पुस्तकों के अतिरिक्त आधुनिक साधनों एवं माध्यमों का विकास हो रहा है, टेप, रिकार्ड, विडियों टेप, फलोपी, माइक्रो फिल्म आदि। इनके द्वारा महान हस्तियों को सुनने का अवसर मिलता है। इसके विपरीत पाठ्य पुस्तकलायों द्वारा हम केवल पढ़ने का लाभ उठा सकते है। अध्यापक केवल सहायक और पथ प्रदर्शक का काम करता है। वर्तमान शिक्षण प्रणाली में विशिष्ट स्थान होने के कारण मुद्रण काल के विकास का सुंदरतम उपहार है। पाठ पुस्तके पूरी शिक्षण प्रक्रिया को व्यवस्थित बनाये रखती है।

परिभाषाये: पाठ्य पुस्तक के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने अपने विचार/मत/दृष्टिकोण इस प्रकार स्पष्ट किए है।

1. **हैरोलिकर के अनुसार** :– इस विद्वान की विचारधारा यह है कि 'पाठ् पुस्तक ज्ञान, अनुभव भावनाओं, विचारों तथा प्रवशतियों का संचित किया साधन है।'
2. **हालकवेस्ट के अनुसारी :** 'पाठ् पुस्तक शिक्षण क्रियाओं एवं अभिप्रायों के लिए सुव्यव स्थित चिन्तन एवं ज्ञान का लिखित रूप है।'
3. **'हर्ल आर. डगलस' के अनुसार** : 'अध्यापाकों के अनुभावों एवं विशलेषण के अनुसार पाठ् पुस्तक पढ़ने पढ़ाने का महत्वपूर्ण आधार है।'

इन उपरिलिखित परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि प्रवीण, प्रभावशाली अध्यापक के लिए पाठ्य पुस्तक कितनी महत्वपूर्ण एव उपयोगी है। पाठ्य पुस्तक के अर्थ से स्पष्ट है कि भाषा में तो पाठ्य पुस्तके साधन और साध्य दोनों हैं। जब पाठ् पुस्तके छात्रों के शब्द, सूक्ति, मुहवारे, लोकोक्ति भण्डार में वृद्धि करने वर्ण विन्यास सिखाने शुद्ध उच्चारण करने, सस्वर मौन वाचन करने का अभ्यास कराने, स्वाध्याय की आदत विकसित करने के लिए प्रयुक्त की जाती है तब वे 'साधन' के रूप में कार्य करती है और जब किसी कहानी, कविता, नाटक, उपन्यास की अनुभूति रसास्वादन कराने के लिए प्रयुक्त की जाती है तब 'साध्य' के रूप में कार्य करती है।

कक्षा – शिक्षण में पाठ्य पुस्तक का प्रमुख स्थान माना जाता है। कक्षा में एक साथ सामूहिक रूप से छात्रो को पढ़ाना पाठ्य पुस्तक द्वारा ही सम्भव है। उनके द्वारा समय और शक्ति की बचन होती है। व्यक्तिगत शिक्षण में इसकी अर्थवत्ता अधिक बनती है। भाषा शिक्षण में पाठ्य पुस्तके ज्ञान के विकास के साथ–साथ छात्रों के मनोरजंन का आधार भी है।

पाठ्य पुस्तकों के प्रकार :

मुख्यरूप से पाठ्य पुस्तके दो प्रकार की होती है :–

1. विस्तृत अध्यय के लिए पुस्तके 2. सहायक पुस्तके

1. **विस्तृत अध्ययन** :– इस अध्ययन के लिए जो पुस्तके होती है उनका प्रयोजन छात्रों का शब्द–भण्डार और सूक्ति भण्डार में वृद्धि करना माना जाता है। दूसरे शब्दों में कह सकते है कि जिन शब्दों, सूक्तियों, मुहावरों, व्याकरणिक तत्त्वों का समावेश पाठ्य पुस्तकों में होता है। छात्र उनका उचित ढंग से प्रयोग कर सके।

2. **सहायक पुस्तके** : इस पुस्तकों को द्रुत वाचन पुस्तके भी कहते हैं। इन पुस्तकों द्वारा अर्थ समझना, व्याख्या करना या करवाना औचित्य नहीं रखता अपितु तीव्र गति से वाचन करना या करवाना होता है। छात्र शीघ्र से शीघ्र पुस्तक पढ़कर उसका भावार्थ समझ ले यही इन पुस्तकों का अभिप्राय/प्रयोजन होता है। कही – कही विद्यार्थी अध्यापक की सहायता ले सकता है या शब्द कोश देख सकता है।

इस प्रकार इन दो रूपों द्वारा शिक्षण बोध गम्य हो जाता है।

2.4 महत्त्व :

विषय कोई भी हो पाठ्य पुस्तक आवश्यक मानी जाती है। कई विषय ऐसे भी हैं जिनमें एक से अधिक पाठ्य पुस्तकें निर्धारित की जाती है। अध्यापक द्वारा दिये गए ज्ञान की पूर्णता पाठ्यपुस्तक द्वारा होती है। निःसंदेह इसके व्यापक प्रचलन के कारण कई आलोचक मानते हैं कि शिक्षा पुस्तक – केन्द्रित हो गई है, विद्यार्थियों में रटने की प्रकृति उत्पन्न हुई है, शिक्षण अमनोवैज्ञानिक हो रही है चूंकि उनका महत्त्व उनके प्रचलन के कारण बढ़ता जा रहा है, और मुद्रण कला ने मौखिक ज्ञान को लिपि का वरदान दिया, विषय समाग्री बढ़ गई है और भाषा शिक्षण की पूरी प्रक्रिया पाठ्य पुस्तकों पर आधारित है। इस संदर्भ में इसका महत्त्व/उपयोगिता इस प्रकार विवेचित किया जा सकता है :–

1. **शिक्षा को सुबोध बनाने में सहायक**: छात्र उन्हीं बातों को ग्रहण कर सकता है, जो उन्हें अच्छी तरह समझ में आती है। ज्ञान को सुबोध बनाने के लिए बार–बार दोहराने की आवश्यकता न पड़े। पाठ्य पुस्तक इसी आवश्यकता को पूर्ण करती है।

2. **ज्ञान ग्रहण में सहायक**: अध्यापक द्वारा पढ़ाये गये पाठ के ज्ञान को पूरी तरह ग्रहण करना सरल नहीं होता। मौखिक अभिव्यक्ति को समझ जाने पर भी छात्रों को पाठ्य पुस्तक रूपी साधन की आवश्यकता है जो विद्यालय और घर दोनों स्थानों पर सहायता करती है।

3. **मार्ग दर्शन में सहायक**: पाठ्य पुस्तक एक सही मार्ग दर्शक है जो छात्रों की भाषा योग्यता में वृद्धि करता है। यह वृद्धि किस स्तर पर कितनी होनी चाहिए, इसका अनुमान पाठ्य पुस्तक को देखने के

पश्चात लगाया जाता है कि चौथी, पांचवी कक्षा के बच्चों का भाषा–ज्ञान कितना होगा और किस प्रकार की पाठ्य पुस्तक का निर्माण करना चाहिए।

4. **कुशल शिक्षण में सहायक :** शिक्षक को कुशल शिक्षण के लिए अपने शिक्षण को आयोजित करना होता है, जिसमें पाठ्य पुस्तक ही एक आधार है। छात्रों को क्या और कितना पढ़ाना है – इसका ज्ञान पाठ्य पुस्तक से प्राप्त होता है। अध्यापक उसी के अनुरूप विधियाँ एवं सामग्री का चयन करता है।

5. **शिक्षण का सशक्त साधनः** पाठ्य पुस्तक ही कुशल शिक्षण का सशक्त साधन है विशेषकर भाषा शिक्षण में। अगर अध्यापक के पास कोई भी शिक्षण सहायक सामग्री न हो परन्तु पाठ्य पुस्तक की सहायता से, बिना पूर्व योजना के, अपना शिक्षण प्रभावशाली बना सकता है। इसकी उपयोगिता के विषय में 'रस्क' ने कहा है, 'आधुनिक पाठ्य पुस्तक एक उपकरणात्मक सम्पदा है, जिसके प्रयोग से अनुभवहीन अध्यापक सही आयोजन कर सकता है।'

6. **शिक्षा प्रसार में सहायकः** शिक्षा प्रसार में पाठ्य पुस्तक एक सही भूमिका है। मौखिक शिक्षण केवल 10–15 छात्रों तक प्रभावशाली रहता था लेकिन वर्तमान काल में एक – एक कक्षा में 50 विद्यार्थी भरे होते हैं, जिनको सफलतापूर्वक निर्वाहित करने में पाठ्य पुस्तक सहायक है।

7. **ज्ञान को स्थायी बनाने में सहायकः** ज्ञान का स्थाई होना तभी उपयोगी सिद्ध हो सकता है, जब मन–मस्तिष्क पर स्थाई छाप छोड़ दे। यह स्थायी बनाने के लिए, इसे समय–समय पर दोहराना अनिवार्य है। इस दोहवराव के लिए पाठ्य पुस्तक पर्याप्त सहायता करती है।

8. **मनोरंजन का साधन :** पाठ्य पुस्तके न केवल ज्ञान प्रदान करती है, अपितु मनोरंजन का विशेष साधन है। भाषा की पाठ्य पुस्तक में ज्ञानात्मक, रसात्मक, भावात्मक, हास्य – व्यंग्य से भरपूर विषय संकलित किए जाते है, जिनका उपयोग छात्र न केवल कक्षा में करते है, अपितु अवकाश के समय भी इसका प्रयोग करते है।

9. **अन्य पुस्तके पढ़ने में प्रेरकः** पाठ्य पुस्तकों से अन्य पुस्तके पढ़ने की प्ररेणा मिलती है। यदि पाठ्य पुस्तक में किसी भी कहानीकार की कोई कहानी संकलित है तो उस कहानी से प्रेरित होकर उसी लेखक की अन्य कहानियां पढ़ने की जिज्ञासा विकसित होती है।

10. **मौलिक चिंतन में सहायकः** पाठ्य पुस्तक के प्रत्येक पाठ के अंत में अभ्यास कार्य (प्रश्न) होता है। जिसके लिए छात्रों को मौलिक चिंतन की आवश्यकता होती है और व उसकी तरफ प्रेरित होते है। कहना अनुचित न होगा कि पाठ्य पुस्तकें मौलिक चिन्तन का आधार है।

11. **मित्तव्ययी साधनः** पाठ्य पुस्तक न केवल शिक्षा का सशक्त साधन है अपितु कम खर्चीला साधन है। पाठ्य पुस्तके लाखों की संख्या में छपती हैं, और कम दामों पर छात्रों के लिए बिकती है। आजकल इनका निर्माण, प्रकाशन, सरकारी या अर्ध सरकारी संस्थाओं द्वारा होता है और उचित कीमत पर छात्रों को पुस्तके मिलती है।

12. **लेखन कौशल के विकास में सहायक :** भाषा में लेखन कौशल का विकास पाठ्य पुस्तकों से सम्भव

है। छात्र पहले स्वयं पढ़कर शब्द विन्यास, वाक्य – विन्यास, विराम चिन्ह आदि का प्रयोग देखते हैं फिर स्वयं लिख्ने का अभ्यास करते हैं, जिससे उनमें लेखल कौशल का विकास होता है।

13. **परीक्षा की तैयारी में सहायकः** वर्तमान शिक्षा प्रणाली, परीक्षा प्रणाली पर आधारित है। परीक्षा प्रणाली में सफलतापूर्ण उत्तीर्ण होने के लिए छात्रों को पाठ् पुस्तक एक विशेष माप दण्ड है। परीक्षा की तैयारी के लिए पाठ्य पुस्तकों का अध्ययन अनिवार्य है।

14. **शिक्षण स्तर में सुधार लाने के लिएः** सभी शिक्षण एक समान योग्यता नही रखते है, और पाठ्य–पुस्तक के अभाव में अपनी जानकारी के अनुसार अध्यापन करेंगे, परन्तु पाठ्य–पुस्तक शिक्षण की सीमा निर्धारित करती है। इस तरह ये शिक्षण स्तर में सुधार लाती हैं।

15. **मनोवैज्ञानिक उपयोगिता :** भाषा शिक्षण की यथार्थता बच्चों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओ से जुड़ी है, इसलिए प्रत्येक स्तर के बच्चों की इस मनोवैज्ञानिकता का आवश्यक ध्यान सखना अपेक्षित है। इन आवश्यकताओ की पूर्णता में पाठ्य–पुस्तक महत्व पूर्ण भूमिका निभाती हैं।

संक्षेप में कह सकते हैं कि पाठ्य–पुस्तक की उपयोगिता (महत्व) विभ्न्नि दृष्टिकोणों से (उपर–विवेचत) मुल्याँकित ही गई है।

2.5 पाठ्यपुस्तक की विशेषतायें :

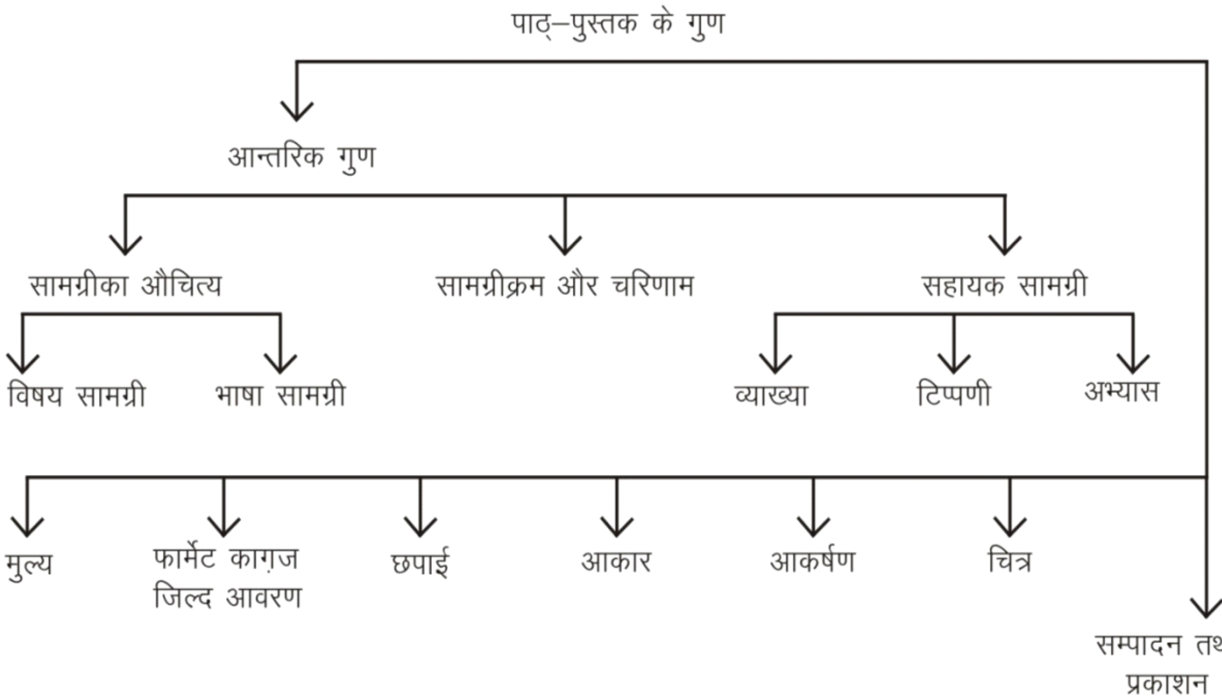

हिन्दी भाषा शिक्षण में पाठ्य–पुस्तके एक सशक्त माध्यम है और भाषायी कौशल विकसित करने में पूर्ण भूमिका निभाती हैं। अतः इनका चुनाव विभिन्न स्तरों पर ध्यानपूर्वक करना चाहिए। इनका चयन छा्त्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल होना चाहिए और भाषायी ज्ञान में क्रमबद्ध रूप से वृद्धि करने वाला होना चाहिए। पाठ्य–पुस्तकों के चयनकर्त्ता को इसमें निहित सभी गुणों और विशेषताओं का ध्यान रखना चाहिए।

एक अच्छी पाठ्य–पुस्तक के गुणों को दो भागों में बाटा जा सकता है।

1. बाह्य गुण **2 आन्तरिक गुण**

1. **बाह्य गुणात्मक विशेषताएं :** पाठ्य–पुस्तक की बाह्य विशेषताएं छात्रों को अधिक आकृष्ट करती हैं। देखा जाये तो पुस्तक का आन्तरिक/ एव बाह्य रूपों के मिश्रण से यथार्थता/वास्तविकता साकार होती है। पाठ्य–पुस्तक का बाह्य रूप उत्साह वर्द्धक प्रेरणादायी और जिज्ञासापूर्ण होना चाहिए। पुस्तक भीतर से रूचिकर होकर भी अगर बाहर से आर्कषक न हो तो पुस्तक की ओर छात्र प्रवृत नही होते हैं। बाह्य आकर्षण की दृष्टि से पाठ्य–पुस्तक के गुण निम्नलिखित हैः

1) आवरण :	**2) कागज एवं मुद्रण**
3) सिलाई	**4) चित्र व रेखाचित्र**
5) सन्दर्भ	**6) पाद–टिप्पणिया**
7) विषयसूची तथा अनुक्रमणिका	**8) शब्द व्याख्या**
9) अभ्यास–प्रश्न	**10) परिचय**
11) पुस्तक का मुल्य	**12) आकार**

1) **आवरण :** पाठ्य–पुस्तक का मुख्यपृष्ठ आकर्षक होना चाहिए जिससे छात्रों का ध्यान शीघ्र आकृष्ट होता है। छोटी कक्षाओं में रंग–बिरंगे चित्रों से युक्त आवरण पसंद होते है। आवरण पर विषय से सम्बन्धित चित्र (रंगीन) होना चाहिए।

2) **आकार :** पुस्तको का आकार छात्रों के स्तरानुकूल होना चाहिए। छोटी कक्षाओं में बड़ा आकार और बड़ी कक्षाओं में छोटा आकार। पुस्तक में निहित रचनाओं का भी आकार इसी स्तर के अनुसार होना चाहिए। छोटी कक्षाओं में रचनाओं का आकार अधिक लम्बा नही होना चाहिए, जिससे छात्र घबरा जायें और उनमे पाठ के प्रति अरोचकता उत्पन्न हो। इस मनोवैज्ञानिकता को ध्यान में रखना अनिवार्य है।

3) **कागज़ एव मुद्रण :** पुस्तक को आकर्षक बनाने में इस गुण का विशेष सथान है। मजबूत कागज़ पर की गई छपाई टिकाऊ होती है। मुद्रण साफ और सुन्दर कागज़ पर होना चाहिए जो बार–बार छात्रों द्धारा स्पर्श करने के बाद भी खराब न हो। कागज़ का प्रयोग करने से पहले उसका धरातल, प्रकार, भार आदि परखना अनिवार्य है। पाठ्य–पुस्तक अक्सर 28 पौंड भार के कागज़ पर छपती है। मुद्रण भी आधुनिक हो। एलाइनमैंट और फोलियोचर का विशेष ध्यान रखना अनिवार्य है। कागज़ सफंद और चिकना होना चाहिए जिससे छपाई शुद्ध और स्पृष्ट दिखे। प्राथमिक कक्षा के लिए निर्धारित पुस्तको का मुद्रण काफी ठीक होना चाहिए। प्रूफ शोधन में गड़बड़ी नही होनी चाहिए।

4) **सिलाई :** सिलाई पुस्तक की सशक्त हानी चाहिए, चाहे बाहरी हो या भीतरी, चपटे पुश्त की सिलाई हो या गोल पुश्त की, सिलाई वही सही है जो सम्पादित होने के बाद भी अच्छी तरह खुले एंव बंद हो।

5) **रेखाचित्र एंव चित्र :** छोटी कक्षाओं की पुस्तकों के भीतर रंगींन चित्र तथा रेखाचित्रों की अधिकता होनी चाहिए ताकि पाठ सहजता से ग्रहण हो सके। चित्र आकर्षक और रोचक होने चाहिए। चित्र कथानक के अनुसार होने चाहिए।

6) **सन्दर्भः** पाठ्य–पुस्तक में यह गुण होना अनिवार्य है पाठ्य–वस्तु को स्पष्ट करने में इसकी भूमिका विशेषता रखती है। इसके बिना पाठ अस्पष्ट रहता है।

7) **पाद–टिप्पणियाँ :** वस्तु ज्ञान एंव विषय को गहराई से आत्मसात करने के लिए यह गुण होना अनिवार्य है। इससे छात्रों को तत्सम्बंधी सम्पूर्ण जानकारी मिल जाती है। इससे पाठ सरल एंव सुगम बनता है।

8) **विषयसूची तथा अनुक्रमणिका :** पुस्तकों के प्रारम्भ में विषय सूची (सूचिका) दी जाती है और अंत में अनुक्रमणिका, इन दोनों का पाठ्य–पुस्तक में होना अनिवार्य है। इनको अगर सुन्दर ढँग से सजाया जाये तो आकर्षण ओर बढता है।

9) **अभ्यासार्थ–प्रश्न :** प्रत्येक अध्याय के अंत मे अभ्यासार्थ प्रश्न पूछे जाते है ताकि छात्रो के अधिगम (ज्ञान) का परक्षिण हो सके। इसे पुनरावृति, दोहराव या अभ्यासकार्य भी कहते है। यह गुण छात्रो को परीक्षा के लिए तैयार करता है।

10) **शब्द व्याख्या :** पाठ के अंत में अभ्यासार्थ प्रश्नो से पूर्व नवीन/गूढ़/कठिन शब्दों की व्याख्या दी जाती है ताकि छात्रों को पाठ समझने में सहायता मिले।

11) **परिचय :** हिन्दी की पाठ्य–पुस्तक में कोई भी अध्याय के प्रारम्भ में लेखक/कवि का परिचय दिया जाता है ताकि पाठ का सारांश समझने में छात्रो को सहायता हो।

12) **पृष्ठ संख्या का मुल्य :** हर पृष्ठ के ऊपर या नीचे इस गुण की अर्थवता देखी जाती है और पृष्ठ संख्या छापना सही गुण है इससे छात्रों को अमुक पृष्ठ पर लिखे पाठ को निकालना सरल हो जाता है।

13) **मुल्य :** पाठ्य पुस्तक का मुल्य इतना होना चाहिए कि छात्र उसे खरीदने में समर्थ हो। फिर भी पाठ्य पुस्तक का मुल्य कम होना चाहिए।

2 **आन्तरिक विशेषताएँ/गुण :**

हिन्दी भाषा की पाठ्य पुस्तक मे निम्नलिखित आन्तरिक गुण होने चाहिए :–

(क) विषय वस्तु से सम्बन्धित गुण **(ख) भाषा से सम्बन्धित गुण**

(ग) शैली से सम्बन्धित गुण **(घ) व्याख्या एव सामग्री**

(ङ.) चित्र **(च) अभ्यास कार्य**

(छ) विषयसूची

(क) पाठ्य पुस्तक मे संकलित विषय–वस्तु के माध्यम से छात्रों को भाषा सम्बन्धी ज्ञान दिया जाता है। निर्धारित उद्देश्यों और वाँछित योग्यताओं को विकसित करने की द्टष्टि से विषय–वस्तु में इन गुणों का होना अनिवार्य है :–

1) मनोवैज्ञानिकता
2) रोचकता
3) विविधता
4) शिक्षा प्रदता
5) जीवन से सम्बन्धित
6) पूर्वज्ञान पर आधारित
7) मौलिकता की रक्षा
8) भिन्न–भिन्न प्रदेशों से सम्बन्धित
9) अन्य विषयो से सम्बन्धित

ख. **भाषा से सम्बन्धित गुण** : देखा जाये तो सभी विषयों की पाठ्यपुस्तक सम्बन्धित भाषा, सुबोध, सरल, बोधगम्य, शुद्ध होती है लेकिन हिन्दी भाषा शिक्षण की पाठ–पुस्तक में भाषा की शुद्धता और सुबोधता पर अधिक ध्यान दिया जाता है। भाषा सम्बन्धित गुण एवं विशेषतायें निम्नलिखित है। –

1. सरलता
2. सतरानुकूलता
3. तद्भव से तत्सम की ओर
4. संक्षिप्तत
5. क्रमबद्धता
6. सांवेगिकता
7. शब्दावली 7 व्याकरण सम्भत भाषा

ग. **शैली सम्बधी गुण** : पाठ्य पुस्तक की लेखन शैली भी इसे आकर्षक बनाती है। इस दृष्टि से निम्नलिखित गुण होने चाहिए।

1. शैली स्तरानुकूल हो
2. प्रभावशाली हो
3. विविधतापूर्ण हो
4. सन्तुलित हो।

घ. **व्याख्या सम्बन्धी गुणः** पाठ्य पुस्तक की पाठ्य–सामग्री के प्रत्येक पाठ से कुछ नवीन शब्द एवं वाक्यांश प्रयुक्त होते है; पाठ्य पुस्तक में व्याकरण सम्बन्धी गुण निम्नलिखित होने चाहिए।

1. पारिभाषिक शब्दों
2. टिप्पणी देना
3. संक्षिप्त परिचय
4. अर्थ स्पष्टीकरण
5. प्रसंगों की व्याख्या

2.6 निष्कर्षः

निष्कर्ष रूप में कह सकते है कि आंतरिक एवं वाहय गुणों से युक्त पाठ्य पुस्तक को ही एक सही पाठ्य पुस्तक माना जा सकता है। ऐसी पाठ्य–पुस्तक शिक्षा और शिक्षण की आवश्यकताओं को पूरा करती है। पाठ्यपुस्तक में 2/3 वर्षो के पश्चात् दोहराव करना अनिवार्य है। इन गुणों के विकास से ही छात्रों का सामाजिक, बौद्धिक एवं मानसिक विकास किया जा सकता है।

2.7 आत्मजांच और परीक्षण

1. पाठ्य पुस्तक का अर्थ बताकर, परिभाषाओं के आधार पर विवेचना कीजिए।
2. पाठ्य पुस्तकों के लाभ कौन कौन से है?
3. हिन्दी शिक्षण में पाठ्यपुस्तक का स्थान निर्धारित करके, इनकी उपयोगिता विवेचत करें।
4. पाठ्य पुस्तक की विशेषताओं से क्या अभिप्राय है? स्पष्ट करें। इसकी आंतरिक विशेषताओं गुणों की विवेचना करें।
5. पाठ्य पुस्तक के बाहय गुण से क्या तात्पर्य है? बाहय गुणों की विवेचना करें।
6. एक आदर्श पाठ्य पुस्तक की विशेषताओं को वर्णितत करे।
7. पाठ्य पुस्तक भाषा शिक्षण का साधन है, इस कथन की समीक्षा / व्याख्या करें।

ख. वस्तुनिष्ट – प्रश्न

1. पाठ्य–पुस्तक की कोई एक परिभाषा लिखिए।
2. वर्तमान पाठ्य पुस्तक में कोई एक दोष लिखिए।
3. पाठ्य–पुस्तक की कोई एक विशेषता लिखिए।
4. पाठ्य – पुस्तक का कोई एक विशेष महत्त्व लिखिए।
5. पाठ्य–पुस्तक चयन का कोई एक मुख्य आधार लिखिए।

ख. रिक्त स्थानों पूर्ति प्रश्न

1. 'क्रो और क्रो' के अनुसार' – पाठ्य पुस्तकों को सीखने और सिखाने की क्रियाओं में .... के साथ महत्वपूर्ण स्थान है।
2. भाषा शिक्षण के उद्देश्यों के अनुरूप ही पाठ्य पुस्तकों की .... की जानी चाहिए।
3. 'मैक्सबैल' के अनुसार .... वह माध्यम है, जिसकी सहायता से अध्यापक विषय–वस्तु को कक्षा में प्रस्तुत करता है।
4. पाठ्य पुस्तकों में प्रायः .... की अवहेलना की जाती है।
5. पाठ्य पुस्तकों छात्रों को मान .... ज्ञान प्रदान करती है।

ग. सत्य/असत्य कथनों पर आधारित प्रश्न

निम्नलिखित कथ्नों में सत्य/असत्य कथनों को चयन कीजिए।

1. निम्न माध्यमिक स्तर पर पाठ्–पुस्तक प्रणाली व्याकरण शिक्षण की श्रेष्ठ प्रणली है। (सत्य/असत्य)
2. शिक्षण विधि एवं पाठ्य–वस्तु के सुधार में अच्छी पाठ्य – पुस्तकों का स्थान सवोपरि है। (सत्य/असत्य)

3. पाठ्य–पुस्तकों के प्रकाशन के सन्दर्भ में राज्य सरकारें प्रकाशकों को पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान करें। (सत्य / असत्य)
4. अतीत के ज्ञान का संचय पाठ–पुस्तकों द्वारा ही सम्भव है। (सत्य / असत्य)
5. पाठ्य – पुस्तक शिक्षक को शिक्षण की दृष्टि से कक्षा–स्तर का बाध कराती है। (सत्य / असत्य)

2.8 सहायक ग्रन्थ सूची

1. हिन्दी शिक्षणः भाई योगेन्द्र जीत
2. हिन्दी शिक्षण : डा. शिक्षा चतुर्वेदी
3. हिन्दी शिक्षणः डा. सुरेन्द्र सिंह कादियान

....

पाठ्य सहगामी क्रियायेः अर्थ एवं हिन्दी शिक्षण में 1. विद्यालय पत्रिका, 2. साहित्यक गोष्ठी 3. नाटक

3.1. भूमिका

3.2 उद्देश्य

3.3 पाठ्य सहगामी क्रियाये – अर्थवत्ता/ परिभाषा

3.4 पाठ सहगामी क्रियाओ का महत्त्व

3.5. साहित्यिक गोष्ठी – अर्थ एवं विशेषता

3.6 विद्यायल पत्रिका – अर्थ / महत्व

3.7 नाटकीयता – अर्थ / महत्व (विशेषता)

3.8 निष्कर्ष

3.9 आत्मजांच और परीक्षण

3.10 सहायक ग्रंथ सूची

3.1 भूमिका :

शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का सर्वोंगीण विकास करना है। शिक्षा ही बच्चे को एक सही नागरिकता प्रदान करती है। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो व्यक्ति को मात्र किताबी कीड़ा न बनाये अपितु उसके शारीरिक मानसीक, नैतिक तत्वों पर विशेष ध्यान दे। इन सब के लिए पाठ्–सहगामी क्रियायें/गतिविधियां एक सही भूमिका निभाती है। उसमें कोई संन्देह नहीं है किताबी ज्ञान से जीवन के सभी विषय एवं क्षेत्र स्पर्श नहीं किये जा सकते हैं, इसके लिए सहगामी क्रियाओं का होना अनिवार्य है ताकि भविष्य में बच्चे अपने जीवन को सही दिशा एवं दशा प्रदान कर सके, चुनौतियों का सामना कर सके, किसी भी उत्तरदायित्व को निर्वाहित करने की योग्यता/सक्षमता उनेमें विकसित हो। देशहित, समाजहित के लिए कुछ कर सके जिस पर राष्ट्र को गर्व हो। यह सब पाठ्य सहगामी क्रियाओं से ही सम्भव हो। बड़े–बड़े वक्ता, खिलाड़ी, नेता, शासक इन्हीं गतिविधियों या सहगामी क्रियाओं का परिणाम है। 'आज का बच्चा कल का नागरिक' इस कथन की पुष्टि करता है कि पाठ्य सहगामी क्रियायें अपूर्व भूमिका निभाती है।

3.2 उद्देश्य

1. पाठ्य–सहगामी क्रियायें छात्रों के सर्वागीण विकास में सहायक में सहायक बनाना।
2. सहगामी क्रियाओं द्वारा छात्रों को समाजिक जीवन व्यापन करने, समाज में एक दूसरे की सहायता करके स्वभाव में परिवर्तन लाने प्रशिक्षण मिलता है।

3. छात्रों की भावनाओं में उदात्तीकरण करना।

4. सहगामी क्रियाओं द्वारा छात्रों में अपने अधिकारियों के प्रति समस्त सिद्धान्तों का परिपालन करना।

5. पाठ्य–गतिविधियों द्वारा छात्रों के नैतिक विचारों और नैतिक स्तर को ऊँचा करना।

6. शिल्प तथा रोचक खेलों द्वारा छात्रों को स्वस्थ समयानुगम के लिए प्रशिक्षित एवं प्रेरित करना।

7. छात्राों को विभिन्न गतिविधियों द्वारा सांस्कृतिक परम्पराओं को समझने के लिए उत्प्रेरित एवं उत्साहित करना।

8. छात्रों को विभिन्न गतिविधियों द्वारा नेतृत्व के लिए तैयार करना।

9. सहगामी क्रियाओं में सभी प्रकार की सुविधायें उपलब्ध हो जिनमें छात्रों में रसात्मक अभिरूचि विकसित हो। जैसे– ड्राइंग, चित्रकला, मूर्तिकला, मिट्टी के खिलौने बनाना, चार्ट बनाना, पुष्पोत्सव, ड्रेस प्रतियोगिता आदि। इतना ही नहीं नाटकीयता का प्रशिक्षण देना, लेख लिखने के लिए उत्साहित करना, वाद–विवाद– प्रतियोगिता आदि में सहमागिता करवाना – ये सब पाठ्य सहगामी क्रिया के उद्देश्य माने जाते है।

3.3 पाठ्य सहागमी क्रियाये – अर्थवत्ता/परिभाषा

हमारे भारत वर्ष में ये पाठ्य सहगामी क्रियाये प्राचीन काल से प्रचलित है। छात्र गुरुकुलों में रहकर शिक्षा ग्रहण करते थे और ये क्रियाये पाठ से हटकर क्रियाये मानी जाती थी लेकिन आजकल इनको अतिरिक्त क्रियाये न मानकर पाठ्य सहगामी क्रियाये माना जाता है। स्कूलों में इसे पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग माना जाता है। आज इन क्रियाओं से सारा जगत परिचित है। पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग होने के कारण इनहे सहगामी/ सहपाठी क्रियाओं का नाम दिया गया है।

आज के प्रगतिशील युग में सभी शिक्षा संस्थाओं में अध्ययन– अध्ययापन के अतिरिक्त अनेक क्रियाये समय–सयम पर आयोजित की जाती है। जैसे व्यायाम, मॉनिर्ग ऐसम्बली, खेलकूद, नाटकमंचन, सुगम संगीत, भाषण, वाद विवाद, कवि सम्मेलन, कविता पाठ, कवि गोष्ठी अन्त्याक्षरी आदि। इन सबको पाठ्य सहगामी क्रियायें कहा जाता है। भाषा सीखने की प्रक्रिया को इन क्रियाओं द्वारा अत्यन्त प्रभावशाली तथा सरल बनाया जा सकता है। इन क्रियाओं में कुछ क्रियाओं ऐसी हैं जिन्हें साँस्कृतिक क्रियायें कहा जाता है जैसे संगीत, नाटक, कवि सम्मेलन, वाद–विवाद जैसी क्रियाये। चूंकि इन सबका सम्बंध भाषा से है इसलिए उन्हें सहित्यिक क्रियाये भी कहते है। इन गतिविधियों के सम्बध में माध्यमिक शिक्षा आयोग/सेकेण्ड्री एजुकेशन कमीशन ने कहा है–

''स्कूल केवल ऐसी औपचारिक शिक्षा का ही केन्द्र नहीं है जहां असीम ज्ञान को प्राप्त किया जाता है, अपितु ऐसी सजीव जाति है जो शिष्यों को प्रशिक्षित करके उन्हें सम्मान से जीवित रहने की शिक्षा देती है'' इस कथन में स्पष्ट होता है कि जीवन जीने की कला काफी महत्वपूर्ण है। उचित ढंग से शिक्षा प्राप्त करना ही सब कुछ नहीं है सामाजिक जीवन जीने और एक दूसरे की सहायाता करने से अपने स्वभाव के परिवर्तन का प्रशिक्षण नहीं मिलता अपितु उसकी पूर्ति सामाजिक जीवन के साथ पाठ्यक्रम गतिविधियों द्वारा ही सम्भव है। इसकी विधमानता स्कूलों में होना आवश्यक है।

संक्षेप में कह सकते हैं पाठ्य सहगामी क्रियायें ऐसी क्रियायें हैं जो छात्रों/बच्चों के कक्षा अध्ययन से सम्बन्धित हो, जिसमें छात्र भाग लेकर अपना शारीरिक, मानसिक, सामाजिक नैतिक विकास करते हैं – उन्हें पाठ्यक्रम सहगामी क्रियायें कहते हैं।

3.4 पाठ्य सहगामी क्रियाओं का महत्व :

पाठ्य सहगामी क्रियाओं का लाभ, महत्व या विशेषताओं अनेक हैं, लेकिन इनका शिक्षा विषयक लाभ/महत्व इतना अधिक है कि इसके बिना शिक्षा का ढांचा ही स्थापित नहीं हो सकता। इनके लाभ/इनका महत्व शिक्षण विद्वानों ने इस प्रकार वर्णित किया है :–

1. मानसिक विकास
2. सामाजिक
3. शैक्षणित
4. सामाजिक प्रशिक्षण और नागरिक भावना
5. नैतिक, आवश्यकताओं की पूर्ति
6. मनेरंजनात्मक महत्व
7. शारिरिक विकास
8. स्वाआत्मा अनुशासन का विकास
9. अवकाश का सदुपयोग
10. सौदर्य / रसात्मक महत्व
11. नेतृत्व के लिए अवसर
12. सांस्कृतिक महत्व।

1. **मानसिक विकासः** छात्रों का मानसिक स्वास्थ्य सही बना रहे और विकसित रहे, इसके लिए पाठ्य सहगामी क्रियाये महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इनसे भावानाओं मे उदातीकरण होता है। छात्रों मे शक्ति/ऊर्जा आती है, वे सही दिशा की ओर बढते हैं। विभिन्न क्रियाओ द्वारा उनकी भावनात्मक सन्तुष्टि होती है। वे बुरे आयोजनो से मुक्त रहते हैं। उनका मानसिक स्वास्थ्य बना रहता है। शुद्ध विचार पनपते हैं। अच्छे मानसिक स्वास्थ्य का सशक्त आधार है।

2. **सामाजिक महत्त्वः** व्यक्ति का समाज से घनिष्ठ सम्बन्ध है। सामाजिक शब्द से तात्पर्य दूसरे लोगों के साथ मधुर सम्बन्ध बनायें रखना। व्यक्ति परस्पर एक दूसरे के साथ मिलकर कार्य करता है। मिलकर कार्य करने की सद्भावना व्यक्ति को सही आचार–विचार, समझदारी, दूसरो के साथ कोमल/अच्छा व्यवहार करने के ढंग को सीखने के लिए विवश करती है। इन सबमें पाठ्य सहगामी क्रियाये छात्रों की सहायता करती है। छात्र व्यावहारिक रूप से यह सब ज्ञान प्राप्त करते हैं। ये क्रियायें उन्हे कई सामाजिक समस्याओं को दूर करने में सहायक बनाती हैं।

3. **अच्छे नागरिक गुणों का विकासः** पा० सहगामी क्रियाओं में भाग लेने से छात्र मे अच्छे नागरिक गुण विकसित होते हैं। वे कर्त्तव्यों, अधिकारो, उत्तरयायित्वो के महत्त्व को समझते है। उनमें नेतृत्व की भावना विकसित होती है। वे स्वयं को राष्ट्र के विकास में सहयोगी बनाते हैं।

4. **शैक्षषिक महत्वः** इन क्रियाओं द्वारा जो कक्षा के बाहर, छात्रों की रूचियों पर आधारित होती हैं, इनका प्रयोग किया जाता है। कक्षाओं में सैद्धान्तिक ज्ञान मिलता है और बाहर गतिविधियों द्वारा व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त होता है। इस प्रकार ये कक्षा शिक्षण का पूरक बनती हैं। जैसे–वाद–विवाद में भाग लेने से भाषा सीखते हैं और स्कूल पत्रिका में लेखन कौशल विकसित होता है।

5. **नैतिक महत्त्वः** नैतिक विकास की दृष्टि से ये क्रियायें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। इन क्रियाओं मे भाग लेने से छात्रों में, त्याग, प्रेम, ईमानदारी, सच्चाई, आत्मनियंत्रण, निष्पक्षता, सहयोग, सहानुभूति जैसे चारित्रिकगुण विकसित होते हैं। आज्ञाकारी रहने का अवसर मिलता है। अधिकारियों के प्रति अपने सिद्धान्तों का पालन करते हैं। ये क्रियायें छात्रों के लिए कसौटी बनती हैं। स्कूल पंचायत न्यायशील बनाने में सहायक बनती हैं। खेल मैदान में सच्चे खिलाड़ी के गुण अपनाने होते है। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक गतिविधि छात्रों के नैतिक विचारों और नैतिक स्तर को ऊँचा उठाती है।

6. **मनोरंजनात्मक महत्त्वः** इन गतियों द्वारा छात्रों का सही मनोरंजन किया जाता है। इनका आयोजन छात्रों की रूचियों के अनुसार किया जाता है। इन सहगामी क्रियाओं में काई जबरदस्ती या दबाव नही होता हैं। छात्र अपनी इच्छानुसार विभिन्न क्रियाओं में भाग लेकर अपना मनोरंजन करते हैं। ये क्रियाये कक्षा के वातावरणजनित थकान एंव नीरसता को समाप्त काके छात्रों को प्रसन्नता और ताज़गी से भर देती है। मनोरजंन का क्षेत्र इतना व्यापक है कि प्रत्येक स्थल पर इसका स्वागत होता है। किसी न किसी रू‍प मे चाहे कक्षा में, खेल के मैदान में, मंच पर इस मनोरजंन की प्रस्तावना की जाती है। इन क्रियाओं से भारी से भारी या बोझिल कार्य भी हल्का हो जाता है।

7. **शारीरिक विकासः** पाठ्य–सहगामी गतिविधियाँ व्यक्ति/छात्रं के शारीरिक विकास में वृद्धि करती है। कुछ क्रियायें शारीरिक होती हैं जिनका परिपालन करने से शरीर पर सीधा प्रभाव पड़ता है। शरीर चुस्त और उर्जा से भरपूर हो जाता है।

8. **अवकाश का सदुपयोगः** पाठ्य सहगामी क्रियाओं से छात्रों की अनेक रूचियाँ विकसित होती है जिनकी पूर्णता अवकाश के समय होती है। समय मिलने पर छात्र उन किंयाओं में संलग्न या व्यस्त हो जाते है और उनके समय (अवकाश) का भी उचित प्रयोग होता है। उनका मन इधर उधर नही भटकता है।

9. **स्व–अनुशासन का विकासः** इन गतिविधियों में भाग लेने से छात्र स्वयं पर अनुशासन करना सीखते हैं। छात्र शरारते करने से पीछे हटते हैं। इन गतिविधियों के बिना विद्यालय एक ऐसा स्थल है जहाँ छात्रों की शैतानी क्रिया कलापों को पोषण मिलता है। क्रिया सम्पन्न विद्यालय अनुशासित विद्यालय कहलाते हैं। इस अनुशासन के साथ छात्र गति विधियों के संचालन के लिए स्वयं कुछ नियम बनाते हैं, उनका पालन करते है जो उनका दायित्व बन जाता है और स्व अनुशासन की ओर अग्रसर होते हैं।

10. **नेतृत्व के लिए अवसरः** पाठ्य सहगामी क्रियायें छात्राों को इस गुण के लिए पर्याप्त अवसर देती है। क्रिया कोई भी हो उसका गठन किसी कुशल अगुआ नेता के अधीनता (देख–रेख/निगरानी) में किया जाता है। जितनी अधिक क्रियायें होगी उतने अधिक छात्र नेताओं की संख्या विकसित होगी। ये छात्र नेता कार्य की सम्पन्नता कुशल अध्यापक के मार्ग दर्शन के अनुसार करते है। कभी–कभी परिस्थितिवश उन्हें स्वतंत्र रूप से निर्णय लेना पड़ता है। इस तरह उनमें स्वतंत्र चिंतन, धैर्य, सहनशीलता, आत्मविश्वास, साहस जैसे गुणों का विकास होता है।

11. **रसात्मक (सौन्दर्यानुभूति) महत्त्वः** सुन्दरता और रसात्मकता के लिए यह सही है कि सौन्दर्यपूर्ण वस्तु आनन्दायी होती है, सुखदायी होती है। छात्रों को सुंदरता की अनुभूति कराना, भावपूर्ण विचारों से अनुभूत करना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। इसके बिना छात्र मंद बुद्धि प्राणी बनके रह जाता है। विद्यालय को उनके सुविधाओं का प्रबन्ध करना चाहिए जिनसे छात्राों में रसानुभूति का विकास हो। ड्राइंग, चित्रकला, मूर्तिकला, चॉक मिट्टी के खिलौने बनाना, चार्ट बनाना, कार्ड बोर्ड का निर्माण, मॉडल बनाने के लिए उत्साहित करना ताकि उनमें रसानुभूति विकसित हो। इससे जुड़ी प्रदर्शनी करवाना सही सोपान है।

12. **सांस्कृतिक महत्वः** पाठ्य सहगामी गतिविधियों का सांस्कृतिक महत्त्व भी है। इनके द्वारा सांस्कृतिक परम्पराओं को समझने में सुविधा होती है। नाटकीयता, नुक्कडशो, लोक संगीत, लोक नृत्य, धार्मिक उत्सव आदि का आयोजन करने से संस्कृति को समझने में छात्रों को सुविधा होती है। इस तरह इन गतिविधियों से सांस्कशतिक महत्त्व की भावना जागृत होती है।

निष्कर्ष : रूप में कह सकते है कि कोई भी शिक्षण पद्धति सहसागी क्रियाओं के बिना अपूर्ण है। सहपाठ्य क्रियाओं के बिना स्कूल केवल शिक्षा की दुकान बना जाते है। इन गतिविधियों को उचित मान्यता देनी चाहिए। ये स्कूल का अभिन्न अंग है। छात्रों के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास होता है, साहित्य का सम्पूर्ण विकास होता है, साहित्यिक कार्य की पूर्ति होती है। शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य पूर्ण होता है। अतः इनका आयोजन करना अनिवार्य है।

3.5 साहित्यिक गोष्ठी – अर्थ एव विशेषता

गतिविधियों का वर्गीकरण इनता अधिक है कि उनको किसी निश्चित सीमा क्रम में परिगणित नहीं किया जा सकता, फिर भी विद्यालयों में निहित उपलब्ध साधनों और विद्यार्थियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर जिन क्रिया कलापों की व्यवस्था की जाती है उनका विवरण इस प्रकार है।

1. साहित्यिक गतिविधियां
2. नाटकीय गतिविधियां
3. विद्यालय पत्रिका इन गतिविधियों के आयोजन से छात्रों की रूचियों में वृद्धि होती है, वे समय का सदुपयोग करते है, उनके नैतिक व्यवहार और चरित्र में विकास होता है, सामाजिक चरित्र चित्रण में विकास होता है, सामाजिक विकास में वृद्धि होती है और एक सहीं अनुशासन स्थापित (निर्मित) होता है।

1. **साहित्यिक क्लब** : सहगामी क्रियाओं की दृष्टि से विद्यालय में साहित्यिक परिषद का गठन करना अनिवार्य है। इसी परिषद द्वारा भाषा सम्बन्धी भिन्न–भिन्न क्रियाये आयोजित की जाती है। इन क्रियाओ को सही ढंग से परिचालित करने में आवश्यक उपकरण संगठित करने में परिषद सहायता करता है। जिसके लिए विद्यालय का प्रधानचार्य उत्तरदायाी होता है। साहित्यिक परिषद् से छात्रों की सृजानत्मक शक्तियों का विकास होता है। मौखिक कहानी, निबंध, कविता, पाठ जैसी क्रियाये इसी परिषद (क्लब) द्वारा आयोजित की जाती हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि साहित्यिक परिषद द्वारा

आयोजित क्रियाओं से भाषा शिक्षण के उद्देश्य प्राप्त होने में सहायत मिलती है। इस परिषद में निम्नलिखित गतिविधियां आयोजित का जाती है :–

1. कवि गोष्ठी
2. कवि सम्मेलन
3. अन्त्याक्षरी
4. लेख प्रतियोगिता
5. कविता गायन
6. कहानी प्रतियोगिता
7. गद्य का शुद्ध वाचन।

इन उपरिलिखित विभिन्न गतिविधियों के आयोजन से छात्र कविता पाठ करने में सक्षम हो जाते है। वार्तालाप में विकास होता है। सृजनात्मकता आ जाती है। गद्य का शुद्ध वाचन कर पाते हैं। बालकों को टोलियां समूह में बांटकर अंताक्षरी प्रतियोगिता करवाई जाती है। कवि सम्मेलन में भाग लेकर अपनी रचनाओं को पस्तुत करते हैं। कल्पना शक्ति का विकास होता है। एक विषय पर लेख लिखने का निर्देशन देकर छात्रों को लेखन कौशल में निपुण एवं योग्य बना सकते है। कहानी प्रतियोगिता द्वारा कहानी सुनकर उसको अपने शब्दों में व्यक्त करने की सक्षमता छात्रों में विकसित हो जाती है। कल्पना शक्ति में वृद्धि होती है इस प्रकार कह सकते है। कि साहित्यिक गतिविधियों से छात्रों की अभिव्यक्ति प्रणाली विकसित होती है, साहित्य के प्रति रूचि बढ़ती है, योजना का व्यावहारिक रूप देने, उसका मुल्यांकन करने में यह परिषद् सहायक बनती है। इस प्रकार यह साहित्यिक क्लब/ परिषद् योजनाएं बनाने का महत्व रखते है, उनको यथार्थता का रूप देते है और परिणाम भी परखते है। यदि कही दोष या अभाव दृष्टिगत हो तो उसमें सुधार लाने को प्रयास करते हैं।

संक्षेप में यह कर सकते हैं कि भाषा ज्ञान एवं व्यक्तित्व विकास में साहित्यिक क्लब का अपना महत्व है। प्रत्येक स्कूल में इनका संगठन एंव प्रयोग होना अनिवार्य है। इन परिषदों का निर्माण प्रत्येक शिक्षा संस्था में होना चाहिए। इस तरह छात्रों और अध्यापकों की शक्तियों का उचित उपयोग हो सकता है।

3.6 विद्यालय पत्रिका – अर्थ/महत्त्व

विद्यालय पत्रिका एक ऐसा माध्यम है जिसमें पूरे सत्र में होने वाली गतिविधियों का विवरण लेख जोखा होता है। यह पत्रिका छात्रों के अच्छे गुणों की परिचायक है। पत्रिका छात्रों को विचार अभिव्यक्त करने की प्रेरणा देती है जो उनको ज्ञान में वृद्धि की प्रेरणा देती है, वे अध्ययन करने की ओर अधिक उत्सुक एवं उत्साहित रहते हैं। विद्यालय पत्रिकायें चार प्रकार की होती है :–

1. वैयक्ति पत्रिका
2. भित्ति पत्रिका
3. कक्षा पत्रिका
4. विद्यालय पत्रिका (वार्षिक पत्रिका)

मुख्य रूप से विद्यालय में दो पत्रिकाओं का महत्त्व/उपयोगिता आवश्यक माना जाता है।

1. **भिति पत्रिका**: प्रत्येक शिक्षा संस्था या स्कूल के लिए भिति – पत्रिका का अपना उचित और महत्वपूर्ण स्थान है। इस पत्रिका से छात्रों को अभ्यास के लिए पर्याप्त अवसर मिलता है। इस पत्रिका का महत्व छोटे छोट लेख लिखने, छोटी–छोटी कविताओं को लिखने, व्यंग्य चित्र बनाने, कार्टून बनाने, अच्छे विचार प्रस्तुत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस पत्रिका का उपयोग छात्र वर्ग, विद्यालय व्यवस्था के विरूद्ध शिकायत लिखने के लिए सुधारात्मक सुझाव प्रदान करने के रूप में भी देख जाता

है। इन सबका प्रदर्शन करने से पूर्व शिक्षक पर्यवेक्षक द्वारा जांच/परीक्षण किया जाता है जो अनिवार्य है। भिति चित्र में जो भी प्रदर्शित होता है, उसका प्रदर्शन एक या दो दिन तक रहना चाहिए। इस बात का ध्यान रखना अनिवार्य है कि ये किसी के लिए अपमानजमक न हो। सलाह के लिए एक वाक्स रखना अपेक्षित है ताकि शिकायत पत्र उसी में डाला जा सके। भिती पत्रिका का महत्व कागज़ के तख्तों पर अधिक सुन्दर लगता है ताकि दीवारों पर प्रदर्शित की जाए। अंत में वार्षिक पत्रिका में स्थान देना चाहिए।

2. **विद्यालय पत्रिकाः** इन पत्रिकाओं को प्रकाशित करने का उद्देश्य छात्रों को योग्य लेखक बनान होता है। छात्र इस पत्रिका के लिए सहित्यिक निबन्ध, कहानी, एकॉकी, प्रहसन, भाषण आदि रचनाएं रचने हैं। इन रचनाओं से उनमें आत्मप्रकाशन की भावना और आत्मभिव्यक्ति को प्रोत्साहन मिलता है। छात्र अपनी रूचि के अनुसार रचनायें रचते हैं। इस पत्रिका का महत्व इतन विस्तृत है कि छात्रों में सक्रित प्रयास करने की प्रवृति जागृत करते हैं और वे स्वतः इसकी ओर उन्मुख हो जाते है। विद्यालय पत्रिका/वार्षिक पत्रिका में प्रकाशित होने वाले विषय की सूची में विविधता और मौलिकता होनी चाहिए। इसमें लघु कहानिया, कवितायें, रेखचित्र, महानपुरूषों के उच्च विचार होने चाहिए। रचनाओं को प्रकाशित करने के लिए अभिवावकों/अध्यापकों की सहायता लेनी चाहिए। यह पत्रिका छात्रों को स्वाध्याय, मनन, चिंतन, विवेचन, विचार–विमर्श करने की ओर प्रवृत करती है और वे रचना कार्य में व्यस्त हो जाते हैं। अपने विषय एवं रूचि से सम्बन्धित विभिन्न पुस्तकों का समाचार पत्रों का अध्ययन करते हैं, इनका/उनका शब्द भण्डार विकसित होता है, भाषा में निखार आता है। विभिन्न लेखकों और कवियों की लेखन कला, शैली से परिचय हो जाता है। इस प्रयास के परिणामस्वरूप छात्र अपनी स्वतंत्र शैली बनाकर अपने भावों की अभिव्यक्ति करते हैं। इस प्रकार विद्यालय पत्रिका का महत्त्व उपयोगिता संक्षिप्त रूप में इस प्रकार स्पष्ट होती है। कि 1. छात्रों को लिखित अभिव्यक्ति के लिए अवसर मिलता है। 2. साहित्यिक रूचियों एवं स्वाध्याय को विकसित करने की प्रेरणा मिलती है। 3. भिन्न–भिन्न विषयों पर लिखते है। 4. सहयोग और एकात्मकता की भावना विकसित होती है। 5. अवकाश का सही लाभ उठाने की प्रेरणा मिलती है। 6. स्कूल के प्रति निष्ठा, आदर एवं उच्च भाव जागृत होते है। 7. छात्रों की प्रतिमा को पनपने, विस्तश्त होने का अवसर मिलता है। 8. छात्र भविष्य के साहित्यकार बनने का सपना सच होते देखते हैं। 9. निरन्तर लिखने से लेखन कला निखरती है। 10. अपनी उपलब्धियों पर गर्व होता है। 11. समाज के लिए उपयोगी कार्य करने के लिए प्रेरित होते है। 12. छात्रों के सामान्य ज्ञान में वृद्धि होती है। 13. छात्र भविष्य के वरिष्ठ नागरिक बनते है। 14. स्कूल और अभिभावकों के मध्य खाई दरू हो जाती है। 15. श्रेष्ठ कार्यक्रमों एवं क्रियाओं का प्रचार करना इन क्रियाओं से बच्चे कमाना सीखते हैं।

3.7 नाटकीकरण/नाटकीयता (Dramatization)

नाटकीयता के प्रयाप्त गुण है। एक मनोवैज्ञानिक कथन है कि अनुकरण की भावना प्रधान होने के कारण नाटक द्वारा आंतरिक भावनाओं को अभिव्यक्त करने का अवसर मिलता है। नाटक के दो रूप है 1. श्रव्य 2. दृश्य – दोनों में प्रभावशीलता है। नाटक का महत्व लोकरंजन और लोक हित (कल्याण) के रूप में अधिक रहता है। छात्रों में अनुकरण की भावना सदैव रहती है। यही अनुकरण– नाटकीयता कहलाता है। छात्र विभिन्न प्रकार के अभिनय करके अपने अंतर (मनोभावना) को स्पष्ट करते है, यह आत्माभिव्यक्ति उन्हें सतोष, आनंद

और आत्मिक सुख प्रदान करती है। नाटक द्वारा बोलना, उच्चारण, शब्द का ओराह अवरोह का ज्ञान गहराई से होता है। नाटक में भाग लेकर छात्रों को साज–सज्जा, गणित, कला, अभिन्नय पोषाक आदि का ज्ञान हो जाता है। क्योंकि नाटकीयता में इसके गुणों को आत्मसात किए बिना वास्तविकता दृष्टिगत नहीं होती है। नाटक का उद्देश्य एवं महत्व जीवन के विभिन्न अनुभवों, रूपों से अवगत करना होता है जो तभी सम्भव है जब छात्र नाटक को स्वयं में रूपायित करते है। इससे दर्शकों को आनन्दं मिलता है और यही आनंद प्राप्ति इसका मुख्य महत्व एवं उद्देश्य है। नाटक रूपायित करने से छात्रों को इतिहास, भूगोल, सामाजिक रीति–रिवाज, त्योहार, सामाजिक आचरण आदि का व्यापक ज्ञान प्राप्त होता है। समाकालीनता – समसामयिकता का सही रूप नाटकीयता से ज्ञान होता है। नाटकीयता कल्पना शक्ति की जननी है। नाटक की संवादता उसकी आत्मा मानी जाती है। जीवन में कब कहा कैसे बोलना है –इसका ज्ञान नाटकीयता में निहित है। भविभंगिमा, अंग सचांलन के महत्व से नाटक अधिक निखरता है।

नाटक का महत्व उसके नेपथ्य में निहित संगीत पर आधारित है। संगीत की धुन से उसकी आत्मा स्पष्ट हो जाती है।

नाटक में जितना रिहसल (अभ्यास) होगा उतनी परिपक्वता उसमें झलकती है। यह छात्रों को नाटक में भाग लेने हेतु प्रोत्साहित करता है। अनेक प्रकार के अभिनय करने से छात्रों के स्वास्थ्य में वृद्धि होती है।

संक्षेप में नाटकीय क्रियाओ से छात्रो में आत्मविश्वास, का विकास होता है। वार्तालाप करने का ढंग आता है। भाषा में शुद्धता आती है। समाज के शिष्टाचारों का ज्ञान भी हो जाता है। अनेक लेखन शैली से परिचित हो जाते हैं।

3.8 निष्कर्ष

सांराश रूप से कह सकते हैं कि सहगामी गति विधियों का गठन अनुभवी अध्यापक की निगरानी में होना चाहिए। प्रत्येक क्रिया का अभिलेख तैयार करना अपेक्षित है। विद्यालय का वातावरण गतिविधियों के लिए प्रेरणादायी होना चाहिए। सदस्यता छात्रों तक सीमित रहनी चाहिए। समय सारणी में स्थान देना चाहिए। गतिविधि का चयन छात्रों की इच्छानुसार होना चाहिए। एक ही समय समस्त गतिविधियों आयोजित नहीं करनी चाहिए ।

3.9 आत्मजांच और परीक्षण :

1. पाठ्य सहायक गतिविधियों के बिना कोई भी शिक्षा वृद्धति पूर्ण नहीं। व्याख्या कीजिए।
2. पाठ्य सहगामी गतिविधियों की उद्देश्यात्मकाता निर्धारति करें।
3. पाठ्य सहगामी क्रियाओं (गतिविधियो) से क्या तात्पर्य हैं ? उदहारण देरक समझाएं।
4. छात्रों की भाषा विकास हेतु कौन – कौन सी पाठ्य सहगामी गतिविध का आयोजन अनिवार्य है।
5. भिति पत्रिका का महत्व स्पष्ट करें।

1. नाटकीयता पाठ्य सहगामी क्रिया का प्रमुख अंग है – स्पष्ट करके इसके महत्व पर विवेचना करें।

2. विद्यालय पत्रिका किसी भी विद्यालय के लिए क्यों आवश्यक है? इसका महत्व प्रतिपदित करें।

ख. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. पाठ्य सहगामी क्रियाओं को पहले समय में क्या माना जाता था?
2. पाठ्य सहगामी क्रियाओं को कोई एक उपयोगिता लिखिए।
3. मौखिक भाषा के अन्तर्गत कौनसी पाठ्य सहगामी क्रियायें आती है।
4. भिति पत्रिका क्या होती है?
5. कक्षा स्तर पर होने वाली क्रियाओं को किसमें उल्लेखित करना चाहिए।

ग. रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न :

(दृश्य–श्रव्य, मौखिक अभिव्यक्ति, नियोजित भाषा कौशल, क्रियाओं)

1. स्कूल के लिए सर्वप्रथम .... को अपनाना उचित है।
2. किसी भी योजना को सही ढंग से .... अनिवार्य है।
3. वाद– विवाद गतिविधि का मुख्य उद्देश्य .... का विकास होना माना जाता है।
4. भाषायी योग्यताओं से .... का विकास होता है।
5. नाटक .... विद्या के अन्तर्गत आता है।

3.10 सहायक ग्रन्थ सूची –

1. हिन्दी शिक्षण विधियांः एम.एम. भाटिया
2. हिन्दी शिक्षण : डा. के.सी. जैन
3. हिन्दी शिक्षणः डा. सुरेन्द्र सिंह कादियान

....

शिक्षण पद्धति

4.1 भूमिका

4.2 उद्देश्य

4.3 अर्थ

4.4 भेद

4.5 व्याख्या विधि

4.6 प्रश्नोत्तर विधि

4.7 प्रोजेक्ट विधि

4.8 विचार–विमर्श विधि

4.9 आगमन–निगमन विधि – इनका अर्थ एवं महत्त्व

4.10 निष्कर्ष

4.11 आत्मजांच और परीक्षण

4.12 सहायक ग्रंथ सूची

4.1 भूमिका

शिक्षण एक सामाजिक प्रक्रिया है इसलिए – शिक्षण की मौलिक अवधारणा यह है कि शिक्षक को अपने विषय का ज्ञान होना या उस पर अधिकार होना ही पर्याप्त नहीं है अपितु शिक्षण का सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों पक्षों को बोध होना अनिवार्य है। विषय को प्रेषणीय बनाना एक उत्तरदायित्व वाला कार्य है जिसको निर्वाहित करने में अध्यापक का शिक्षण संबंधी तकनीकियाँ एवं ज्ञान होना अनिवार्य है। शिक्षण भी कलाकार के समान एक नैसर्गिक प्रतिभा है। यह प्रतिभा सीमित शिक्षकों में ही होती हैं। आज देश को निपुण और प्रतिभाशाली शिक्षकों को आवश्यकता है ताकि शिक्षण का सही मायन हो सके।

प्रतिभाशाली शिक्षण के लिए शिक्षकों को प्रशिक्षण द्वारा योग्य शिक्षक तैयार किया जाता है। उन्हें शिक्षण पद्धतियों का अचित ज्ञान। प्रशिक्षण देकर उनका प्रयोग करने में निपुण बनाया जाता है।

शिक्षण का क्षेत्र अधिक विशद और व्यापक है। इस दृष्टि से शिक्षण के दो पक्ष माने जाते हैं। 1. भाषा शिक्षण 2. साहित्यिक शिक्षण। इसलिए साहित्यिक शिक्षण भाषिक तत्त्वों के शिक्षण प्रदान करते समय अध यापक अनेक पद्धतियों को अपनाकर अपना अध्यापन सफल और प्रभावशाली बनाता हैं।

4.2 उद्देश्य

1. शिक्षण पद्धति में अध्यापन करते समय आनन्द और मनोरंजकता की अनुभूति हो।
2. शिक्षण पद्धति सुरमणीय, सुरोचक होनी चाहिए। प्रत्येक विषय हास्यप्रियता और विनोद के साथ पढ़ाया, समझाया और लिखवाया जाये।
3. शिक्षण पद्धति में मनोयोग्यता होना अनिवार्य है।
4. शिक्षण पद्धति जितनी रोचक और रमणीय होगी, विद्यार्थी उतनी तन्मयता (ध्यानपूर्वक) के साथ मनन और अभ्यास करेंगे।
5. शिक्षण विधि कोई भी हो उसमें प्रेरणा, योग्य निर्देशन तथा आवश्यक सहायता के द्वारा छात्रों को आत्मनिर्भर तथा कुशल बनाने का उद्देश्य निहित हो।
6. शिक्षण पद्धति का उद्देश्य छात्रों को यह बतलाना या समझाना कि पाठ का अध्ययन कैसे करना है।
7. पाठ का शीर्षक–तथ्यों से संबंधित होना चाहिए।
8. छात्रों को भिन्न–भिन्न शिक्षण पद्धतियों से अवगत कराना।
9. शिक्षण पद्धतियों का उद्देश्य है कि छात्र घर में पाठ पढ़े, रूपरेखा (पाठ को) तैयार करे उसको कक्षा में श्यामपट पर लिखे ताकि कक्षा में बैठे अन्य छात्र एक–एक अंश की आलोचना करके अपने सुझाव दे।
10. शिक्षण–पद्धतियों द्वारा छात्रों में अभिनयात्मक प्रवृति को उत्प्रेरित करना, छात्रों की रचनात्मक एवं सौन्दर्यानुभूति भावनाओं को उजागर यो विकसित करना।
11. शिक्षण पद्धति में मौखिक कार्य द्वारा छात्रों में बोलने का कौशल विकिसित करना। छात्रों को सूक्ष्म अध्यापन प्रणाली से अवगत कराना ताकि अल्प समय में अल्प विषय का अध्ययन / अध्यापन कैसे होता है।

4.3 अर्थ :–

कार्य का नियोजन करना, नियोजन को वास्तविकता प्रयत्न करना, उसके परिणाम का निरीक्षण करना यह सब शिक्षण पद्धति के अन्तर्गत आता है। शिक्षण पद्धति में कार्य–कारण का घनिष्ट संबंध माना जाता है।

प्राचीन युग में भारतीय शिक्षण पद्धति में मनोरंजकता और रोचकता की ओर अधिक ध्यान दिया जाता था, जिसका विश्लेषण अथर्वेद में मिलता है। अथर्वेद में अधोलिखित कथन से इस कथन की पुष्टि या स्पष्टीकरण हो जाता हैः–

''वसोष्पते निरयम मय्येवास्तु मयिश्रुतम'' इस कथन की व्याख्या इस प्रकार की गई हैः–

'सातंवलेकर– गुरू शिष्य को ऐसा पढ़ाये कि शिष्य आनन्दमग्न होकर पढ़ता जाये। इस शब्द के द्वारा वेद ने अध्ययन की मनोरंजक पद्धति प्रकट की है।

'वाचस्पति' के अनुसार शिक्षा पद्धति तथा उपदेश शैली सुरमणीय और सुरोचक होनी चाहिए। विषय कोई भी हो उसमें हास्यप्रियता और विनोदात्मकता होनी चाहिए। रमणीयता के साथ सीखने–सिखाने में पूर्ण मनोयोग होना अपेक्षित है। अध्यापक अपना शिक्षण जितने सुन्दर, आकर्ष, रमणीय एवं रोचक ढंग से प्रस्तुत करेगा, विद्यार्थी उतनी ही रोचकता तथा तन्मयता के साथ श्रवण, मनन और अभ्यास करेगा या करेंगे।

वर्तमान शिक्षण प्रणाली विद्यार्थी केन्द्रित प्रणाली है जिसका समर्थन महान शिक्षा विद्वानों, दार्शनिकों ने किया है। आधुनिक युग में रूसो, फ्रोबेल, पेस्तालॉजी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भी शिक्षा के इस चिन्तन पर बल दिया है कि शिक्षण पद्धति छात्रों की इच्छाओं रोचकताओं को ध्यान में रखकर प्रदान की जानी चाहिए। शिक्षण पद्धति छात्रों की आशाओं और आवश्यकताओं को पूर्ण करने में समर्थ हो।

विज्ञान ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में क्रान्ति मचा दी है, परिमाणस्वरूप शिक्षा भी इसके प्रभाव से प्रभावित हुई जिसके कारण प्रयोगात्मक और मनोवैज्ञानिक खोजों के आधार पर शिक्षा और शिक्षण विधियों को एक नया रूप/आयाम मिला। वर्तमान शिक्षण प्रणाली में अध्यापक शिक्षा का एक अंग मात्र रह गया है। शिक्षा न तो शिक्षक केन्द्रित है न विषय केन्द्रित है। इसका केन्द्र केवल छात्र/बालक है।

'जान डेवी' के अनुसार, ''शिक्षा जीवन के अनुभवों के माध्यम से जीवन की तैयारी है।'' यह उपरिलिखित कथन वर्तमान शिक्षण पद्धति पर पूर्णतः सत्य उतरता है।

वर्तमान शिक्षण में केवल पुस्तक कंठस्थ कराना, सूत्रों को याद कराना या पाठ्य सामग्री को रटना शिक्षा नहीं माना जाता, अपितु शिक्षा प्रदान करते समय शिक्षक को यह देखना अनिवार्य है कि उसका दिया/पढ़ाया गया ज्ञान छात्रों के जीवन के लिए कितना उपयोगी है, बच्चों के अनुकूल है या नहीं। शिक्षण चूँकि एक सामाजिक प्रक्रिया है, इसलिए इसे किसी विशेष पद्धति में बाँधना उचित नहीं है। सामाजिक तथ्य तथा मानवीय क्रियायें परिवर्तनशील होती है और शिक्षा इस परिवर्तन को नियंत्रित करने का एक कारक है, अतः शिक्षण को अनेक घटक एवं परिस्थितियाँ प्रभावित करती हैं जैसे, परिवार, राष्ट्र का स्वरूप, सामाजिक दर्शन, मूल्य, संस्कशति, मनोवैज्ञानिकता आदि।

शिक्षा की इस अवधारणा तथा मनोवैज्ञानिक तथ्यों को ध्यान में रखते हुए पिछले (पूर्व) 150 वर्षों में शिक्षा के क्षेत्र में अनेक अन्वेषणों और प्रयोगों के आधार पर कुछ शिक्षण प्रणालियां निर्धारित हुई या जन्मी यही प्रणालियां नवीन शिक्षण–शिक्षा पद्धतियां के नाम से जानी जाती है।

4.4 भेद :– शिक्षण पद्धतियां शिक्षा जगत में अपनी महत्ता या उपयोगिता के बल पर उच्च स्थान बनाये हैं उनका वर्गीकरण इस प्रकार है।

1. प्रत्यक्ष विधि
2. खेल विधि
3. अनुवाद विधि
4. स्ंरचना विधि
5. प्रोजक्ट विधि/प्रयोजना विधि

6. व्याख्या विधि

7. बलोधान विधि

8. मान्टेसरी विधि

9. डाल्टन विधि

10. आगमन–निगमन विधि

11. प्रशोत्तर विधि

12. विचार–विमर्श विधि

भाषा शिक्षण के क्षेत्र में इन नवीन शिक्षण पद्धतियों की उपयोगिता सर्वविदित है। लेकिन इन विधियों को शिक्षण में किस तरह अपनाया जाये – यह विचारनीय तथ्य है। आज की शिक्षा क्रियाशील, वास्तविक जीवन से संबंधित, उपयोगी पाठ्यक्रम तथा मनोवैज्ञानिक आधार जैसे सिद्धान्तों पर आधाररित है। निःसंदेह ये विधियां पारस्परिक भिन्नता और उपयोगिता रखती है फिर भी कहीं न कहीं समानता अवश्य मिलती है। हिन्दी भाषा शिक्षण विस्तृत है जिसमें पूरा साहित्य निहित है। साहित्य में अनेक विधायें हैं। इन विधाओं की प्रकृति तथा पाठ्यवस्तु में भिन्नता होती है। यही भिन्नता उद्देश्यों में भी परिलक्षित हो जाती हैं। इसलिए साहित्य शिक्षण में गद्य, पद्य, नाटक, कहानी, एकांकी, पत्र लेखन, निबंध शिक्षण के लिए प्राथमिक, पूर्वमाध्यमिक माध्यमिक, उच्च माध्यमिक, स्नातक तथा स्नातकोतर स्तरों पर शिक्षण विधियों का रूप बदलता रहता है। पाठ्य–वस्तु निःसंदेह एक है। परंतु विभिन्न स्तरों पर इसे पढ़ाने के लिए शिक्षण विधि बदल जाती है। अतः साहित्य की विद्या और शिक्षण स्तर के अनुसार शिक्षण विधियों का चयन करना अपेक्षित है।

साहित्य विधाओं के अनुसार शिक्षण विधियां इस प्रकार हैंः–

4.4.2 'कविता–शिक्षण/काव्य शिक्षण की विधियां'

1. गीत या अभिनय विधि
2. नाट्य शिक्षण विधि
3. आदर्शकथन/अर्थ–बोध कथन विधि
4. खण्डान्वय (प्रश्नोत्तर) विधि
5. व्याख्यान विधि
6. तुलनात्म विधि
7. समीक्षा (व्यास) विधि

4.4.3 गद्य–शिक्षण विधियां

1. उद्बोधन–विधि
2. प्रवचन विधि

3. रंगमंच अभिनय विधि

4. व्याख्या–विधि

5. प्रश्नोत्तर विधि

4.4.4 'कहानी शिक्षण' में 'कहानी–शिक्षण विधि' का परिपालन/अनुसरण किया जाता है।

4.4.5 नाटक–शिक्षण विधियां : इस विधि में अभिनय स्वयं एक शिक्षण विधि है। इस विद्या की विधियां इस प्रकार हैं:–

1. आदर्श–शिक्षण विधि
2. कक्षा–अभिनय विधि
3. व्याख्या विधि
4. श्रंगमंच अभिनय विधि
5. स्मवाय/संयुक्त विधि
6. समीक्षा विधि

4.4.6 उनन्यास शिक्षण विधियां:–

1. समीक्षा विधि
2. कहानी–विधि
3. व्याख्या विधि
4. अभिनय विधि

इस प्रकार साहित्य की विभिन्न विधियों का उपयोगे किया जाता है। साहित्य की विधायें ही शिक्षण विधियां हैं जैसे:–

1. गतिविधि
2. अभिनय विधि
3. कहानी विधि
4. समीक्षा विधि आदि का उपयोग किया जाता है। 'कहानी–विधि प्राथमिक तथा पूर्व माध्यकिम स्तर पर प्रभावशाली होती हैं।

4.5 निम्नलिखित विधियां :–

व्याख्या विधि :– व्याख्या विधि अर्थ कथन विधि का विकसित रूप कहलाती है, इस विधि के अनुसार शिक्षक गद्यांशों का मौखिक अध्ययन/पठन करता है। गद्यांश के कविन/नवीन शब्दों का अर्थ व्याख्यायित

करके पूरे गद्यांश का सरल अर्थ बताता है। गद्यांश में आये भावों की गहन व्याख्या करता है। इस विधि को स्पष्टीकरण विधि भी कहते हैं। इस शिक्षण विधि की अनेक प्रविधियां इस प्रकार हैं :–

1. व्याख्या द्वारा स्पष्टीकरण।
2. उपसर्ग द्वारा स्पष्टीकरण।
3. सन्धि विच्छेद द्वारा स्पष्टीकरण।
4. प्रश्नों द्वारा स्पष्टीकरण करना।
5. घटना द्वारा स्पष्ट करना।
6. ऐतिहासिक प्रसग द्वारा स्पष्ट करना।
7. समास विग्रह द्वारा समझाना या व्याख्या देना।
8. प्रत्यय द्वारा समझाना।
9. पद–परिचय द्वारा स्पष्ट करना।
10. दृश्ययन्त का प्रयोग करके व्याख्या करना।
11. कोई प्रासंगिक या किसी अन्तर्कथा द्वारा स्पष्टीकरण करना।
12. पर्यायवाची और विलोम शब्दों का प्रयोग करके स्पष्टीकरण करना।

इस प्रकार 'व्याख्या विधि' का प्रयोग इन प्रविधियों को अपनाने से सफल बनाया जाता है। छात्रों को जागृत किया जाता है। भाव स्पष्टता के लिए किसी भी प्रविधि को अपनाकर किया जाता है। शब्द शक्ति का प्रयोग करके व्याख्या की विस्तारता समझाई जाती है। पाठ में निहित प्रसंगों को समझाना व्याख्या विधि कहलाता है। भावों को स्पष्ट करने के विस्तृत विवरण/विवेचन को व्याख्या विधि कहते हैं। व्याख्या विधि में दार्शनिकमत का स्पष्टीकरण करना अपेक्षित है। इस प्रकार इस विधि द्वारा लेखक और छात्र के मध्य रागात्मक संबंध स्थापित करने में अध्यापक सफल हो जाता है। व्याख्या विधि के लिए पाठ्य वस्तु का गहन ज्ञान एवं अनुभव होना अनिवार्य है। उदाहरण स्वरूप, ''करमगति टारे नाही टरे''कृ।

इस पंक्ति की व्याख्या केवल शब्दार्थ कथन से ही स्पष्ट नहीं हो सकती अपितु अध्यापक को इसके लिए हरिश्चन्द्र, सीता–राम, रावण वध आदि से जुड़ी गौण कथायें वर्णित करनी पड़ती हैं, तब पंक्ति की व्याख्या या स्पष्टता संभव है। इस विधि का प्रयोग अधिकांशता उच्च कक्षाओं में किया जाता है। यह विधि बौद्धिक विकास और छात्रों की ग्राह्य–शक्ति पर निर्भर करती है। इस विधि में अध्यापक व्याख्या का प्रयोग करते समय छात्र की सहभागिता अवश्य अपना सकते हैं।

व्याख्या विधि के प्रकार :–

1. व्यास–विधि   2. तुलना विधि   3. समीक्षा विधि

1. **व्यास विधिः–** यह शिक्षण विधि उच्च कक्षाओं के लिए उपयुक्त विधि है। इसमें कथावाचन की भांति अनेक प्रसंग, संदर्भ, उदाहरण देकर व्याख्या की जाती है। इसलिए इसे व्यास–विधि कहते हैं। इसमें भाषा एवं भाव की दृष्टि से व्यापक अध्ययन हो जाता है। इसमें अन्य भाषाओं के साहित्य का उपयोग होता है। यह विधि कविता शिक्षण में अधिक महत्त्व रखती है क्योंकि उसमें एक–एक शब्द के विशिष्ट भाव को विस्तार से समझाया जाता है। इसमें शिक्षक का उत्तरदायित्व अधिक रहता है और छात्र श्रोता बनकर व्याख्या सुनते और समझते हैं। इस विधि में दोष यह है कि अध्ययन शिक्षक केन्द्रित बनकर रह जाता है, छात्र सक्रियता नहीं रहती।

2. **तुलना विधि :–** इसके द्वारा छात्रों को एक प्रसंग के अनेक रूप दर्शाये जाते हैं। इसके द्वारा पाठ का व्यापक अध्ययन हो जाता है। इस विधि से तुलना शक्ति, विवेचन क्षमता, गुण–अवगुणों की समालोचना करने की योग्यता विकसित होती है। यह विधि 'चार– प्रकार से अपनाई जाती हैः– 1. समभाषा तुलना 2. विभिन्न भाषा तुलना 3. भाव तुलना 4. एक लेखक की एक भाव वाली रचना की तुलना अन्य रचनाओं से। इस विधि से शिक्षण बोधगम्य हो जाता है।

3. **समीक्षा–विधि :–** व्यास विधि का ही रूप है। इसमें भावार्थ और व्याख्या के साथ–साथ आलोचना सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण अनिवार्य है। इस विधि का प्रयोग उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में होता है। इस विधि में अधिक कार्यभार छात्रों पर रहता है। अध्यापक केवल निर्देशन देते हैं। तीन रूप हैं – भाव समीक्षा, भाषा समीक्षा एवं प्रभावात्मक समीक्षा।

4.6 प्रश्नोत्तर विधि :

शिक्षण कोई भी हो, उसकी सफलता उसके अधिगम पर आधारित है। शिक्षा का मूलाधार शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का चक्रव्युह है। शिक्षण का जब तक मुल्यांकन न किया जाये, उसका विकास प्रगतिशील नहीं हो सकता। शिक्षण में परिपक्वता लाना अध्यापक के हाथ में है। शिक्षण कौशलों में एक मुख्य कौशल 'प्रश्नकौशल' माना जाता है। इसी कौशल का सही प्रयोग करने से छात्र के अधिगम की पहचान हो जाती है। प्रश्नोत्तर उत्तर विधि श्रवण कौशल को उन्नत करती है। यह विधि प्राथमिक स्तर से स्नातकोतर स्तर एक प्रयोग में लाई जाती है। जीवन का पूरा आधार इसी विधि के ईद–गिर्द चक्र काटता रहता है। शिक्षा/शिक्षण में पाँच बिन्दु इस विधि के आधार स्तम्भ हैः 1. क्या (What) 2. कब (When) 3. कहां (Where) 4. क्यों (Why) 5. कैसे (How). इन्हीं पाँच खम्बों का नाम प्रश्नोत्तर प्रणाली/विधि माना जाती है। विचारों का प्रेषणीयता छात्र तक पहुँची या नहीं – इसका निर्णय प्रश्नोत्तर–विधि द्वारा होता है। कक्षा में अध्यापक स्वयं पाठ पढ़ता है और छात्रों को ध्यानपूर्वक सुनने के लिए निर्देशन देता है ताकि पाठ समाप्त होने पर उससे संबंधित प्रश्न पूछकर छात्रों से उत्तर प्राप्त कर सकें। इस क्रिया को बोध परीक्षण कहते हैं या बोधात्मक प्रश्न कहते हैं। 'प्रश्नोत्तर–विधि' पाठ की अभिप्रेरणा करने में सहायक बनती है। इसकी सहायता से छात्रों के पूर्व ज्ञान का परीक्षण हो जाता है। पाठ का विस्तारीकरण–संक्षेपीकरण करने से प्रश्नोत्तर विधि सहायक बनती है। प्रश्नोत्तर ही छात्रों में विषय के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न करते हैं। प्रश्नोत्तर एक ऐसी विधि है जो छात्रों को एकाग्रचित होकर मनोयोग से पढ़ने के लिए उत्प्रेरित करता है।

इस विधि में उपयुक्त प्रश्नों द्वारा छात्रों के अधिगम की परीक्षा होती है। प्रश्नों के प्रयोग में 'सरल से कठिन' की ओर जानेवाला सूत्र दिया गया ज्ञान स्थायी बनता है। इस विधि को 'खण्डान्वय–विधि' भी कहते हैं। पाठ के एक एक गद्यांश पंक्ति पर प्रश्न पूछे जाते हैं। छात्रों से उत्तर प्राप्त करते हुए, आवश्यकता पड़ने

पर स्वयं उत्तर को अधिक करते हैं। इस विधि द्वारा छात्रों को पूरे पाठ (विषयवस्तु) का परिचय छात्रों को कराया जाता है। यह विधि कविता पाठ, विज्ञान विषय, सामाजिक अध्ययन का ज्ञान मानी जाती है। सम्पूर्ण पाठ – विकास प्रश्नों के रागात्मक तादात्म्य इस विधि द्वारा संभव नहीं है।

इस विधि का प्रयोग वर्णमाला, इतिवृत्यात्मक पाठ पढ़ाने में सक्षम विधि मानी जाती है। क्योंकि इन पाठों में तथ्य एवं विचार गुंफित हाते हैं, अनेक प्रसंगों का मिश्रण होता है। इन पाठों पर इस विधि का प्रयोग करने से पूर्व यह ध्यान रखना अनिवार्य है कि पाठ का समग्र रूप संक्षिप्त में स्पष्ट हो जाना चाहिए।

प्रश्नोत्तर प्रणाली (विधि) प्राचीन विधि है। यह प्रणाली (विधि) गुरूकुलों में प्रचलित थी। गुरू प्रश्न पूछते थे और शिष्य उत्तर देते। अध्यापक छात्रों के उत्तर का संशोधन भी करता। प्रश्नोत्तर विधि से छात्रों की अभिव्यंजना शक्ति में वृद्धि होती है। विचार व्यक्त करने से उनमें आत्मविश्वास बढ़ता है। छात्रों की वाक्य रचना शुद्ध हो जाती है। बोलने में स्वछुंदता आती है।

प्रश्नोत्तर विधि से न केवल मौखिक कार्य में सम्पन्नता आती है अपितु लेखन कार्य भी विकसित होता है। यह प्रणाली पूर्वमाध्यमिक और माध्यमिक स्तर पर प्रयुक्त करने के लिए यथोचित विधि/प्रणाली मानी जाती है। 'पाठ योजना' के पाँचों सोपानों पर इस विधि का प्रयोग अत्यन्त सावधानी से किया जाता है।

4.7 प्रोजेक्ट विधि :–

प्रायोजनावाद सिद्धान्तों पर आधारित जान डी.वी की यह विचारधारा (विधि) का आविष्कार उनके शिष्य किलपैट्रिक ने किया। इनकी मान्यात थी, ''योजना एक सहृदय उद्देश्यपूर्ण कार्य है जो पूरी लग्न से सामाजिक वातावरण में पूर्ण किया जाता है।''

अन्य विद्वानों ने इसके विषय में अपनी भिन्न–भिन्न विचारधारायें इस प्रकार व्यक्त की हैं।

प्रो० स्टीवेन्सनः– ''प्रोजेक्ट एक समस्या मूलक कार्य है, जिसे पूण करने में स्वाभाविक परिस्थितियों का होना अनिवार्य हैं''

वैलर्डः– इस विद्वान की मान्यता है, ''प्रोजेक्ट यथार्थ (वास्तविक) जीवन का एक भाग है जो विद्यालय को प्रदान किया गया है।''

इन विचारधाराओं/परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि योजना (प्रोजेक्ट–विधि) पद्धति का उद्देश्य विद्यालय, पाठ्क्रम तथा विषय सामग्री में समन्वय स्थापित करना होता है। अतः यह विधि विद्यालय के समस्त क्रिया कलापों का केन्द्र मानी जाती है। इस विधि की सहायता से छात्र स्वतन्त्रतापूर्वक सोचने, कार्य करने तथा पढ़ने के अवसर प्राप्त करते हैं। छात्रों की पढ़ने में रुचि बढ़ती है। जीवन को व्यावहारिकता से कैसे निर्वाहित किया जाता है, छात्रों को इसका अनुभव हो जाता है। उनकी पूरी शिक्षा उनके अनुभवों से जड़ जाती है। कहना अनुचित न होगा प्रोजेक्ट अनुभव आधारित विधि मानी जाती है। यह विधि मनोविज्ञान पर आधारित है, जिसमें समस्त विषयों का भिन्न–भिन्न रूप से न पढ़ाकर एक इकाई के रूप में पढ़ाया जाता है। 'प्रोजेक्ट (प्रायोजना) पद्धति' में पाँच साधनों को विशेष रूप से अपनाया जाता हैः–

1. परिस्थिति का निर्माण करना।
2. संबंधित समस्या पर विचार–विमर्श करना।
3. समस्यापूर्ति हेतु योजना बनाना।

4. समस्यापूर्ति के निष्कर्ष से ज्ञान प्राप्त करना।

5. समस्या–समाधान के प्रश्चात्य मुल्यांकन का निरीक्षण करना।

इस पद्धति द्वारा किसी भी समस्या को लेकर छात्रों को बहुमुखी शिक्षा प्रदान की जा सकती है। भाषा प्रत्येक विषय के लिए अनिवार्य है, प्रोजेक्ट द्वारा यद्यपि भाषा के समस्त अंग शिक्षित नहीं किए जा सकते परन्तु विशेष अवसरों पर इस पद्धति का प्रयोग बहुत उपयोगी हो सिद्ध होता है।

प्रोजेक्ट–विधि का तात्पर्य है कार्य को वास्तविक अवस्थाओं या परिस्थितियों में सम्पन्न करना।

हिन्दी शिक्षण में रचना कार्य पत्र व्यवहार, मौखिक अभ्यास तथा शब्दकोष में वृद्धि करने में यह विधि बहुत लाभदायी मानी जाती है। इस विधि में कोई विधिवत शिक्षण नहीं होता है।

आधुनिक शिक्षण प्रणाली में इस विधि का बहुत महत्त्व है। 'अनुभव केंद्रित' विधि भी कहते हैं। यह विधि छात्रों के सामाजीकरण पर बल देती है।

इस विधि के लिए कुछ सिद्धांतों को दृष्टि में रखा गया हैः–

1. उपयोगिता को विशेष महत्त्व देना। समस्या छात्र संबंधित हो।
2. छात्र सहभागिता (क्रियाशीलता) अधिक हो ताकि वह अपने अनुभवों से सीखे।
3. छात्र स्वतन्त्र होकर अपने स्वभावानुसार कार्य करें ताकि अधिक कृत्रिम न लगे।
4. छात्रों में सामाजिक गुण आते हैं, सहयोगभावना जागृत होती है, सामूहिक (Team Spirit) रूप से काम करना सीखता है।

इस विधि में योजना का प्रारूप इस प्रकार होते हैंः–

1. रचनात्मक 2. कलात्मक/सौंदर्यानुमूति 3. समस्या केन्द्रित 4. सामूहिक भावना।

प्रोजेक्ट विधि के सोपानः–

1. जीवन संबंधि समस्या का चुनाव।
2. समस्या स्वरूप को समझना।
3. समाधान हेतु योजना–निर्माण।
4. योजना क्रियान्वित करना।
5. योजना का मुल्यांकन करना।
6. योजना का आलेख तैयार करना।

विशेषतायें:–

1. छात्रों को मौलिक चिंतन, अुनभव तथा क्रियाओं द्वारा सीखने का अवसर मिलना।

2. छात्रों को नया ज्ञान जीवन से जोड़कर दिया जाता है।

3. छात्रों की सूझ बूझा क्षमताऐं विकसित होती हैं।

4. यह विधि मनोविन्ग और समाज सिद्धांतों पर अधारित हैं।

5. समस्य विषय समन्वित रूप से पढ़ाये जाते हैं। यह विधि बोधगम्यता में वृद्धि करती है।

6. छात्रों में सामाजिक गुण आ जाते हैं।

सीमायें:–

1. विषय को क्रमबद्ध रूप में नहीं दिया जाता।
2. वास्तविकता प्रदान करने के लिए यह विधि अधिक खर्चीली है।
3. सभी विषयों तथा पाठ्य वस्तुओं के लिए उपयोगी नहीं हो सकती।
4. सभी सामाजिक गुणों या विकास संभव नहीं है।
5. उच्च कक्षाओं के प्रयोग में संभव नहीं है।

सुझाव :– निम्नलिखित सावधानियां:–

1. कृषि विद्यालयों में प्रयोगिकता करनी चाहिए।
2. तकनीकी प्रशिक्षण संस्थाओं में उपयोगी ।
3. योजना कम खर्चीली होनी चाहिए।
4. इसे एक सहायक शिक्षण विधि के रूप में प्रयोग करना चाहिए।

कुछ मिलाकर यह विधि सक्षम विधि है।

4.8 विचार–विमर्श–विधि :–

हिन्दी शिक्षण में रचना कोई भी हो, उसे भावों और विचारों की कलाकृति माना जाता है। हिन्दी साहित्य का इतिहास अनेक विधाओं, प्रविधाओं से युक्त है। इन्हीं भावों–विचारों का विचार–विश्लेषण, करना विचारों की गहराई समझना अर्थवत्ता को अपना विचार–विश्लेषण माना जाता है। इसे भाव–परीक्षा, विचार–परीक्षा या आत्मीकरण कहलाता है। इस विधि द्वारा शिक्षक पाठ की विस्तशत व्याख्या और विचार–विमर्श की ओर अधिक ध्यान देता है। आवश्यकता पढ़ने पर नवीन और कठिन शब्दों के अर्थ छात्रों को बताये जाते हैं जिससे विचार का विश्लेषण पूरी तरह हो।

'विचार–विमर्श' विधि शिक्षण की एक प्रमुख क्रिया है। इसके उपयोग से शिक्षण की मुख्य उद्देश्यात्मकता प्राप्त होती है। विचार–विमर्श शिक्षण को विकासात्मकता प्रदान करती है। शिक्षण की यह विधि तर्कशक्ति, मननशक्ति चिन्तन शक्ति प्रदान करती है। इस विधि के सही उपयोग से शिक्षण का मापन किया जाता है। विचार–विमर्श से अध्यापक को पाठ योजना, पाठ पढ़ाने के तकनीक, साधन, प्रविधियां संगठित करने में मार्ग दर्शक का कार्य करती है।

विचार–विमर्श व्याख्या प्रणाली का ही अंश माना जाता है। इस विधि में उदाहरणों पर विचार करना, छात्रों से विचार निकलवाना, उन पर परस्पर विचारों का आदान–प्रदान करना इस विधि की प्रमुखता है। छात्रों की कल्पना–शक्ति इस विधि से विकसित होती है। विचारों से सबलता आती है, ज्ञान स्थायी बनता है। 'विचार–विमर्श' विधि एक उपचार विधि के समान है जो अध्यापक एवं छात्रों के संदेह, भ्रान्तियाँ, त्रुटियों इन सबमें सुधार एवं स्पष्टीकरण कार्य करती है।

शिक्षण के तीन पक्ष – पूर्वप्रक्रिया, प्रक्रिया और अतः प्रक्रिया – इन तीनों का सही नियोजन और पारसपरिक सह संबंधता के लिए विचार–विमर्श विधि रामबाण के समान है। इस विधि की प्रमुखता यह है कि अध्यापक छात्रों को रचना का विषय देता है, छात्र पुस्तकालय एवं घर में बैठकर, विस्तृत अध्ययन करते हैं, कक्षा में अध्यापक के साथ, सहपाठियों के साथ विचार विमर्श करते हैं। विषय के गुण–दोषों पर विवेचन होता है, निर्णय (मुल्यांकन) निकाले जाते हैं, अंत में अध्याय अपनी सम्पति देता है, और छात्रों को रचना/सृजना करने का आदेश देता है। यह विधि निबंध रचना के लिए अधिक सहायक है। यह विधि विवादास्पद विषयों पर अधिक लागू होती है। किसी समस्या का निदान खोजने में यह विधि सफलतम विधि मानी जाती है। यह विधि माध्यमिक स्तर और उच्च कक्षाओं के लिए अधिक उपयोगी मानी जाती है।

इस विधि में अनुभवी शिक्षकों, विद्वानों द्वारा दिया गया सहयोग अधिक लाभदायी और अनिवार्य है।

इस विधि से छात्रों में एकाग्रति प्रवशति विकसित होती है। पढ़ने के लिए अनेक सामग्री संगठित करता है, इसका अध्ययन करने के बाद ही इसपर विचार विमर्श करता है। पाठ में निहित भाव, अर्थ, विचार को ग्रहण करता है। ग्रहण किये ज्ञान को आत्मसात करता है। ताकि सृजनात्मकता में उपयोगी हो इस तरह छात्र के व्यक्तित्व में भी इस विधि से विकास होता है।

4.9 आगमन–निगमन विधि :–

हिन्दी साहित्य की अनेक विद्याओं में व्याकरण की भूमिका या विद्या एक प्रमुख महत्त्व लिए है। भाषा का स्वरूप तब बनता है जब उसमें प्रत्येक दृष्टिकोण से शुद्धता परिलक्षित हो। व्याकरणिक शुद्धता ही भाषा की आत्मा है। इसी व्याकरण का अधिगमन करने के लिए अध्यापक अपने शिक्षण में अनेक विधियों का उपयोग करता है जिनमें 'दो' विधियाँ महत्त्व रखती हैं–

1. आगमन विधि 2. निगमन विधि

1. **आगमन विधि :–** आगमन विधि को प्रयोग विधि से भी जाना जाता है। ये विधि अधिक प्राचीन विधि मानी जाती है परन्तु आधुनिक शिक्षण प्रणाली में आज भी इसकी विद्यमानता एवं प्रयोग अपनी प्रमुख भूमिका निभाते हैं। यह विधि मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है। शिक्षण की यह विधि स्वभाविक विधि मानी जाती है। यह विधि निगमन विधि के बिल्कुल उल्ट होकर प्रयुक्त होती है। इस विधि में छात्रों के सम्मुख उदाहरण रखे जाते हैं और विद्यार्थी स्वयं उन उदाहरणों को देखकर, उन्हीं की सहायता से सिद्धान्त का निरूपण करता है। इस प्रक्रिया में अध्यापक मात्र सहायता करते हैं। मनोवैज्ञानिक विधि इसलिए मानी जाती है क्योंकि छात्र वस्तुओं को देखते हैं और उनके संबंध में 'क्या', 'क्यों', 'कैसे' – इस प्रकार के प्रश्न उभरते हैं। इन्हीं उत्तरों से नियमों तथा सिद्धांतों का प्रतिपादन होता है। मातृभाषा शिक्षण में उसका विशेष महत्त्व है। इस विधि में अधिगम (सीखने) को अधिक महत्त्व दिया जाता है। जैसे यदि अध्यापक को 'संज्ञा' का अध्यापन कराना हो तो, श्यामपट्ट पर कुछ शब्द लिखेगा जैसे – 'राम, पेन, बच्चा, स्कूल' आदि और छात्रों से इनके विषय में पूछेगा – ये सब क्या है ? छात्र उत्तर देंगे – 'ये नाम है', इस प्रकार प्रश्नों की सहायता से 'संज्ञा' की

परिभाषा समझायेगा आगमन विधि में तर्क प्रधानता अधिक रहती है।

यह विधि छात्रों को सृजनात्मकता के योग्य बनाती है। इसे 'उदाहरण–नियम' विधि भी कहते हैं।

इस विधि में निम्नलिखित क्रम का पालन किया जाता है।

1. उदाहरण 2. विश्लेषण 3. सामान्यीकरण 4. परीक्षण।

सर्वप्रथम छात्रों के सम्मुख उदाहरण रखे जाते हैं, उनको अच्छी तरह देखकर उनका विश्लेषण करते हैं, इसके बाद उनमें 'समानता' खोजते हैं और 'नियम' बनाते हैं। उन नियमों को सिद्ध या प्रमाणित करने के लिए परीक्षण करते हैं।

आगमन विधि में तर्क का प्रयोग अधिक रहता है। जैसे :–

1. कौटिल्य नश्वर है, युधिष्ठर नश्वर है, पंडित नश्वर है – यह सब मनुष्य हैं, अतः सभी मनुष्य नश्वर है।
2. आसमान नीला है, पुस्तक सफेद है, स्याही नीली है। पुस्तक, आसमान, स्याही को व्याकरणिक भाषा में क्या कहते हैं – उतर – संज्ञा। इन वस्तुओं के साथ जो रंग शब्द हैं, वे उस वस्तु की विशेषता बताते हैं, जिसे विशेषण कहते हैं।

इस प्रकार इस 'उदाहरण–विधि' से नियम प्रतिपादित किया जाता है।

गुणः–

1. इस विधि में रटने की आवश्यकता नहीं रहती।
2. इस विधि से पढ़ने और स्मरण करने की प्रवशति विकसित होती है।
3. विद्यार्थी स्वयं नियम निकालते हैं।
4. इस विधि में मानसिक आधार पर प्राप्त किया गया ज्ञान स्थायी रहता है।
5. यह प्रणाली/विधि छात्र केन्द्रित विधि है। सभी शिक्षा शास्त्री इसी विधि पर बल देते हैं।
6. यह विधि 'ज्ञात से अज्ञात', 'सरल से कठिन', मूर्त से अमूर्त', 'विशिष्ट से सामान्य' सूत्रों का अनुकरण करती हैं। इसलिए यह विधि मनोवैज्ञानिक मानी जाती है।
7. इस विधि को अपनाने से शिक्षण रोचक, क्रियाशील और प्रभावशील बनता है। आगमन–विधि की चर प्रविधियाँ (उदाहरण, तुलना नियमीकरण/निष्कर्ष, प्रयोग/अभ्यास) भाषा का व्यावहारिक ज्ञान देते हैं। इन प्रविधियों के आधार पर छात्रों से प्रश्नों के आधार पर निष्कर्ष निकलवाया जाता है जो नियमीकरण कहलाता है। यह विधि छात्रों को प्रयोग करने में अभ्यस्त बना देती है।

2. निगमन–विधिः– इस विधि को 'नियम उदाहरण' विधि भी कहते हैं। इस विधि द्वारा छात्रों को पहले नियम समझाये जाते हैं, उसके बाद उदाहरण द्वारा उनका स्पष्टीकरण किया जाता है, प्रयोग करके समझाया जाता है। दूसरे शब्दों में यह कहना उचित है कि नियम को पूर्ण रूप (परिभाषा) में प्रस्तुत करके उदाहरण को अपूर्ण रूप में रखकर छात्रों द्वारा पूर्ति कराई जाती है। उदाहरण स्वरूप–'संज्ञा के शिक्षण हेतु नियम पहले समझाया जाता है, उसके बाद छात्रों को किसी भी व्याक्य द्वारा इसमें संज्ञा शब्द छाँटने के लिए कहा जाता है। जैसे– ''मेरठ दिल्ली के पास है।''

प्राचीनकाल से व्याकरण की शिक्षा इसी विधि द्वारा क्रियाशील होती आ रही है। आज भी इसका प्रचलन जारी है। लेकिन इस प्रणाली द्वारा दी गई शिक्षा नीरस अरूत्तिकर, शुष्क होती है। छात्र वैसे भी व्याकरण नाम से डरते हैं, क्योंकि इसकी अध्यापन विधि अमनोवैज्ञानिक है। निगमन विधि में 'सूक्ष्म से स्थूल' वाला सूत्र अपनाया जाता है जिसे छात्र पसंद नहीं करते। छात्रों की दृष्टि सदैव स्थूल पर ही टिकती है। वे सिद्धांतों को नहीं वस्तुओं को जानना चाहते हैं। इस प्रणाली को अपनाने से विद्यार्थी मूक श्रोता बने रहते हैं, निष्क्रय हो जाते हैं, और पाठ में अधिक रुचि नहीं लेते हैं। अध्ययन/अधिगम में ध्यान और रुचि का परस्पर घनिष्ठ संबंध है। अतः व्याकरण के लिए आगमन विधि ही उत्तम विधि है। फिर भी इस विधि को आगमन विधि का पूरक रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए।

संक्षेप में कह सकते हैं, 'निगमन—आगमन' विधि एक दूसरे की पूरक हैं। अकेली निगमन विधि का प्रयोग पाठ को नीरस एवं अरोचक बनाता है और पुस्तक विधि का ही परिवर्तित रूप बन जाता है। 'आगमन विधि' भी अकेली प्रयुक्त नहीं हो सकती। 'निगमन विधि' के बिना आगमन अपूर्ण है। 'आगमन विधि' यदि नियम/निष्कर्ष निकाली है तो उस निष्कर्ष का परीक्षण करने के लिए 'निगमन—विधि' उपयुक्त है। अतः पाठ की प्रयोगात्मकता के लिए, इसे सफल और प्रभावशाली बनाने के लिए दोनों विधियों का संयोग होना अनिवार्य है।

4.10 निष्कर्ष

अतः संक्षेप में कह सकते हैं कि ये शिक्षण विधियां अपनाते हुए इनकी सार्थक प्रयोगिता प्राप्त होना अनिवार्य है। यह तभी संभव है जब इनका प्रयोग कक्षा स्तर की आवश्यकता को ध्यान में रखकर किया जाये।

4.11 आत्मजांच और परीक्षण

1. आधुनिक शिक्षण पद्धति से क्या तात्पर्य है?
2. आधुनिक शिक्षण पद्धति के महत्त्व को विवेचित करके इसके भेद वर्णित करें।
3. व्याख्या—विधि से क्या तात्पर्य है, इसका महत्त्व विवेचित करें।
4. व्याख्या—विधि के उपभेद वर्णित करें।
5. ''प्रश्नोत्तर विधि शिक्षण प्रणाली का आधार स्तम्भ है।'' इस कथन की पुष्टि करके इसका महत्त्व प्रतिपादित करें।
6. आगमन—विधि से क्या तात्पर्य है?
7. निगमन—विधि अस्वभाविक एवं अमनोवैज्ञानिक विधि मानी जाती है—क्यों?
8. आगमन—विधि के गुण वर्णित करें।
9. 'विचार—विमर्श' विधि हिन्दी शिक्षण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है'' – इस कथन की पुष्टि करके इसकी प्रयोगात्मकता पर प्रकाश डालों।
10. प्रोजेक्ट—विधि की समीक्षा करें।

11. प्रोजेक्ट–विधि के गुण–दोष एवं क्रियशीलता पर विचार व्यक्त करें।

ख. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. शिक्षण पद्धति (विधि) क्या होती है? 2 या 3 पंक्तियों में सपष्ट करें।
2. हिन्दी भाषा शिक्षण की मुख्य दो विधियां लिखिए।
3. भाषा प्रयोगशाला क्या होती है?
4. विचार विमर्श शैली से क्या तात्पर्य है?
5. आगमन विधि क्या होती है।

ग. रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न

1. शिक्षण आयाम में निश्चित .... अनुसरण होता है।
2. भाषा शिक्षण में .... विधि का उपयोग होता है।
3. योजना विधि का विकास .... ने किया।
4. भाषाई कौशलों के विकास के लिए भाषा .... का उपयोग किया जाता है।
5. हिन्दी शिक्षण विधियों की प्रभावशीलता के लिए .... उपयोगी है।

(सोपानो, अनुकरण, प्रयोगशाला, किलपेट्रिक, पर्यवेक्षण, अप्रत्यक्ष)

4.12 सहायक ग्रंथ सूची

1. भाषा–विज्ञानः डॉ भोलानाथ तिवारी
2. हिन्दी शिक्षण विधियां : एम. एम. भाटिया
3. हिन्दी भाषा शिक्षण : भाई योगेन्द्र जीत
4. हिन्दी शिक्षण : डॉ शिक्षा चतुर्वेदी

....

शिक्षण–सामग्री – अर्थ, महत्त्व तथा भेद

5.1 भूमिका

5.2 उद्देश्य

5.2 हिन्दी शिक्षण में सहायक सामग्री का अर्थ विवेचन

5.3 हिन्दी शिक्षिण में दृश्य–श्रव्य सामग्री का महत्त्व एवं प्रयोगात्मकता

5.4 हिन्दी–शिक्षण सामग्री–भेद

5.5 निष्कर्ष

5.6. आत्मजांच और परीक्षण

5.7 सहायक ग्रंथ सूची

5.1 भूमिका :

शिक्षण–अधिगम का परस्पर घनिश्ठ संबंध है, एक दूसरे के पूरक है, एक दूसरे पर आधारित है। इनका परस्पर घनिश्ठ संबंध अधिक प्रभावशाली तब हो जाता है जब शिक्षण को सजीव बनाया जाये। यह सजीवता तभी संभव है, जब शिक्षक शिक्षण प्रदान करते समय विशय से संबंधित सामग्री का प्रयोग करे। इससे शिक्षक स्थाई, सुदृढ़ बन जाता है। इसके लिए विद्वानों से उन सामग्रियों को अधिक महत्त्व दिया है जिनसे हमारी ज्ञान इन्द्रियाँ जुड़ी हैं। शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्तिमें शिक्षण युक्तियाँ सहायक बनता है। ये युक्तियाँ चाहे दृश्यात्मक हो या श्रव्यात्मक या दोनों, सबका महत्त्व अपनी विशेषता रखता है।

5.2 उद्देश्य

1 शिक्षण सामग्री द्वारा पाठ्य सामग्री को सरल, सहज, बोधगम्य बनाना।

2 अधिगम और लेखन को सरल बनाना।

3 विषय सामग्री को सजीव बनाना।

4 वर्णित विषय की कठिनाईयों को दूर करना।

5 छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे अपनी स्मरण शक्ति को सुदृढ़ या परिपक्व बना सके।

6 छात्रों की निरीक्षण शक्ति में वृद्धि करना।

7 छात्रों की कल्पना शक्ति में वृद्धि करना।

8 कक्षा में अनुशासन बनाये रखने में सहायक बनाना।

9 छात्रों के ध्यान को आकर्षित करने में सहायक बनाना।

10 छात्रों में जिज्ञासा प्रवृति को उत्तेजित करना।

11 पाठ्य सामग्री को बोझिल और नीरस होने से बचाना।

12 शिक्षण लक्ष्य प्राप्ति में सहायक सिद्ध होना।

13 ज्ञानेद्रियों को क्रियाशील बनाना।

14 कर्णेन्द्रियों को जागरुक रखना।

15 छात्रों के उच्चारण में शुद्धता लाना।

16 कमज़ोर पिछड़े छात्रों को सरलतापूर्वक सिखाने में सहायक।

17 छात्रों को वस्तु/स्थान/देश/विदेश का प्रत्यक्ष अनुभे माडल/चित्र द्वारा करवाना।

18 शिक्षण सामग्री द्वारा क्रिया–सिद्धान्त अपनाने का अवसर प्राप्त करना।

19 रटने की प्रणाली/आदत कोकम करना।

20 शिक्षण को कुशल, प्रभावशाली बनाना।

5.2 अर्थ विवेचन :–

शिक्षण एक बहुमुखी क्रिया है। इस क्रिया को ग्राह्मत्मक, प्रभावशाली, उपयोगी प्रेषणीय बनाने के लिए अनके प्रकार के साधन अपनाने की आवश्यकता है, तभी इसकी सौद्देश्यता प्राप्त होती है। शिक्षा प्राप्त करने के साधन स्कूल, पाठ्य सहायक क्रियायें आदि सभी माने जाते हैं। जिन लक्ष्यों को (सामान्य/विशिष्ट) पाने की इच्छा होती है उनको पाने में यह सब सहायक साधन कहलाते हैं। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में इतनी व्यपकता, विस्तृता आई है कि नित्य नवीन साधनों को अपनाने की आवश्यकता पड़ती है। एक चीनी कथन है ''एक बार देखना सौ बार कहने से अच्छा है।''

इसका तात्पर्य है कि एक बार देखी वस्तु सदैव के लिए अपना अमिट प्रभाव छोड़ती है। अगर उसी वस्तु को बार–बार वाचित किया जाये या बताया जाए उसका उतना शक्तिशाली प्रभाव नहीं होता है। आज के शिक्षा क्षेत्र में इस कथन की सार्थकता एवं यथार्थता सही उतरती है। शिक्षा विद्वानों का कथन है कि शिक्षण प्रक्रिया में ऐसे साधन प्रयुक्त किये जाने चाहिए जिनसे विद्यार्थियों की ज्ञानेन्द्रियां अधिक से अधिक प्रयुक्त हो। इसीलिए छात्रों को यात्राओं पर लिया जाता है, विभिन्न वस्तुओं को दर्शाकर उनकी इन्द्रियों को सचेत किया जाता है। यह साधन अधिगम क्रिया को सार्थक और प्रभावपूर्ण बनाते हैं।

भारत सरकार ने अपनी नवीन निर्मित शिक्षा नीति के तहत (अधीन) प्राथमिक शिक्षा स्तर से लेकर उच्चस्तरीय शिक्षा तक शिक्षण सामग्री (उपकरण) का प्रयोग करने पर बल दिया है।

अतः हिन्दी शिक्षण की सहायक सामग्री को विद्वानों ने 'दृश्य–श्रव्य' सामग्री का नाम भी दिया है। इसको शिक्षा तकनीकी में 'हार्डवेयर' आयाम माना जाता है। इसके उपयोग से पाठ के सूक्ष्म से सूक्ष्म, कठिन से कठिन विचारों, भावों को सरलता पूर्वक समझा जा सकता है। यह स्वाभाविक तथ्य है, जब शिक्षण प्रदान करते समय विभिन्न विधियां, प्रविधियां असफल रह जाती है और उद्देश्यात्मकता प्राप्त नहीं होती है तो ऐसी अवस्था में यही शिक्षण सामग्री सहायक बनती है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि ये दृश्य–श्रव्य साधन शिक्षण विधियों प्रविधियों को भी प्रभावशाली बनाने में रामबाण का काम करती है। इन दृश्य–श्रव्य सामग्री में उन सभी साधनों को सम्मिलित किया जाता है जिनसे छात्रों की रुचि पाठ में बनी रहे। रुचि जितनी सघन होगी समझना उतना सरल होगी।

परिभाषायें :–

1. 'ई.सी. डेन्ट' के अनुसार ''श्रव्य–दृश्य सामग्री का अर्थ इस समस्त सामग्री से है जो कक्षा–शिक्षण या अन्य शिक्षण परिस्थितियों में लिखित या बोली हुई पाठ्य–विषय को समझने में सहायता देती है।''

2. इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षा कार्य में सहायता देने के लिए विज्ञान ने अनेक सहायक साधन उपलब्ध रखे हैं। इन साधनों की प्रभावशीलता इस संदर्भ में देखी जाती है कि आज भिन्न–भिन्न व्यक्ति एक दूसरे को परस्पर समझते नहीं हैं जो दो मुख्य कारणों से होता है :–

   1. व्यक्ति एक दूसरे के पक्ष की बात सुनते नहीं।

   2. वक्ता द्वारा प्रयुक्त शब्दों का भिन्न अर्थ लगाते हैं।

अतः सहायक शिक्षण सामग्री इस समस्या को दूर करने का सही निदान है।

5.4 शिक्षण सामग्री (दृश्य–श्रव्य) की उपयोगता / महत्त्व / लाभ / आवश्यकता

अक्सर अध्यापक पाठ्य पुस्तक द्वारा ही अपना शिक्षण पूर्ण करते हैं। निःसंदेह पाठ्य पुस्तक शिक्षा प्रदान करने का महत्त्वपूर्ण साधन है लेकिन यह अपने आप में पूर्ण नहीं है। उत्साही और प्रवीण अध्यापक भी कई बार मानते हैं, अनुभव करते हैं कि छात्र सही ढंग से, संतोषजनक होकर पाठ को नहीं समझ पाते हैं, तब उन्हें अपने शिक्षण में कुछ अभाव सा अनुभव होता हे। उन्हें इस अभाव को दूर करने के लिए कुछ ऐसे साधनों की आवश्यकता अनुभव होती है जिससे इनका पाठ विद्यार्थी को अच्छी तरह समझ आये।

छात्र केवल अध्यापक से ही नहीं सीखता अपितु पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त प्रत्यक्ष अनुभव भी उसे सिखाते हैं। प्रकृति से ज्ञान प्राप्त होता है, जो उसकी ज्ञानेन्द्रियों को जगाती हैं। बालक देखकर, सूंघकर, स्वाद लेकर (जिह्वा) स्पर्श करके जीवन का अधिकांश ज्ञान प्राप्त करता है। कक्षा में शिक्षण कार्य करते समय उन श्रव्य–दृश्य साधनों का प्रयोग इसके महत्त्व को सुलभ बनाते हैं। उदाहरण स्वरूप–यदि छात्रों को किसी भी विशिष्ट नदी, स्थान, पर्वत का विवरण पढ़ाना हो तो उसका मौखिक शिक्षण काफी नहीं है। इसके लिए छात्रों को या तो उस नदी का प्रत्यक्ष स्थान (रूप), दर्शाना है, वहां तक ले जाना है । 'मॉडल' तथा नक्शे की सहायता से इस पाठ को कुछ सीमा तक संभव बनाया जा सकता है। आँखों से देखी वस्तु की छाप लम्बे समय तक मस्तिष्क में अंकित रहती है। कहने का तात्पर्य है कि छात्रों की ज्ञानेन्द्रियों को अधिक सक्रिय बनाने के लिए कक्षा में श्रव्य–दृश्य सहायक साधनों / सामग्री का प्रयोग करना आवश्यक है। परिभाषाओं का आधारः–

1. 'प्रो० बेनैर' ने प्रमाणित किया है कि ''ज्ञान ग्रहण करने की प्रक्रिया में 40 प्रतिशत ज्ञान आँखों द्वारा, 25 प्रतिशत कानों ने तथा 17 प्रतिशत स्पर्श द्वारा प्राप्त होता है।'' ये साधन छात्रों की आँखों और कानों को प्रेरित करते हैं। औपचारिक शिक्षण में इनकी उपयोगिता सही मानी गई है।

2. 'वेस्ले' : श्रव्य–दृश्य साधन अनुभव प्रदान करते हैं। उनके प्रयोग से शब्दों एवं वस्तुओं का संबंध सरलतापूर्वक स्थापित हो जाता है। छात्रों को सही बातों का पता चलता है। उनका मनोरंजन होता है और वे प्रशंसा करना भी सीखते हैं।''

3. 'क्रो एवं क्रो' : ''श्रव्य–दृश्य शिक्षण सामग्री सीखने वालों को व्यक्तियों, घटनाओं वस्तुओं तथा कारण संबंधी प्रभाव से नियोजित अनुभवों से लाभ उठाने का अवसर प्रदान करते हैं।''

इन विचारधाराओं के आधार पर शिक्षण सामग्री (दृश्य–श्रव्य) के महत्त्व को समझा जा सकता है। सीखने की प्रक्रिया को प्रोतसाहित किया जा सकता है। इस संबंध में महत्त्वपूर्ण बिन्दु इस प्रकार हैः–

1. विभिन्न इन्द्रियों से संबंधित अनुभवों की प्राप्ति होती है।

2. बहुत से प्रदेशों, देशों, स्थानों की जानकारी देने के लिए हम चित्रों, मॉडलों का प्रयोग प्रभावपूर्ण ढंग से कर सकते हैं जिसे प्रत्यक्ष अन्भव कहते हैं।

3. शिक्षण–सामग्री की सहायता से अनेक छात्रों की समस्याओं का समाधान किया जाता है विशेषकर पिछड़े छात्रों की सहायाता संभव हो जाती है क्योंकि उन्हें पाठ्य पुस्तक से सारी बातें ग्रहण नहीं होती हैं।

4. इनके प्रयोग से समय की बचत होती है। दृश्य–श्रव्य सामग्री से कठिन उदाहरणों, प्रत्ययों एवं तथ्यों को सरलतापूर्वक स्पष्ट किया जा सकता है।

5. यह बात प्रामाणित हो चुकी है कि दृश्य–श्रव्य साधनों के प्रयोग से छात्र केवल शीघ्रता से सीखते नहीं हैं अपितु उन सीखी बातों को बहुत देर तक याद रखते हैं जिसे 'सुदृढ़ ज्ञान प्राप्ति' कहते हैं।

6. दृश्य–श्रव्य साधन छात्रों को प्रेरणाा देकर उन्हें सक्रिय बनाते हैं। पढ़ाते समय छात्र जितने सक्रिय होंगे उतना शिक्षण सफल होगा। इसके शिक्षण में छात्रों की सहभागिता भी कहते हैं। अगर साधन रोचक होंगे तो प्रेरणा का स्रोत बनकर छात्रों को क्रियाशील बनाते हैं। उनकी कल्पना शक्ति को उत्तेजित करते हैं वे स्वयं उपकरण, बना सकते हैं, परिणामस्वरूप उनमें कलात्मकता एवं रचनात्मकता का गुण सम्मिलित हो जाता है।

7. शिक्षण उपयोगिता का स्पष्टीकरण हो जाता है, रूढिवादी शिक्षण की औपचारिकता समाप्त ही नहीं होती अपितु कक्षा में प्रयुक्त वस्तु की उपयोगिता भी स्पष्ट हो जाती है।

8. शिक्षण–सामग्री के प्रयोग से छात्रों को विभिन्न क्रियायें करने का अवसर मिलता है। कक्षा में छात्र प्रश्न पूछते हैं, वाद–विवाद करते हैं, जिनके परिणामस्वरूप उनकी पाठ में रुचि बनी रहती है। खेल–खेल में अत्यंत सरलता से कठिन तथ्यों को बिना कठिनाई के समझ लेते हैं।

9. 'ज्ञान को सुबोध बनाने में', शिक्षण सामग्री सहायक बनती है। शिक्षण जितना रोचक होगा छात्रों के लिए उतना अधिक सुबोध एक सुग्राह्य होगा। शिक्षण प्रदान करते समय अनेक सूक्ष्म बातों का ध्यान रखना पड़ता है, जिनको निर्वाहित करना कठिन होता है। छात्रों की बुद्धि उतनी विकसित नहीं होती

है कि वे मौखिक व्याख्या द्वारा सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त कर सकें। इन शिक्षण साधनों की सहायता से अध्यापक सूक्ष्म ज्ञान को भी सहज ग्राह्य और सुबोध बना सकता है।

10. श्रव्य–दृश्य साधनों का प्रयोग शिक्षण सूत्रों के अनुकूल होता है। 'सूक्ष्म से स्थूल की ओर' तथा 'मूर्त से अमूर्त की ओर' प्रसिद्ध शिक्षण सूत्र इस कथन की पुष्टि करता है। श्रव्य–दृश्य साधनों का प्रयोग इन्ही सूत्रों पर आधारित है। जब अध्यापक इन साधनों का प्रयोग कर रहा होता है तो कक्षा में मूर्त एवं स्थूल साधन प्रस्तुत कर रहा होता है, जिनके माध्यम से गहन भावों–विचारों को समझना संभव हो जाता है। शिक्षण–सूत्रों पर आधारित होने के कारण इनका प्रयोग अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है।

11. दृश्य–श्रव्य साधनों की सहायता से छात्रों को पाठ स्थूल रूप से पढ़ा जाता है। प्रत्येक छात्र यथार्थ रूप से समझने का प्रयास करता है। सभी छात्र ज्ञान/पाठ को प्रसन्नतापूर्व ग्रहण कर लेते हैं। इस प्रक्रिया से छात्रों के अनुभव अर्थपूर्ण हो जाते हैं, मौखिकता को प्रोत्साहन मिलता है।

12. दृश्य–श्रव्य सामग्री का महत्त्व इस रूप में भी देखा जाता है जब ठोस शिक्षण स्थाई बनता है तो उसे रटने की आवश्यकता नहीं पड़ती। स्वयं सीखा ज्ञान स्थाई बनता है।

13. इन सामग्रियों के प्रयोग से शब्दावली में वृद्धि होती हैं। इसका कारण यह है कि छात्र रेडियो, टेलिविजन या चलचित्र का सही प्रयोग करते हैं।

14. दृश्य–श्रव्य सामग्री के प्रयोग से शिक्षण में निपुणता आती है। जिन तथ्यों को छात्र चॉक या श्यामपट्ट प्रयोग से नहीं समझता है, उनको श्रव्य–दृश्य सामग्री की सहायता से समझ लते हैं। इनकी सहायता से शुष्क तथा अरुचिकर विषयों को आत्मसात करना सरल हो जाता है। कुल मिलाकर निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि श्रव्य दृश्य साधनों से शिक्षण स्थाई, रोचक, सरल, सुबोध, प्रेरणादायी, ग्राह्यात्मक, स्पष्ट बन जाता है। इनका सही प्रयोग छात्रों की इन्द्रियों को सजग बना देता है। ज्ञान को स्थाई बनाया जाता है। ये ऐसे साधन हैं, जो छात्रों की आँखों और कानों को सक्रिया रखता है क्योंकि यही ज्ञान–प्राप्ति के सशक्त साधन है। सीखना और लिखना सरल और सहज हो जाता है। वर्णन में सजीवता आती है। विवेचन क्रिया की कठिनाई दूर हो जाती है। निरीक्षण शक्ति विकसित होती है। स्मरण शक्ति, कल्पना शक्ति विकसित होती है। छात्रों का ध्यान आकर्षित हो जाता है। अभिप्रेरणा में सहायक बनते हैं। लक्ष्य की प्राप्ति होती है।

5.5 ''हिन्दी शिक्षण सामग्री–भेद/प्रकार''

हिन्दी शिक्षण सामग्री का महत्त्व ध्यान में रखते हुए विद्वानों ने इस भेदात्मक अवस्था इस प्रकार वर्णित की है:–

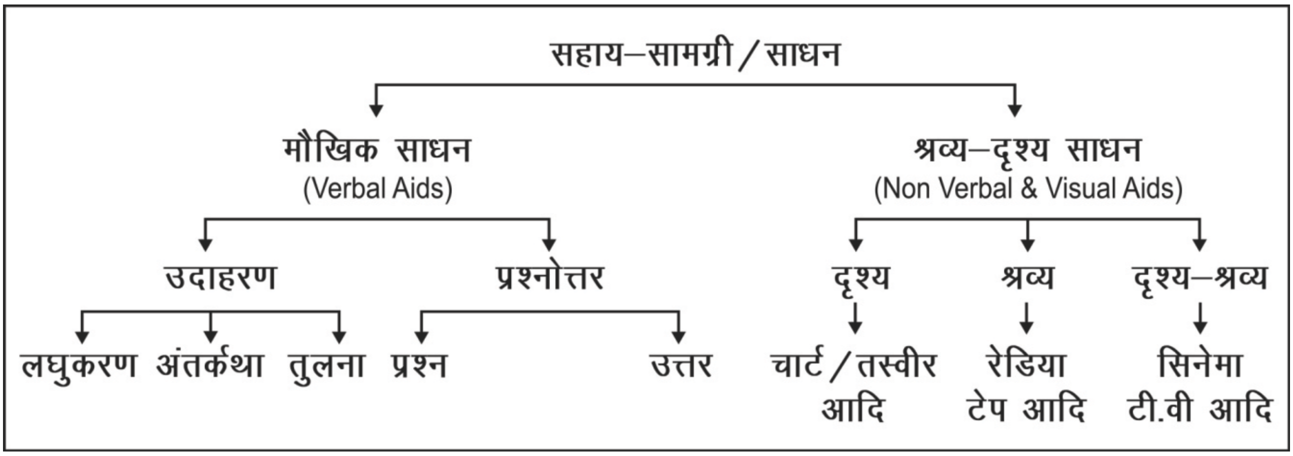

श्रव्य–दृश्य साधनः– ज्ञानेद्रियों द्वारा या प्रत्यक्ष रूप से दिया गया अधिक स्थाई और रुचिकर होता है। 'श्री फ्रांसिस डब्ल्यू, नॉयल' कहते हैं ''शिक्षात्मक कार्यक्रम में उत्तम अनुदेश एक पक्की नींव का कार्य करता है और श्रव्य–दृश्य साधन उसी नींव का प्रमुख अंश है।''

श्रव्य सहायक सामग्रीः– इस सामग्री का तात्पर्य उन साधनों से है जिनमें श्रवण इन्द्रियों का प्रयोग होता है या कानों पर अधिक बल पड़ता है। अतः इस सामग्री के लिए श्रवण कौशल होना अधिक अनिवार्य है। इसके लिए अनिवार्य है कि छात्रों को श्रवण कौशल के लिए तैयार करना अपेक्षित है। जितना श्रवण कौशल परिपक्व होगा ज्ञान उतना स्थायी और सही होगा। इस सामग्री में ध्वनियों का विशेष ध्यान रखना अनिवार्य है। शांतिपूर्वक सुनना अनिवार्य है। सुनते समय बीच में प्रश्न नहीं पूछने चाहिए। श्रवण सामग्री के उपयोग से शिक्षण को प्रभावोत्पादकता आ जाती है। अधिगम में अगर कोई अभाव रहता है तो अध्यापक का कर्त्तव्य है कि देखे कहाँ कमी रही है। छात्रों के सुनने में या अध्यापक के बोलने में। ये दृश्य–साधन 'मौखिक–साधन' भी कहलाते हैं। श्रव्य साधनों में अधिकाशतः वाचन सामग्री और प्रशोत्तर तकनीक/सामग्री का महत्त्व अधिक माना जाता है। प्रश्न पूछना और उसको सुनना/समझना श्रवण शक्ति पर निर्भर करता है–प्रश्न जितना ध्यानपूर्वक सुनना उतना सटीक उत्तर भी होगा। समाज में लोगों को लेकर जो व्यक्तिगत भिन्नता दिखाई देती है उसका मुख्य कारण एक दूसरे की बात को ध्यानपूर्वक न सुनना और व्यक्ति द्वारा कही बात का दूसरा अर्थ निकालना। कभी–कभी अभिव्यंजना प्रणाली भी बात को प्रभावित या प्रभावहीन करती है। अतः श्रव्य सामग्री का प्रयोग करते समय बहुत सावधानी बरतना अनिवार्य है। चूँकि श्रव्य साधन में अधिक बल 'प्रश्नों' पर रहता है – इसलिए प्रश्न पूछने का ढंग, या उसकी उत्तम शैली का विकास होना अनिवार्य है। शिक्षण में अभिप्रेरणा की भूमिका महत्त्वपूर्ण मानी जाती है जिसका आधार प्रश्नोत्तर प्रणाली सामग्री पर है। इसी सामग्री की सहायता से छात्रों के पूर्व ज्ञान का परीक्षण हो जाता है। उन्ही की सहायता से कल्पना एवं विचार शक्ति को उत्तेजित किया जाता है। छात्रों की शंकाओं को दूर करने में श्रव्य सामग्री सहायक बनती है। प्रश्न चाहे प्रस्तावना के हो, प्रस्तुतीकरण, बोधपरीक्षण, दोहराव व्याख्या प्रश्न आदि हो, इन सबसे में श्रव्य साधनों का उपयोग किया जाता है। रेडियो, ग्रामाफोन तथा लिंग्वाफोन, पाठ्यपुस्तक, टेप रिकार्डर आदि 'श्रव्य–सामग्री' की श्रेणी में रखे जाते हैं।

दृश्य सहायक सामग्रीः– दृश्य सहायक सामग्री या साधनों का तात्त्पर्य उन साधनों से है जिनसे दृश्य (नेत्र) इन्द्रियों का प्रयोग होता है। इन साधनों द्वारा वास्तविक पदार्थों को देखने की प्रेरणा मिलती है। वास्तविक पदार्थों के प्रयोग से छात्रों को अनुभव प्राप्त होते हैं। स्पर्शता अनुभव होती है। रसप्रतिभायें निर्मित होती है।

रसप्रतिभायें कल्पना शक्ति विकसित करती है। ये अनुभव दूसरों द्वारा मौखिक रूप से दिये गए अनुभवों की अपेक्षा अधिक सार्थक, सशक्त होते हैं। कठिन से कठिन ज्ञान, तथ्य, विचार, संदर्भ की स्पष्टता वास्तविक पदार्थ देखने से होती है उतना स्पष्टीकरण बोलने से या शब्दोच्चारण से संभव नहीं है। वास्तविक पदार्थों के लघु रूपों का प्रयोग करना चाहिए, कहने का तात्त्पर्य यह है कि वास्तविक पदार्थ यदि आकार में बड़ा है तो कक्षा में प्रस्तुत करना असंभव है लेकिन उनका नमूना/प्रारूप दिखाया जा सकता है। ये नमूने वास्तविक पदार्थ ही के समान होना चाहिए। इनकी सहायता से छात्रों की ऐतिहासिक, वैज्ञानिक या भौगोलिक सभी प्रकार के तथ्यों का ज्ञान सरलतापूर्वक कराया जा सकता। ये नमूने आकर्षक होने चाहि। अक्सर नमूनों का निर्माण स्वयं या छात्रों द्वारा करवाया जाना चाहिए। अतः नमूने चित्रों की अपेक्षा अधिक लाभदायाी होते हैं।

यदि नमूने न मिले तो चित्रों द्वारा स्पष्ट करना अनिवार्य है। इतना अवश्य है कि चित्रों से ज्ञान की प्राप्ति पूरी नहीं होती। चित्र खरीदना सबके लिए सरल एवं सहज है। मुल्य भी कम होते हैं। इतना सही है

कि चित्रों द्वारा ज्ञान वितरण में सुविधा रहती है। चित्र स्पष्ट, रंगीन आकर्षक होने चाहिए। इस प्रकार मानचित्र, रेखा चित्र, खाके, ग्राफ, चार्ट, बुलैटिन बोर्ड, संग्रहालय, जादू की लालटेन, श्यामपट्ट, वास्तविक चित्र, आदि दृश्य–सहायक सामग्री के अंतर्गत रखा जा सकता है।

दृश्य–श्रव्य सामग्रीः– दृश्य–श्रव्य सामग्री का संबंध उन साधनों से है जिनमें ज्ञानेन्द्रियाँ तथा कर्णेन्द्रियाँ दोनों का प्रयोग होता है। इस सामग्री के द्वारा क्रियायें एवं ध्वनियाँ एक साथ व्यवस्थित की जाती हैं। इनका प्रयोग रेडियो या मानचित्र/चित्र की अपेक्षा अधिक प्रभाव होता है। इस सामग्री में ऑवर हेड प्रोजेक्टर एक सफलतम उपकरण है।

5.6 निष्कर्ष

संक्षेप में कह सकते हैं ज्ञानात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति में सभी प्रकार के दृश्य–श्रव्य सामग्री का प्रयोग होता है। भावात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति में श्रव्य–सामग्री लाभदायी मानी जाती है। ये सामग्री/शिक्षण सहायक सामग्री व्यावधरिक रूप अधिगम परिस्थितियों का बोध कराते हैं। यदि इन साधनों का सही प्रयोग किया जाए तो लाभदायी है और यदि न किया जाए तो संगठित करने का कोई लाभ नहीं। इन उपकरणों को मात्र दिखावे या सजावट के लिए रखना औचित्य नहीं है। अनुचित प्रयोग से वाँछित लाभ नहीं उठा सकता श्रव्य–दृश्य उपकरण साधन है, साध्य नहीं। शिक्षण कार्य में सहायक साधनों के रूप में प्रयुक्त किया जाना चाहिए। संख्या भी आवश्यकता से अधिक नहीं होनी चाहिए। शिक्षण के समय निश्चित स्थान तथा उचित समय पर प्रयुक्त करना चाहिए। पाठयोजना बनाते समय निश्चय कर लेना अपेक्षित है, किस सहायक सामग्री (उपकरण) से कौनसा उद्देश्य पूर्ण हो सकता है।

कक्षा में एक से अधिक उपकरण लाना उचित नहीं और एक समय पर एक उपकरण का प्रयोग करना चाहिए। शिक्षण सहायक सामग्री को ढके रहना चाहिए। बारी बारी उतारकर पाठवस्तु को विकसित करना चाहिए।

5.7 आत्मजांच और परीक्षण :

1. ''शिक्षण सहायक सामग्री छात्र और अध्यापक दोनों की सहायता करती है। इस कथन की व्याख्या करते हुए शिक्षण–सहायक सामग्री का अर्थ स्पष्ट करें।
2. भाषा शिक्षण में दृश्य–श्रव्य साधनों का महत्त्व विवेचित करें।
3. भाषा शिक्षण में प्रश्नों का महत्त्व विवेचित करें।
4. शिक्षण सहायक सामग्री का प्रयोग करते समय अध्यापक को किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए।
5. श्रव्य–दृश्य साधन क्या होते हैं, इनकाक महत्त्व प्रतिपादित करें।
6. शिक्षण–सहायक सामग्री की भेदात्मकता पर विवेचना करें।
7. भाषा शिक्षण में श्रव्य–दृश्य साधनों का उचित प्रयोग किस प्रकार करना चाहिए?

ख वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. शिक्षण सामग्री से क्या तात्पर्य है ? संक्षिप्त शब्दों में लिखिए।
2. शिक्षण सामग्री से कौन सी इन्द्रियां क्रियाशील होती हैं ? लिखिए।
3. शिक्षण सामग्री में कौन–सा मुख्य शिक्षण सामग्री सूत्र अपनाया जाता है ? लिखिए।
4. शिक्षण सामग्री का पाठ्य वस्तु से क्या सह–संबंध है ? लिखिए।
5. शिक्षण सामग्री को मुख्य रूप कितने भागों में विभाजित किया जाता है ? लिखिए।

ग. रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न

1. श्रव्य सहायक सामग्री के उपयोग से शुद्ध .... में सहायता मिलती है।
2. भाषा प्रयोगशाला से शिक्षण भाषा .... का विकास किया जाता है।
3. दूरदर्शन के उपयोग से शुद्ध लेखन तथा शुद्ध .... का विकास किया जाता है।
4. दृश्य–श्रव्य सहायक सामग्री के उपयोग से शिक्षण में एक से अधिक .... को सक्रिय किया जाता है।
5. दृश्य–श्रव्य सामग्री शिक्षण की .... प्रविधि है।

(उच्चारण, कौशल, व्यक्तिगत, इन्द्रियों, सहायक)

घ. बहुविकल्पीय प्रश्न

1. शिक्षण सहायक सामग्री के मुख्य प्रकार :—

अ.	श्रव्य सामग्री	आ.	दृश्य सामग्री
उ	दृश्य–श्रव्य सामग्री	ऊ	उपरोक्त सभी

2. दृश्य–श्रव्य सामग्री का उपयोग :—

   अ. शिक्षण को रोचक बनाना

   ब. एक से अधिक इन्दियों को सक्रिय करना।

   स. शिक्षण कौशलों का विकास करना।

   ष. उपरोक्त सभी।

3. श्रव्य सामग्री का उपयोग :–

अ.	शुद्ध लेखन	ब.	शुद्ध उच्चारण
स.	दोनों ही	ष.	कोई नहीं

4. दृश्य स० सामग्री का उपयोग होता है :–

अ.	शुद्ध उच्चारण	ब.	शुद्ध लेखन
स.	शुद्ध पठन	ष.	कोई नहीं

5. संरचनाओं के विकास में प्रयुक्त करते हैं:–

अ.	वस्तुओं	आ.	प्रतिमानों
स.	आकृतियों	ष.	उपरोक्त सभी को

5.7 सहायक ग्रन्थ सूची :

1 हिन्दी शिक्षण : डॉ० शिक्षा चत्तर्वेदी

2. हिन्दी शिक्षण विधियाँ : एम. एम. भाटिया

....

हिन्दी शिक्षण में–चॉक बोर्ड, मॉडल टेलीजिन, चार्ट, आडियो टेप, कम्प्यूटर, ई–मेल, पी.पी.टी., वीडियो कानफ्रेंसिग तथा भाषा प्रयोगशाला का महत्त्व

6.1 भूमिका

6.2 उद्देश्य

6.3 हिन्दी शिक्षण के प्रयोगशाला का महत्त्व

6.4 निष्कर्ष

6.5. प्रश्नावली

6.6 सहायक ग्रंथ सूची

6.1 भूमिका

हिन्दी शिक्षण में अध्यापक अधिकांश कार्य प्रक्रिया पाठ्य पुस्तक द्वारा निर्वाहित करते हैं। निःसदेह पाठ्य पुस्तक शिक्षण का महत्वपूर्ण साधन है, परन्तु वही शिक्षण प्रभावशाली माना जाता है, जो आयुपर्यन्त तक अपना प्रभाव एवं महत्व बनायें सकता है। ऐसी अवस्था में पुस्तके ही पर्याप्त नहीं है। अध्यापन करते समय शिक्षक सोचते है कि विषय वस्तु छात्रों को समझ में आ रहीं है या नहीं। ऐसी अवस्था में अध्यापक विभिन्न साधनों का प्रयोग करते है। इन साधनों का वर्तमान शिक्षण प्रणाली बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाहित करते हैं। शिक्षण सूत्र की मान्यता है कि छात्रों को पढ़ाते समय स्थूल से सूक्ष्म की ओर बढ़ना चाहिए। कठिन से कठिन पाठ को इन साधनों द्वारा समझाना सरल हो जाता है।

अध्यापक शिक्षक प्रदान करते समय कभी चॉक बोर्ड का प्रयोग करता है, कभी चार्ट दर्शाकर स्पष्टीकरण करता है, कभी छात्रों को पाठ की यथार्थता टेलिविजन द्वारा समझाई जाती है। यदि पाठ दोहराना हो तो टेप रिकार्डर का प्रयोग एक आवश्यक भूमिका निभाता है। आजकल कम्पयूटर द्वारा शिक्षण प्रदान करना ओर भी सरल हो गया है। छात्र किसी भी विषय सामग्री को इस उपकरण द्वारा प्राप्त कर सकते है। प्राचीन समय में पत्रों द्वारा एक दूसरे से सह सम्बन्ध रहता था लेकिन वीडियों कान्फ्रेंसिग द्वारा एक / दो से अधिक लोगों के साथ वार्तालाप आमने समाने सम्भव हो गया है। किसी भी पत्रकारिता को प्रेषित करने में हफता / 15 दिन लगते थे, आज ई–मेल द्वारा पलभर में देश के किसी कोने में आवश्यक सूचना प्रेषित की जा सकती है। अतः इन उपकरणों का प्रयोग करने से शिक्षण प्रक्रिया अत्यन्त सहज हो गई है।

6.2 उद्देश्य

1. हिन्दी शिक्षण में विवेच्य उपकरणों / साधनों द्वारा अध्यापक की शिक्षण प्रक्रिया उद्देश्यपूर्ण हो जाती है।
2. शिक्षण में इन साधनों का प्रयोग करने से कर्णेन्द्रियां, नेत्र इन्द्रिया दोनों को लाभ होता है।
3. ये साधन अध्यापक और विद्यार्थी दोनों ही की दृष्टि से उद्देश्यपूर्ण है।
4. पाठ में वर्णित बातें/ विचार भलीप्राकर व सरलता पूर्वक याद हो जाता हैं।
5. छात्रों को चित्रों, माडलों, टेलिविजन द्वारा देशों एवं प्रदेशों की जानकारी प्रत्यक्ष रूप से हो जाती है।

6. इन साधनों को प्रयोग करने से विषय वस्तु में मूर्तत्ता आ जाती है। नारकीयता का प्रभाव उत्पन्न हो जाता है। छात्रों का ध्यान केन्द्रित करने में सहायक होते है।

7. पिछडे बालकों चित्र, टेलिविजन, मॉडल चार्ट, रेड़ियों आदि उपकरणों द्वारा नवीन तथ्यों (बातों) को सरलापूर्वक सिखया जा सकता है।

8. इन साधनों के उचित प्रयोग से छात्र शीघ्रता से सीखते हैं और सीखी बातों को देर तक याद रख सकते हैं। अनुभवों को सजीव रूप मिलता है। ज्ञान स्थाई हो जाता है।

9. छात्रों को कल्पना शक्ति व निरीक्षण शक्ति विकसित करने में सहायता मिलता है। इन साधनों से मौखिक प्रति की अपेक्षा छात्रों के अनुभव अधिक स्पष्ट और प्रभावपूर्ण हो जाते है।

10. इन शिक्षण साधनों से रूढिवादी शिक्षण की औचारिकता समाप्त हो जाती है।

11. इन साधनों से छात्रों का ध्यान केन्द्रित करके उन्हें सीखने। सिखने की क्रिया में प्रेरण तथा उत्सुक्ता मिलती है। छात्र ध्यानर्पूवक सुनते है।

12. इन साधनों की उद्देश्यात्मकता यह है कि छात्रों में क्रिया–सिद्धान्त विकसित हो जाता है। वे विभिन्न क्रियाये करने का अवसर पाते है। प्रश्न पूछते हैं, वाद विवाद करते है, चार्ट निर्माण करते है, मॉडल बनाते है।

13. भाषा प्रयोग शाला द्वारा छात्रों में उच्चारण प्रणाली को विकसित एव शुद्ध किया जाता है। रावण कौशल वर्द्धित होता है।

14. इन साधनों का उद्देश्य है कि छात्रों की उच्चरित भाषा को शुद्ध किया जा सके। नवीन साहित्यकारों का परिचय दिया जा सके।

15. टेप रिकार्ड की उद्देश्यात्मता यह है कि इनमें ध्वनियां बजाई जाती है और बार–बार सूनी जा सकती है।

16. श्यामपट्ट की उद्देश्यात्मक यह कि अध्यापक का अध्यापक इसके बिना निरर्थर है। भाषा शिक्षण इसके बिना अध्यापित करना कठिन है। को विशेष तथ्य हो, बिन्दु हो, व्याख्या हो, शब्दार्थ हो, इन सबाक स्पष्टीकरण चॉट बोर्ड से सम्भव है। लेखन अभ्यास इसी चॉक बोर्ड से कराया जाता है।

17. चार्ट द्वारा छोटी कक्षा के छात्रों को वर्णमाला ज्ञन प्रदान किया जाता है। सूक्ष्म वस्तु की अनुभूति कराने के लिए चार्ट की उद्देश्यात्मक बहुत बड़ी भूमिका निभाती है। पाठ में रोचकता लाई जाती है।

18. दूरदर्शन एक उद्देश्यपूर्ण उपकरण है। इसके द्वारा दृश्य–श्रव्य दोनों प्रकार की सामग्री समझाई जाती है। इसी प्रकार वीडियों भी एक शिक्षण उपकरण है जिसमें बोलने वाले की अभिनीत करता हुआ देखा जाता है।

19. कम्प्यूटर आधुनिक तकनीकी शास्त्र सबसे बड़ा योगदान है। छात्रों की अनुक्रियाओं को नियन्त्रित करना इसका उद्देश्य है।

20. भाषा प्रयोगशाला का उद्देश्य छात्रों के उच्चरण की शुद्ध करना और ध्वनियों का ज्ञान देना।

6.3 हिन्दी शिक्षण में–चॉक बोर्ड, मॉडल टेलीजिन, चार्ट, आडियो टेप, कम्प्यूटर, ई–मेल, पी.पी.टी., वीडियो कानफ्रेंसिग तथा भाषा प्रयोगशाला का महत्त्व

1. **चॉक बोर्डः–** दृश्य साधनों में चॉक बोर्ड या श्यामपट्ट की प्रमुखता विशेष रूप से मानी जाती है। कक्षा कोई भी या किसी भी स्तर की हो उसमें इस उपकरण का होना अनिवार्य हे। चॉक बोर्ड/ श्यामपट्ट के बिना कक्षा मात्र एक बड़े/छोटे कमरे के समान मानी जाती है। भाषा शिक्षण हो या अन्य विषय इस उपकरण के बिना शिक्षण न्याय संगत नहीं बन सकता। यह शिक्षण का सरल, सुलभ और उपयोगी साधन है। अध्यापक का अभिन्न अंग और घनिष्ठ मित्र यही उपकरण माना जाता है। एक सफल अध्यापक का चॉक बोर्ड पर अपना विशेष अधिकार रहता है। इसके बिना शिक्षण/अध्यापन करना कठिन हो जाता है। जिस प्रकार एक कुशल कलाकार तूलिका और कैनवास के बिना अपूर्ण है उसी भांति अध्यापक भी इस चॉक बोर्ड के बिना अपूर्ण है। चॉक का एक टुकड़ा और श्यामपट्ट परस्पर शरीर और आत्मा जैसा संबंध रखते हैं। 'पी.सी.रेन.' ने इसके विषय में लिखा है– ''चित्र की अपेक्षा चॉकबोर्डांकित तथ्य उत्तम उपकरण है।'' इसकी आवश्यकता हिन्दी शिक्षण की दृष्टि से इस प्रकार विवेचित की गई हैः–

1. पाठ् पुस्तक के पश्चात सबसे महत्त्वपूर्ण उपकरण चॉक बोर्ड/श्यामपट्ट ही माना जाता है। अध्यापक पाठ्य पुस्तक पढ़ाते समय पाठ में आये मुख्य बिन्दु, नवीन शब्द एवं उनके अर्थ, प्रसिद्ध मुहावरे, व्याख्या के बिन्दु तथा सूक्तियों को अंकित (लिखकर) करके उनका स्पष्टीकरण करता है। चूंकि छात्र अनुकरण से सीखते हैं, इसलि एक–एक छात्र को श्यामपट्ट के निकट बुलाकर लिखने का अभ्यास कराता है। इससे छात्रों में सहयोगिता एवं क्रियाशीलता बना रहती है।
2. छोटी कक्षाओं में विद्यार्थियों को अक्षरों की बनावट सिखाने के लिए इसका प्रयोग सहायक बनता है। इस पर छात्रों के लिए सुलेख का नमूना प्रस्तुत किया जाता है।
3. श्यामपट्ट पर रेखा चित्र बनाकर कठिन विषय को सरल और ग्रहणशील बनाया जाता है। अध्यापक रेखाचित्र में अभ्यास होने के बाद इन्हें किसी चित्र/मानचित्र की आवश्यकता नहीं पड़ती।
4. पठित पाठ का सारांश या उसके मुख्य संकेत (बिन्दु) श्यामपट्ट पर लिखकर छात्रों को पाठ का संदेश/अर्थ ग्रहण करने में सुविधा होती है। पाठ में महत्त्वपूर्ण प्रसंग आते हैं, उनकी तरफ अध्यापक सफलतापूर्वक ध्यान आकर्षित करता है। श्यामपट्ट पर लिखकर छात्रों का ध्यान स्वतः उस ओर आकर्षित होता है।
5. रचना कार्य में कहानी, निबंध, पत्र लेखन, संवाद आदि लिखवाते समय चॉक बोर्ड पर अनिवार्य संकेत दिये जाते हैं।
6. श्यामपट्ट का प्रयोग छात्रों की कल्पना दृष्टि से भी आवश्यक है। वे अपने अनुभव कल्पना की सहायता से स्मरण करके लिखते हैं जिससे छात्रों की शब्द प्रतिभा को अच्छी शक्ति मिलती है। और जिन छात्रों की दृष्टि प्रतिभा सशक्त है उनकों देखी हुई बातें देर तक याद रहती हैं।
7. व्याकरण शिक्षण में व्याकरणिक तत्त्व, परिभाषयें समझाने में यह उपकरण अधिक सशक्त और उपयोगी है।
8. चॉक बोर्ड पर विभिन्न चित्र, चार्ट, मान चित्र दिखाये जाते हैं।

9. श्यामपट्ट की इन विशेषताओं (महत्त्व) को समझाने के पश्चात यह ध्यान में रखना अनिवार्य है कि चॉक बोर्ड उपयोगी कैसे हो सकता है –

1. चॉक बोर्ड का रंग काला होना अनिवार्य है धरातल चिकना होना चाहिए ताकि लिखना सरल, स्पष्ट रहे। इसका अकार बड़ा होना चाहिए।
2. हिन्दी शिक्षण करते समय जो लिखा जाये वो इतना स्पष्ट, शुद्ध, आकर्षक और बड़ा होना चाहिए कि प्रत्येक छात्र को दिखाई दे। कोई भी त्रुटि छात्रों को हानि पहुंचा सकती है।
3. श्यामपट्ट लेख छात्रों के लिए आदर्श लेख होता है अतः यह तभी संभव है जब निम्न बातों का विशेष ध्यान रखा जाए :

   1. अक्षरों में समानता 2. उनकी सिधाई

3. अक्षरों का समानान्तर पंक्ति में होना।
4. श्यामपट्ट पर लिखत हुआ मौखिक रूप से शुद्ध रूप में व्यक्त करना अनिवार्य है, तभी शिक्षक सफल रहता है।
5. श्यामपट्ट पर लिखा अंत में मिटा देना चाहिए। लिखने की गति धीमी नहीं होनी चाहिए, इससे कक्षा में व्यवस्था, अनुशासन रहता है।
6. लिखते समय चॉक की ध्वनि नहीं होनी चहिए पढ़ाते समय चॉक के साथ लिखना अनुचित है।
7. श्यामपट्ट पर लिखते समय अध्यापक को इस भान्ति खड़ा होना चाहिए कि श्यामपट्ट छिप न जाए और छात्र लिखा हुआ देखने में असमर्थ रहें।

   संक्षेप में कह सकते हैं यह साधन अत्यंत सस्ता, सुलभ और उपयोगी है। इसकी उपयोगिता में इसे कक्षा का अनिवार्य भाग/अंष बनाया है, इसके बिना कक्षा शिक्षण असंभव है, अन्य उपकरण हो या न हो कार्य चल सकता है, परंतु इसके बिना नहीं। यह छात्र और अध्यापक दोनों के लिए उपयोगी है।

2. **चार्ट :–** चार्ट की प्रयोगिकता अध्यापक को शिक्षण करने में बड़ी सहायता मिलती है। रंगीन चार्टों की सहायता से न केवल शिक्षण कार्य सरल बनता है अपितु छात्रों का ध्यान केन्द्रण करने में सहायक बनता है। इसकी सहायता से कठिन विषय सरल बनते हैं। प्राथमिक स्तर पर वर्णमाला ज्ञान चार्ट की सहायता से दिया जाता है। चार्ट एक दृष्य साधन है। दृष्य इन्द्रियों द्वारा सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त करने में चार्ट सहायक बनते हैं। उच्च कक्षाओं में रस विवेचन, अलंकार प्रदर्शन एक भेद–प्रमेंद, हिन्दी साहित्य का इतिहास आदि पढ़ाने में, काल विभाजन दर्शाने में, वाक्य निर्माण पद्धति का ज्ञान देने में इनसे संबंधित चार्ट निर्मित करके कक्षा में प्रस्तुत किया/किए जाते हैं जिससे संबंधित विषय पढ़ाना सरल और ठोस हो जाता है। चार्टों में रंगों का प्रयोग होना चाहिए लेकिन ये रंग आकर्षक और प्रभावशाली होने चाहिए।

चार्टों का प्रयोग प्रत्येक विषय को पढ़ाने में सफलतापूर्वक किया जाता है। पाठ का आवश्यकता या

महत्त्व को ध्यान में रखते हुए अध्यापक को चार्ट स्वयं बनाने चाहिए। चार्ट का कागज़ सुदृढ़ (मज़बूत) होना चाहिए।

महत्त्वः

1. इनके प्रयोग से छात्र पाठ में रुचि लेते हैं।
2. नवीन पाठ को अभिप्रेरित करने, प्रस्तावना निकलवाने, मुख्य बिन्दु को स्पष्ट करने, पाठ को विकसित करने में चार्टों का प्रयोग महत्त्वपूर्ण माना जाता है।
3. इनसे कक्षा में शिक्षण वातावरण यथार्थ बनता है।
4. छात्रों में इनके प्रयोग से निरीक्षण और विश्लेषण क्षमता में वृद्धि होती है।
5. मौखिक व्याख्या की अपेक्षा चार्टों द्वारा छात्र शीघ्र सीखते हैं।
6. छात्रों का शिक्षण अधिगम सजीव बनता है।

   चार्टों के महत्त्व को ध्यान में रखकर इसकी प्रयोगात्मकता उचित ढंग से प्रयुक्त/निर्वाहित होनी चाहिए। छात्रों को भी चार्ट बनाने के लिए उत्साहित करना चाहिए।

3. **मॉडलः–** हिन्दी शिक्षण साधनों में मॉडल (प्रारूप)/नमूना एक अनिवार्य दृश्य साधन है। इसे प्रतिमान प्रतिकृति, प्रतिमूर्ति, प्रारूप के नाम से भी जाना जाता है। मॉडल किसी वास्तविक वस्तु का (लघुस्तर) क्रियात्मक प्रतिरूप होता है। इसके माध्यम से छात्रों को वास्तविक वस्तु को बोध कराया जाता है। इसके माध्यम से सूक्ष्म एवं अदृष्य वस्तुओं को स्थूल एवं दृश्यात्मक रूप में दर्शाया जाता है। शिक्षण प्रदान करते समय कुछ वस्तुएँ ऐसी होती हैं जिनको कक्षा में लाना संभव नहीं या जिनका अपना एक निश्चित स्तर पर मॉडल (प्रतिरूप) बनाकर कक्षा में प्रस्तुत किया जाता है। उदाहरण स्वरूप 'गाय' का पाठ पढ़ाते समय वास्तविक रूप में गाय को कक्षा में छात्रों को दर्शाना संभव नहीं परंतु उसका मॉडल बनाकर प्रस्तुत किया जा सकता है। या 'ताजमहल' पढ़ाते समय उसको उसके निश्चित स्थान से लाना संभव नहीं परंतु बाज़ार से उसका प्रतिरूप (मॉडल) लाकर छात्रों को उसके विषय में शिक्षण देना संभव है और अध्यापन प्रभावशाली बन जाता है। मॉडल त्रि–आयामी होते हैं इसलिए चित्र से अधिक महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावशाली माने जाते हैं। मॉडल के द्वारा लंबाई–चौढ़ाई, गहराई, बाहरी भीतरी– सब आकारों और अंगों को स्पष्ट करता है। इस तरह यथार्थता का बोध कराने में मॉडल एक सही और उचित साधन है।

स्थूल ज्ञान प्रदान करने में एक सहायक साधन है। मॉडल/नमूने वही कार्य करते हैं जो मूल (मौलिक/यथार्थ) वस्तु द्वारा संभव है। यह अधिक आकर्षक और सजीव होता है। क्योंकि यह तीनों आयामों को स्पष्ट करता है।
मॉडल मिट्टी, चॉक मिट्टी, प्लाइवुड, गत्ते या लकड़ी का बनाया जाता है। वर्तमान शिक्षण प्रणाली में मॉडल प्रभावशाली साधन है। भाषा ज्ञान, अक्षर बोध कराने में मॉडल महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उदाहरण स्वरूप डाकघर मॉडल संवाद का बन सकता है, रावण–दहण का मॉडल (प्रतिरूप) विजयदशमी (दशहरा) का प्रदर्शन करता है। वर्णात्मक निबंध प्रस्तुत करने में मॉडल (नमूना) सहायक बनते हैं।

उच्चारण दोष के सुधार में मॉडल की सहायता से मुख और ग्रीवा का प्रतिरूप बनाकर प्रत्येक वर्ण के उच्चारण स्थान को दिखाया जा सकता है। यह प्रयोगिकता माध्यमिक स्तर पर अधिक उपयोगी है। मॉडल का प्रयोग तब उपयोगी है जब वास्तविक पदार्थ उपलब्ध हो। इनके प्रयोग से अनेक जिज्ञासाओं का समाधान होता है।

4. **टेलिविजनः–** 20वीं शताब्दी का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शैक्षिक उपकरण दूरदर्शन है। इस उपकरण की सहायता से दृष्य और श्रव्य दोनों प्रकार की सामग्रियों का मिला–जुला रूप प्रसारित किया जाता है। इसके द्वारा बोलने वाले को सुना भी जाता है और साथ–साथ उसका अभिनय करते हुए देखा जा सकता है। दूरदर्शन चलचित्र के समान माना जाता है। प्रशासनिक माध्यम होने कारण चलचित्र की व्यापारिक कुत्साओं से मुक्त है। दूरदर्शन के लिए बालोपयोगी फिल्में बनाई जाती हैं/बनानी चाहिए। भिन्न भाषाई तत्त्वों का ज्ञान देने के लिए अच्छे, कुशल अध्यापकों द्वारा 'दूर–दर्शन' (टेलिविजन) पर शिक्षण कार्य की व्यवस्था की जानी चाहिए। छात्रों/बच्चों के लिए कार्यक्रम व्यवस्थित किए जाने चाहिए। इन सबके लिए बालपनों वैज्ञानिकों का सहारा लेना चाहिए इसका महत्त्व मनोरंजनात्मक, सुचनात्मक एवं शैक्षिक रूप में देखा/समझा गया है। महंगा होने के कारण रेडियो का स्थान नहीं ले सकता परंतु कार्यक्रम की उपयोगिता को देखकर इसका महत्त्व बहुत अधिक माना जाता है। उपग्रह की सहायता से दूर दराज़ स्थानों में आयोजित राष्ट्रीय कार्यक्रम छात्रों तक पहुँचाये जाते हैं। प्रत्येक प्रशासनिक टेलिविजन एल.सी.डी, थियेटर निर्धारित किये जाते हैं/गये हैं जिनपर छोटी या बड़ी कक्षाओं के शिक्षा संबंधी कार्यक्रम प्रसारित किये जाते हैं। छात्रों को अभिव्यक्ति की विभिन्न शैलियों का ज्ञान देना संभव है।

5. **आडियो टेपः–** यह साधन में शिक्षण साधनों में से एक अनिवार्य साधन माना जाता है। इसमें वे सभी विशेषतायें हैं। जो रेडियो या लिंग्वाफोन में है। उच्चारण, वाचन, बोल चाल, अभिव्यक्ति की विभिन्न शैलियों, साहित्यिक गतिविधियों तथा विभन्न विषयों का ज्ञान प्रदान करने में सहायक है। कोई भी व्यक्ति/अध्यापक अपनी आवाज़, पाठ को किसी भी समय इसमें भरकर (टेप करके बार–बार एवं कभी भी सुन सकता है। इसका प्रयोग करने से छात्रों को अपनी त्रुटियों/अशुद्धियों को सुधारने का अवसर मिलता है। वे सचेत हो जाते हैं। अनुकरण से सीखने का यह सही साधन है। किसी भी उच्चारण को लेकर भाँति दूर की जाती है। महान पुरूषों के प्रवचन, नेताओं के भाषण, प्रसिद्ध लेखकों के लेख, कवितायें बार बार सुनाने में इसका प्रयोग होता है। पहले एक बहुमूल्य उपकरण होने के कारण इसका प्रयोग प्रत्येक विद्यालय में करना संभव नहीं था परंतु आज की 21वीं सदी में इसका प्रयोग सुविधाजनक होने के साथ–साथ अत्यंत सूक्ष्म हो गया है। देखा जाए तो इसका स्थान मोबाइल ने लिया है। ध्वनि तुलना करने में यह उपकरण सहायक है। अतः 'संक्षेप' में कह सकते हैं कि यह भाषा के विभिन्न तत्त्वों के शिक्षण तथा उनमें कुशलता/प्रवीणता लाने में अधिक सहायक हैं।

6. **कम्प्यूटरः–** शिक्षण क्षेत्र में वैज्ञानिकता ने इतने शोध–अनुसंधान किये हैं जिनके कारण अनुदेशन, अध्यापन, पारम्परिक संपर्कता अत्यन्त सहज और प्रभावशाली हो गई/हो रही है। 'कम्प्यूटर' इसी तकनीकी शास्त्र का सबसे बड़ा योगदान है, जिसने मानव जाति, सामाजिक व्यवस्था, राजकीय शासन प्रणाली, कार्यालय, शिक्षा केन्द्र आदि सब स्थानों पर अपना विजयी झण्डा गाढ़ दिया है। शिक्षण क्षेत्र में अनुदेशन प्रणाली शैक्षणिक तकनीकें सरल से सरलतम हो गए हैं। निःसंदेह इनका निर्माण उद्योगों और शासन क्षेत्र तक सीमित था परन्तु शिक्षण क्षेत्र को सर्वाधिक प्रभावशाली किया। श्रव्य दृष्य साधनों में 'कम्प्यूटर एक सर्वोत्तम और नवीनतम साधन है। इस साधन से शिक्षण को सार्थक, सशक्त

और सफल बनाया जाता है। हिन्दी शिक्षण में इसका विशेष योगदान एवं विशेषता मानी जाती है। शिक्षा क्षेत्रों में इसका प्रयोग बहुमुखी है। कम्प्यूटर के वर्ड (शब्द) प्रोसेसिंग (प्रकरणशील) सॉफटवेर्यस द्वारा हिन्दी भाषा लिखने तथा पढ़ने संबंधी कौशलों का विकास किया जा सकता है। गद्य–पद्य शिक्षण के पाठों को सरलतापूर्वक पढ़ाया जा सकता है। इसके द्वारा छात्र इस उद्देश्य की पूर्ति कर सकते हैं किस शिक्षण योजना से 'अनुदेश उद्देश्य' प्राप्त हो सकता है, छात्र शिक्षण योजना का चयन कर सकता है और छात्रों की अनुक्रियाओं को नियंत्रित कर सकता है। अतः अनुदेशनात्मक पद्धति का एक उपकरण है जिसका प्रयोग व्यक्तिगत–अनुदेश के लिए है। शोध क्रियाओं को अधिक प्रभावित किया है।

'कम्प्यूटर' को विद्युत मस्तिष्क भी कहते हैं। यद्यपि अन्य यंत्रों (मषीनों) में पाठ्य–वस्तु को छोटे–छोटे अंशों में क्रमबद्ध करके प्रस्तुत किया जाता है लेकिन इस यंत्र (कम्प्यूटर) को पूर्व व्यव्हारों के आधार पर अनुकूल अनुदेषनों का चयन करना पड़ता है, यह निर्णय भी कम्प्यूटर द्वारा किया जाता है। इसकी विशेषता अनेक रूपों में देखी जाती हैः–

1. कार्डों पर सूचनाओं को संचित करता है। टेप पर भी इनको संचित करता है।
2. अभिक्रमित–अनुदेशनों को भी संचित रखता है–फाइल बनाकर।
3. संचित सूचनाओं में से अपेक्षित प्रदतों का चयन करता है।
4. विद्युत टंकन मशीन की सहायता से सूचनाओं का बाह्य सम्प्रेशन करता है।
5. इसके बिना शिक्षण की कल्पना कठिन है।

यह दृष्य श्रव्य उपकरणों के समान यह भी शिक्षण सहायक साधन माना जाता है। इस प्रयोगशाला में 10/12 टेप रिकार्डर होते हैं, जिससे छात्र भाषा अध्ययन के लिए विविध प्रकार का अभ्यास करते हैं। भाशा प्रयोगशाला एक सामान्य कक्ष का पूरक है जहां छात्र अतिरिक्त समय में टेप किये गये पाठों को सुनते हैं, उनका अनुकरण करते हैं, भाशा कौषलों का विकास करते हैं। यहां टी.वी., वी.सी.आर, भाषा यंत्र, मॉडल, चार्ट आदि भी होते हैं। इन यंत्रों की सहायता से छात्र न केवल उच्चारण प्रणाली में वृद्धि पाते हैं अपितु उनका श्रवण, पाठन, वाचन (मौखिक) कौशल निपुण हो जाता है।

जिस भाषा प्रयोगशाला में जो जो उपकरण होते हैं, उसी के अनुरूप कार्य प्रणाली आधारित रहती है। उन्हीं उपकरणों के अनुरूप उनका संचालन होता है। अनेक प्रकार के प्रक्षेपों से कक्षा स्तर के अनुसार सामग्री प्रक्षेपित की जाती है। कमरे में दृश्य सामग्री के समय पर्याप्त अंधेरा होना अनिवार्य है। आज समस्त विकसित एवं विकासशील देशों के स्कूलों में इस प्रयोगशाला की व्यवस्था की जा रही है। इसका महत्त्व विद्वानों ने इस प्रकार निर्धारित किया हैः–

1. इसके माध्यम से छात्र व्यक्तिगत क्षमता के अनुसार सीखते हैं।

2. इसके द्वारा व्यक्तिगत और सामूहिक शिक्षा का समन्वय होता है।

3. छात्र अनेक बार पाठ को दोहरा सकता है। जब तक पूरी तरह सीख नहीं जाता।

4. व्यक्तिगत रूप से एक–एक छात्र को निर्देश दिये जाते हैं।

5. इसमें प्रत्येक सीट के आस–पास पार्टीशन लगा होता है जिससे छात्र एक दूसरे को देख नहीं पाते और ध्यान अपने पर केन्द्रित करते हैं।

6. छात्र को अपनी रुचि, योग्यता और गति के साथ सीखने का अवसर मिलता है।

7. प्रयोगशाला मौखिक भाषा एवं पठन की शिक्षा की दृष्टि से बहुत लाभप्रद सिद्ध हुई है।

8. छात्र इस तरह से सीखने में सामान्य कक्ष की अपेक्षा ज़्यादा समय व्यतीत कर सकता है।

9. छात्र अपनी सीट पर बैठकर भी दूसरे छात्र के मौखिक पठन को सुनकर उसकी सहायता कर सकता है।

10. छात्रों को संगीत द्वारा सीखने के लिए भी अभिप्रेरित किया जाता है।

11. इसमें छात्र पहले शब्दों और वाक्यों को सुनता है। ध्वनियों को अन्तर के आधार पर पहचानता है और फिर उच्चारित करता है।

12. उच्चारण के समय यदि दोष दिखाई देता है तो निर्देषक निर्देष देता है कि शब्द के शुद्ध रूप को सुने, फिर उच्चारित करे। अर्थात शुद्ध उच्चारण की दश्शिट से लाभदायी है।

13. लिखित भाषा प्रषिक्षण के लिए महत्त्वपूर्ण है। छात्र कहानी सुनते हैं, अपने शब्दों में लिखते हैं, और इस तरह सही रूप से रचना/सृजना करना सीखते हैं।

14. भाषा न केवल मस्तिष्क से संबंधित नहीं है अपितु हृदय से भी संबंधित है, अतः भाषा तत्त्वों का ज्ञान प्रयोगशाला में दिया जा सकता है लेकिन काव्य का ज्ञान संभव नहीं।

सारांश में कह सकते हैं कि इसमें छात्र क्रियाशील होकर सीखता है। व्याकरणिक तत्त्व, मौखिक पठन के लिए लाभदायी है। इसके द्वारा पहले भाषा सीखते हैं फिर साहित्य का अध्ययन करते हैं।

8. **पी.पी.टी.:–** शिक्षण प्रणाली में इसका महत्त्व इस रूप में देखा जाता है कि छात्रों को कक्षा के प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण के किस रूप का पठन कराया गया। पूर्व माध्यमिक स्तर पर साहित्य के विषय में क्या समझाया गया, माध्यमिक स्तर पर कितना ज्ञान दिया गया। छात्रों के अधिगम का मुल्यांकन करने हेतु यह साधन अधिक उपयोगी है। पी.पी.टी. में पूरे सत्रः में प्रत्येक कक्षा स्तर पर कितनी क्रियायें, आयोजन, महत्त्वपूर्ण दिवस आयोजित किये गये, सत्र के आरंभ में कितने नवीन छात्रों ने प्रवेश लिया, कितने छात्र विद्यालय छोड़कर गये, शिक्षक वर्ग की संख्या, पुस्तकालय में पुस्तकों की संख्या, विद्यालय संबंधी नये सोपान, विद्यालय प्रचालन में परिवर्तन एवं परिवर्द्धन – इन सबका तिथि अनुसार संगठन करके पी.पी.टी बनाया जाता है। सी.डी. या पेन ड्राइव में फीड किया जाता है ताकि आवश्यकता पड़ने पर परीक्षण किया जाये कि किस सत्र में क्या–क्या प्रगतिशील सोपान (कदम) उठाये गये थे।

किन–किन कमियों को पूरा किया गया इत्यादि – इन सबका विवरण क्रमबद्ध करके दिखाया जाता है जो शिक्षा संस्था के लिए लाभदायी है।

9. **वीडियो कान्फ्रेन्सिगः–** यह एक ऐसी शिक्षण सामग्री प्रदान करने का साधन है जिसमें मोबाइल या कम्प्यूटर की सहायता से एक से अधिक लोगों के साथ संबंध आमने सामने स्थापित होता है। अध्यापक इस साधन द्वारा छात्रों को घर में बैठे विषय संबंधी ज्ञान पढ़ा सकता है। आवश्यक निर्देशन दे सकता है। इस साधन से समय की बचत होती है। विकट स्थिति में इसकी सहायता महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। इस साधन की महता वर्तमान समय में अधिक देखी जाती है क्योंकि व्यक्ति के पास समयाभाव है – और दूर–दूर नहीं जा सकते, अतः ऐसी अवस्था में वीडियो कान्फ्रेन्सिग एक उपयोगी साधन है।

6.4 निष्कर्ष :

निष्कर्षत : कह सकते हैं कि शिक्षण सुगम, सरल, प्रभावशाली और सजीव बनता है। पठन, पाठन, मौखिकता श्रवणशीलता, मूर्त रूप इन सबको निर्वाहित करना सुगम और बोधगम्य हो जाता है। छात्रों को शीघ्र सीखने में तथा देर तक याद करने में सहायक होते हैं। इन उपकरणों द्वारा छात्र गंभीर से गंभीर, कठिन से कठिन विचार एवं बाते सहजता से सीख सकते हैं। ये सामग्री ऐसी होती है कि बिना विवेचन/व्याख्या किये छात्र सहजता से समझ जाते हैं। इस बात का ध्यान रखना अनिवार्य है सामग्री वास्तविक और शुद्ध होनी चाहिए। विषय संबंधित होनी चाहिए।

6.5 आत्मजांच और परीक्षण

1. हिन्दी शिक्षण में चॉक बोर्ड का अर्थ स्पष्ट करके इसका महत्त्व स्थापित करें।
2. मॉडल की उपयोगिता वर्तमान शिक्षण पद्धति में विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है–क्यों ? विवेचना करें।
3. टेलिविजन और ऑडियो टेप का अन्तर स्पष्ट करके इनका महत्त्वप्रतिपादित करें
4. कम्प्यूटर ने वर्तमान शिक्षण प्रणाली को पूरी तरह परिवर्तित कर दिया–कैसे ? इसकी विवेचना करके इसका महत्त्व वर्णित करें।
5. भाषा प्रयोगशाला भाषा–शिक्षण को परिपवक्ता प्रदान करता है–विवेचित करें।
6. पी.पी.टी और वीडियो कान्फ्रेन्सिग से क्या तात्पर्य है ? इसका महत्त्व वर्णित करें।

ख. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. चॉक बोर्ड से क्या अभिप्राय है ? लिखिए।
2. चॉक बोर्ड किस प्रकार की सामग्री है ? लिखिए।
3. अध्यापक और पाठ्य पुस्तक के पश्चात सबसे महत्त्वपूर्ण उपकरण कौन–सा माना जाता है। लिखिए।
4. टेप रिकार्डट किस तरह लाभदायी है ?
5. कम्प्यूटर को किस तरह का आयाम माना जाता है।

ग. रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न

1. भाषा कक्ष में .... वस्तु, चित्र, चार्ट होने चाहिए।
2. टेप रिकार्डट से .... की सीमाओं को दूर किया जाता है।
3. वीडियो कान्फ्रेंसिंग .... से अधिक व्यक्तियों के बीच होती है।
4. मॉडल द्वारा .... वस्तु का दर्शन कराया जाता है।
5. प्राथमिक कक्षाओं में वर्णमाला का ज्ञान .... से कराया जाता है।

(वास्तविक, चार्ट, दो से अधिक, त्रुटियों, सही)

6.6 सहायक पुस्तक सूची–

1. हिन्दी शिक्षण विधियांः एम.एम. भाटिया
2. हिन्दी शिक्षण : डा. के.सी. जैन
3. हिन्दी शिक्षणः डा. सुरेन्द्र सिंह कादियान

....

पाठ योजना

7.1 भूमिका

7.2 उद्देश्य

7.3 पाठ योजना का अर्थ और परिभाषा

7.4 पाठ योजना की आवश्यकता और महत्त्व

7.5 इकाई पाठ योजना

7.5.1 इकाई पाठ योजना का अर्थ एवं परिभाषा

7.5.2 इकाई पाठ योजना निर्माण के सामान्य सिद्वान्त

7.5.3 इकाई पाठ योजना की उपयोगिता

7.5.4 इकाई पाठ योजना निर्माण की सीमाएं

7.5.5 इकाई पाठ योजना का नमूना

7.6 मासिक पाठ योजना

7.7 वार्षिक पाठ योजना

7.8 निष्कर्ष

7.9 आत्मजांच और परीक्षण

7.10 सहायक ग्रन्थ सूची

7.1 भूमिका

प्रिय पाठकों ! हम अब पाठ–योजना की चर्चा करने जा रहे है। इसके अन्तर्गत आपको इसके महत्त्व अभिप्राय इकाई पाठ योजना तथा दैनिक पाठ योजना के बारे में बताएगें।

कार्य के प्रत्येक क्षेत्र में योजना की आवश्यकता पड़ती है। मकान बनाना हो, तो योजना तैयार करनी पड़ती है। योजना के बिना अभीष्ट सफलता नहीं मिल सकती। हमारी सरकार भी देश के आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कशतिक निर्माण के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना, द्वितीय पंचवर्षीय योजना आदि बनाती रहती है। अध्यापक को भी इसी प्रकार पाठ पढ़ने से पहले योजना तैयार करनी पड़ती है। यदि शिक्षक पाठ–शिक्षण के लिए भली–भांति तैयार नहीं, तो विद्यार्थी की समझ में भी कुछ नहीं आता।

किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व उसकी एक निर्धारित योजना बनाना अधिक उत्तम और कार्य की सफलता में सहायक होता है। ठीक इसी भाँति सफल शिक्षण के लिए पढ़ाने से पूर्व पाठ–योजना बनाना अधिक उत्तम रहता है। प्रचलित प्रशिक्षण में पाठ योजना हर्बर्टीय पदो ंके आधार पर ही बनायी जाती है। प्रशिक्षणार्थियों को इसे भली–भाँति समझना चाहिए।

योजना अच्छे शिक्षण के अनिवार्य तत्वों में एक है। प्रत्येक के लिए कौशल और अभ्यास की आवश्यकता होती है। शिक्षण भी एक कला है, इसके लिए भी कौशल और अभ्यास अत्यन्त आवश्यक है। अध्यापक को अपने विषय का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। उसे इतिहास की शिक्षण–विधियों से परिचित होना चाहिए और उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली होना चाहिए। इतना सब कुछ होने पर भी अध्यापक तब तक शिक्षण–कार्य में सफल नहीं हो सकता, जब तक वह कक्षा में जाने से पहले सावधनी से पाठ योजना नहीं बनाता। एक नये अध्यापक के लिए तो पाठ योजना अत्यन्त आवश्यक है। सुनियोजित पाठ योजना के बिना उसमें आत्मविश्वास उत्पन्न नहीं हो सकता। शिक्षण एक नियोजित रूप से की जाने वाली प्रक्रिया है। कक्षा में शिक्षण से पूर्व अध्यपाक के द्वारा पढ़ाए जाने वाले पाठ के शिक्षण लक्ष्यों, विधियों, उपकरणों के बारे में निर्णय कर लेता है। अर्थात पठनीय वस्तु का विधिवत् विवेचन कर लेता है, इसे ही पाठ योजना कहा जाता है।

7.2 उद्‌देश्य

इस पाठ को ध्यान पूर्वक पढ़ने के बाद, आप

- पाठ योजना की परिभाषा को स्पष्ट कर सकेंगें।
- पाठ योजना की आवश्यकता और महत्व को स्पष्ट कर सकेंगें।
- पाठ योजना के गुणों की व्याख्या कर सकेंगें।
- इकाई योजना के अभिप्राय को स्पष्ट कर सकेंगें।
- दैनिक पाठ योजना के अर्थ को बतला सकेंगें।

7.3 पाठ योजना का अर्थ एवं परिभाषा

कक्षा में जाने से पूर्व अध्यापक द्वारा पढ़ाए जाने वाले पाठ के शिक्षण लक्ष्यों को निश्चित करना, लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए पाठ्य–वस्तु के तथ्यों को व्यवस्थिति करना, यह निश्चित करना कि कौन–सा तथ्य किस शिक्षण–साधनों के प्रयोग के बारे में निर्णय लेना, पाठ पढ़ाते समय अध्यापक क्रियाएँ व छात्र–क्रियाएँ क्या होगी, इसका विचार करना, कक्षा में क्या समस्याएँ आ सकती हैं, उनका समाधान कैसे होगा, बच्चों को जो कुछ पढ़ाया जाएगा उसके माध्यम से शिक्षण–लक्ष्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हुई है, इस बात की जाँच करने के लिए मूल्यांकन की तकनीकें क्या होगी, इन सबका विवरण 'पाठ–योजना' कहलाता है। कहने का तात्पर्य है कि अध्यापक अपने दैनिक शिक्षण कार्य को कुशलतापूर्वक सम्पन्न करने के लिए जो योजना बनाता है उसे पाठ योजना कहते है। पाठ योजना का सामान्य प्रयोजन यह है कि कक्षा में प्रवेश करने के पूर्व पाठ सम्बन्धी बातों का विधिवत् ब्यौरा तैयार कर ले। मौखिक शिक्षण में तथ्यों का संतुलन नहीं रहता और भूलों की संभावना बनी रहती है। पाठ योजना के माध्यम से पाठ वैज्ञानिक क्रम से बढ़ता है। कब, क्या, कैसे, कितने समय में प्रस्तुत करना है, इसका ज्ञान शिक्षक को पाठ योजना के माध्यम से होता है।

बांसिग ने पाठसूत्र की व्याख्या प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि पाठ योजना उस कथन को शीर्षक प्रदान करता है, जो इसका वर्णन करता है कि क्या उपलब्धियाँ प्रदान करनी हैं और किन साधनों द्वारा उनको कक्षा की क्रियाओं के फलस्वरूप प्राप्त करती है। भाटिया के अनुसार पाठ योजना से पता चलता है कि बच्चों ने क्या पढ़ लिया है, आगे किस दिशा में उनके पथ प्रदर्शन का कार्य किया जाये और तत्काल क्या पढ़ाया जायें। इस प्रकार जो कुद भी प्राप्त या अर्जित करना है, उसका विवरण यह योजनाओं में निहित रहता है। पाठ योजना में बालक के अर्जित ज्ञान, प्रश्न, विधि, सामग्री, साधन आदि का समावेश रहता है।

अध्यापन का पेशा बड़ी ईमानदारी, लगन, निष्ठा एव तैयारी का पेशा है। उसे कक्षा में प्रवेश करने के पूर्व पाठ की तैयारी कर लेनी चाहिए। डेविस ने लिखा है कि पाठ की तैयारी होनी चाहिए। शिक्षक के लिए कोई अन्य वस्तु इतनी घातक नहीं है, जितनी कि पाठ की तैयारी का कम होना। अध्यापन के पूर्व पठनीय वस्तु को विधिवत् विवेचन कर लेना चाहिए। वेलेन्टाइन डेविस ने लिखा है कि 'छात्र प्रशिक्षण में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात व्याख्यान सुनना नहीं, पाठ तैयार करना तथा उसे प्रस्तुत करना है। ए डिक्की का मत है कि सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया में पाठ योजना सर्वाधिक फलदायक पक्ष है।

प्रश्न : – क्या आप बता सकते हैं कि पाठ योजना से आप क्या समझते हैं?

- आई. के. डेवीज़ के अनुसार, 'पाठ योजना शिक्षण से पूर्व की अवस्था में किये गये नियोजन का स्वाभाविक प्रतिफल है।'
- एन. एल. बासिंग के अनुसार, 'शिक्षण के उद्देश्य की सिद्धि हेतु शिक्षक जिन क्रियाओं का सहारा लेता है, उसके आलेख को पाठ योजना कहा जाता है'

पाठ योजना के सम्बन्ध में डेवीज ने कहा है कि 'कक्षा मे जाने से पूर्व शिक्षक को पूरी तैयारी कर लेनी क्योकि शिक्षक की प्रगति के लिए कोई बात इतनी बाधक नहीं है जितनी की शिक्षक की अपूर्ण तैयारी।'

बिनिंग और बिनिंग के अनुसार 'दैनिक पाठ योजना के निर्माण में उद्देश्यों को परिभाषित करना, पाठय वस्तु को चयन करना उसे क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित करना और प्रस्तुतीकरण की विधियों तथा प्रक्रिया का निर्धारण करना।'

भाटिया तथा भाटिया के अुनसार, ''पाठ योजना से पता चलता है कि बालकों ने क्या पढ़ लिया है, आगे किस दिशा में उनके पथ–प्रदर्शन का कार्य किया जाए और तत्काल क्या पढ़ाया जाए।''

उपयुक्त चर्चा के आधार पर सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि शिक्षक ने भी कुछ भी अर्जित करना है, बालकों के अर्जित ज्ञान, नवीन ज्ञान, प्रश्न, शिक्षण विधि, साध्न एवं सामग्री आदि का विवरण पाठ योजना में होता है।

7.4 पाठ योजना की आवश्यकता ओर महत्व

आइए, अब इसके महत्व से परिचित हो लें। शिक्षण प्रक्रिया की सफलता का मुख्य आधार अच्छी तरह से सोच विचार कर बनाई गई पाठ योजना ही है। पाठ योजना शिक्षण पथ में यात्रा कर रहे अध्यापक का पग–पग पर मार्गदर्शक करती है। इसके अभाव में अध्यापक के भटक जाने का भय बना रहता है। डेविस महोदय ने पाठ योजना की आवश्यकता बताते हुए कहा है– 'शिक्षक के लिए कोई अन्य वस्तु इतनी घातक नहीं है जितनी कि पाठ की तैयारी का कम होना।' पाठ योजना बनाने से ही पाठ पूरी तरह से तैयार हो पाता है। इसकी आवश्यकता व महत्व को हम निम्नलिखित दशष्टि से स्पष्ट कर सकते हैं–

- **पाठ योजना बनाने से शिक्षण**–कार्य नियोजित ढंग से होता है और शिक्षण कार्य सुव्यवस्थित ढग से चलता है।
- **पाठ योजना में शिक्षण** –लक्ष्यों का निर्धारण पहले ही कर लिया जाता है। अतः शिक्षण प्रक्रिया सोद्देश्य रहती है। उन्ही लक्ष्यों को ध्यान में रखकर शिक्षण कार्य सम्पन्न किया जाता है।
- पाठ योजना बनाते समय छात्रों के प्रारम्भिक व्यवहार को ध्यान में रखा जाता है। अतः शिक्षण छात्रों के मानसिक स्तर के अनुसार रहता है।
- अध्यापक पाठ को पढ़ाने से पहले ही विषयवस्तु को सुव्यवस्थित कर लेता है। अतः विषयवस्तु ठीक क्रम मे आगे बढ़ती है। 'सरल से कठिन की ओर' ज्ञात से अज्ञात की ओर आदि शिक्षण सूत्रों का पालन होने से शिक्षण मनोवैज्ञानिक रूप से होता है।
- शिक्षण विधियों के बारे में पहले से निर्णय ले लेने से अध्यापक को कक्षा में पढ़ाते समय कोई परेशानी नहीं होती है। वह उचित समय पर उचित विधि की सहायता से विषयवस्तु का स्पष्टीकरण करता है। इससे शिक्षण प्रभावशाली बन सकता है।
- पाठ योजना बनाते समय अध्यापक यह भी विचार कर लेता है कि पाठय वस्तु के किस तथ्य को स्पष्ट करने के लिए किस दश्श्य श्रव्य उपकरण की सहायता ली जाएगी। इससे वह पहले से ही उपकरण को तैयार कर लेता है और कक्षा में सही समय पर उनका प्रयोग करता है। उसका यह कार्य शिक्षण को सजीव एवं रोचक बनाता है।
- अध्यापक पाठ योजना के पहले ही यह निर्णय ले लेता है कि कक्षा में अध्यापक क्रियांए क्या होगी और छात्र क्रियाएं क्या होगी। इससे विद्यार्थियों को सक्रिय रखने में सहायता मिलती है।
- पाठ योजना छात्रों को नियन्त्रित रखने व कक्षा में अनुशासन स्थापित रखने में सहायता करती है।
- पाठ योजना छात्रों को नियन्त्रित रखने व कक्षा में अनुशासन स्थापित रखने में सहायता करती है।
- पाठ योजना छात्रों को नियन्त्रित रखने व कक्षा में अनुशासन स्थापित रखने में सहायता करती है।
- पाठ योजना में सभी कार्य पूर्वनियोजित होने से समय का अपव्यय नहीं होता है।
- अध्यापक पाठ योजना बनाने से शिक्षण कार्य की पूर्व तैयारी कर लेता है। अतः कक्षा में पूर्ण आत्मविश्वास से शिक्षण कार्य सम्पन्न करता है।
- पाठ योजना में मूल्यांकन प्रक्रिया का भी पूर्वनिर्धारण होने से शिक्षण कार्य की सफलता का मापन व मूल्यांकन करने में सहायता मिलती है। शिक्षण लक्ष्यों की प्राप्ति हुई है या नहीं, इस बात की जांच हो जाती है।
- अध्यापक की पूर्ण तैयारी होने के कारण शिक्षण कार्य स्वाभाविक, नियमित, व्यवस्थित एवं सन्तुलित रूप से चलता है।

पाठ योजना के गुण

- पाठ योजना में निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिए :
- पाठ योजना लिखित होनी चाहिए।
- इसे पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित होना चाहिए।
- इसमें सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्यों का स्पष्ट रूप से उल्लेख हो।

- पाठय वस्तु के चयन में पर्याप्त सावधनी होनी चाहिए।
- पाठ गत क्रियाओं का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए।
- पाठ योजना बालक की रूचि, क्षमता, प्रवश्त्ति एवं योग्यता के अनुरूप होनी चाहिए।
- पाठ योजना उत्तम शिक्षण विधियों पर आधारित होनी चाहिए।

इसमें उदाहरणों एवं सहायक सामग्रियों का प्रयोग होना चाहिए, ताकि पाठ सरल, रूचिकर एवं सहज ग्राह्म हो।

- पाठ योजना व्यक्तिगत विभिन्नता के आधार पर बनाई जाये।
- पाठ योजना में प्रत्येक स्थल को अपेक्षित समय देना चाहिए
- पाठ योजना प्रेरक एवं प्रोत्साहन प्रदान करने वाली होनी चाहिए।
- उसमें परिस्थिति से तादात्म्य स्थापित करने की क्षमता होनी चाहिए।
- इसमें बालक की क्रियाओं के चयन एवं निदेशन की भी व्यवस्था होनी चाहिए।
- पाठ योजना बालकों के जीवन से सम्बन्धित होनी चाहिए।
- पाठ योजना लोचदार व नमनीय हो, ताकि परिस्थितियों के अनुरूप उसमें परिवर्तन लाया जा सके।
- पाठ योजना सोपानों में विधक्त हो।
- इसे सुन्दर एवं स्पष्ट होना चाहिए।
- इसमें अभ्यास के प्रश्नों को स्थान मिलना चाहिए।
- इसमें गश्ह–कार्य का उल्लेख होना चाहिए।
- पाठ योजना में आलोचना के लिए स्थान हो। आलोचना के अनुसार इसमें आगे सुधार होना आवश्यक है।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. पाठ योजना का अर्थ क्या है?
2. पाठ योजना की आवश्यकता एवं महत्व का वर्णन करें?
3. दैनिक पाठ योजना और इकाई योजना में अन्तर स्पष्ट करें?

7.5 इकाई पाठ योजना

कोई भी कार्य तब तक पूर्ण रूप से सम्पन्न नहीं होता जब तक वह योजनाबद्ध न हो। अतः पूर्व नियोजित कार्य ही लक्ष्य प्राप्ति में सफल होता है। दैनिक जीवन में योजना द्वारा किए गए कार्य से धन, समय व शक्ति का सदुपयोग होता है। शिक्षा जिस पर बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का कार्यभार है, उसकी कल्पना योजनाहीन कैसे कर सकते हैं। जहां शिक्षा को सहज प्राप्य बनाने के लिए नई–नई आधुनिक शिक्षण विधियों एवं उपकरणों को अपनाया जाता है, वहां ईकाई योजना व दैनिक पाठ योजना भी शिक्षा को सहज, सरल एवं

व्यवस्थित बनाने का सशक्त साधन है। शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति उसे योजनाबद्ध करने में ही है, जिसे पहले इकाईयों के रूप में करने के पश्चात् आंशिक रूप से दैनिक पाठ योजना के रूप में किया जाता है। इकाई योजना एवं दैनिक पाठ योजना दोनों ही भाषा शिक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है जिनका परिचय निम्नलिखित है–

इकाई योजना का अर्थ एवं परिभाषा

भाषा शिक्षण के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम निर्धारित किया जाता है। इस समूचे पाठ्यक्रम को जानने के लिए उसे भागों अथवा इकाइयों में विभाजित किया जाता है। प्रत्येक भाग अथवा इकाई के आगे उपागम व इकाइयां निर्मित की जाती है। अतः समूचे पाठ्यक्रम को विभिन्न इकाईयो में क्रमायोजित करके शिक्षण प्रदान किया जाता है यह मनोवैज्ञानिक पहुच है जो सम्पूर्ण से अंश की ओर के शिक्षण सूत्र का प्रतिपादन करती है। उदाहरणतः जब हम किसी मूर्ति को देखते हैं तो सम्पूर्ण रूप से उसका बिम्ब हमारे मानस पटल पर पड़ता है। तत्पश्चात् उसके विभिन्न अवयवों का विश्लेषण करते है। शिक्षण प्रक्रिया में इकाई योजना में इस सिद्धान्त को अपनाया जाता है।

अतः पाठ्यक्रम की विषय सामग्री को इकाइयों में बांट कर प्रत्येक इकाई के शिक्षण उद्देश्य, विषय–वस्तु तथा शिक्षण विधियां निर्धारित कर शिक्षण योजना बनाई जाती है। इन्हीं इकाईयों एवं उप इकाइयों के आधार पर पाठ्यक्रम की वार्षिक, मासिक, साप्ताहिक व दैनिक पाठ योजना निर्मित की जाती है साधारण शब्दों में इकाई योजना से अभिप्राय, विषय सामग्री को इकाइयों व उपइकाइयों में बांट कर उनकी योजना बनाना है।

इकाई योजना की परिभाषा भिन्न भिन्न पाश्चात्य विद्वानों द्वारा इस प्रकार से की गई है– इकाई योजना शिक्षा की वह विधि है, जिसके द्वारा विषय वस्तु को, शिक्षण विधियों को तथा शिक्षण प्रयुक्तियों को इस ढंग से गठित किया जाता है कि सीखने और सिखाने की परिस्थितियों को प्रभावी बनाया जा सके। कुछ विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति हेतु विद्यार्थियों को ऐसी एक दूसरे की पूरक अनुभूतियों से युक्त क्रियाएं कराना, जो मिलकर एक इकाई बन जाती है।

किसी केन्द्रीय विचार के आधार पर किसी विषय वस्तु (इकाई) का उप विभाजन क्रियाओं के रूप में इस प्रकार से करना कि छात्र–छात्राओं को ज्ञान और कौशल की प्राप्ति हो सके। राजस्थान की राज्य शिक्षा संस्थान ने मातश्भाषा शिक्षण सम्बन्धी जो सदंर्शिका प्रकाशित की है, उसमें इकाई योजना की परिभाषा इन शब्दों मे दी गई है– इकाई पाठ– योजना सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया का एक स्पष्ट चित्र है। इसमें पाठ्य इकाई से सम्बन्धित उद्देश्यों एवं बालक बालिकाओं में संदशनीय अपेक्षित योग्यताओं के निश्चय के साथ साथ उन्ही के अनुकूल वस्तु शिक्षण प्रक्रिया और मूल्यांकन को नियोजित किया जाता है। उपयुक्त विवेचन का तात्पर्य यह है कि शिक्षण प्रक्रिया को अधिक से अधिक उद्देश्यनिष्ठ, उपयोगी, सुरुचिपूर्ण, व्यवस्थित, निश्चित एवं पूर्ण बनाने की दशष्टि से इकाई योजना का अपना महत्त्व है।

इकाई योजना बना लेने के बाद कक्षा मे उस इकाई को पढ़ाने के लिए उसे कई उप इकाइयों या दैनिक पाठों में बाँट दिया जाता है। हर एक कालांश की अलग दैनिक पाठ योजना होती है। हिन्दी भाषा शिक्षण में इकाई को प्राय : 3 या अधिक पाठों में विभक्त करके पढ़ाया जाता है। इसलिए जब किसी पाठ की इकाई

योजना बन जाये तो शिक्षक को उस इकाई के अनुसार दैनिक पाठ योजनाएँ बना लेनी चाहिए। इकाई योजना बनाते समय प्रत्येक इकाई की उप इकाइयों या दैनिक पाठ रूपों का उल्लेख इकाई में कर दिया जाता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि एक इकाई कितने दिनों में पढ़ाई जायेगी।

इकाई योजना निर्माण के सामान्य सिद्धान्त

इकाई योजना निर्माण में सामान्यत : निम्नलिखित सिद्धान्तों को अपनाया जाना चाहिए।

- पाठ्यक्रम की विषय सामग्री को तीन से पांच इकाईयो में बांटा जाना चाहिए। इससे अधिक इकाइयों में बांटने से इकाई के उद्देश्य, विषय–वस्तु, शिक्षण विधियां, छात्रों की क्रियाएं निर्धारित करने में असुविधा रहेगी। इनसे कम इकाइयों में बांटने से इसका परम्परागत पाठ्यक्रम से अन्तर नहीं लगेगा।
- शिक्षण प्रक्रिया की सहजता के लिए प्रत्येक इकाई को उपइकाइयों में बांट कर शिक्षण योजना बनानी चाहिए।
- इकाई योजना में विषय वस्तु व शिक्षण प्रक्रिया विद्यार्थी के मानसिक स्तर एवं रुचियों व योग्यताओं के अनुरूप होनी चाहिए।
- इकाई योजना में विषय सामग्री का क्रम सरलता से कठिनता की ओर होना चाहिए।
- प्रत्येक इकाई की उपइकाइयों का आपस में सह–सम्बन्ध होना चाहिए।
- प्रत्येक इकाई के शिक्षण उद्देश्य स्पष्ट रूप से निर्धारित किए जाने चाहिए
- इकाई योजना में शिक्षण विधियों का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए।
- इकाई योजना का निर्माण उपकरणों व साधनों के प्रबन्ध एवं व्यवस्था के अनुसार किया जाना चाहिए।
- इकाई योजना निश्चित समय में सम्पन्न हो जानी चाहिए। उप इकाईयां बनाते हुए यह भी ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक उप इकाई का शिक्षण निश्चित अवधि में समाप्त हो जाए।
- इकाई योजना लचीली होनी चाहिए ताकि शिक्षण के आवश्यकतानुसार उसमें परिवर्तन लाया जा सके।
- इकाई योजना से सम्बन्धित क्रियाएं काल्पनिक नहीं बल्कि जीवन से सम्बन्धित होनी चाहिए ताकि उसमें समन्वय स्थापित किया जा सके।
- इकाई योजना में उपइकाइयों के शिक्षण के उपरान्त मूल्यांकन व्यवस्था होनी चाहिए।

उपर्युक्त सिद्धान्तों के अनुसार पाठयक्रम की विभिन्न इकाइयों व उपइकाइयों का निर्माण किया जा सकता है।

इकाई पाठ योजना की उपयोगिता

भाषा शिक्षण में इकाई योजना की उपयोगिता निम्नाकित है–

- **उद्देश्यों का स्पष्टीकरण–** हिन्दी शिक्षण में विभिन्न सामान्य व विशिष्ट उद्देश्य हैं। इकाई योजना निर्माण द्वारा इसका स्पष्टीकरण हो सकता है। कि कौन से उद्देश्य किस इकाई में प्रमुख हैं। प्रत्येक इकाई तथा उपइकाइयों के भाषा शिक्षण उद्देश्य विशिष्ट रूप से पूर्ववत् निर्धारित किए जाते हैं, जिससे दैनिक शिक्षण में सुविधा रहती है। अध्यापक को ज्ञात होता है। कि जो वह उपइकाइयों का शिक्षण प्रदान कर रहा है। उसका मुख्य उद्देश्य क्या है।

- **पाठ्यक्रम में क्रमबद्धता–** पाठ्यक्रम की विषय सामग्री को इकाई योजना निर्माण के सिद्धातों के अनुसार विभिन्न इकाइयों में रखा जाता है जिससे पाठ्यक्रम में क्रमबद्धता आती है। विषय सामग्री की इकाइयों व उपइकाइयों की वार्षिक, मासिक, साप्ताहिक व दैनिक शिक्षण योजना बनाई जा सकती है। उससे अध्यापक व विद्यार्थी दोनों को पाठ्यक्रम समझने में सुविधा रहती है।

- **शिक्षण विधियों का निर्धारण–** भाषा शिक्षण में गद्य, पद्य तथा व्याकरण के शिक्षण की विभिन्न शिक्षण विधियां है। गद्य की विभिन्न विधाओं जैसे कहानी, उपन्यास, निबन्ध, पत्र आदि की भिन्न–भिन्न शिक्षण विधियां है। इकाई योजना में यदि गद्य, पद्य तथा व्याकरण के आधार पर इकाईयां बना कर उन्हें उपइकाइयों में बांटा जाए तो अध्यापक को शिक्षण विध्यिां अपनाने में सुविधा रहती है।

- **शिक्षण में रोचकताः–** इकाई योजना से शिक्षण में विद्यार्थियों का सक्रिय योगदान रहता है। अध्यापक नीरस समझे जाने वाले विषयों को तभी योजनाबद्ध करके रुचिकर बना लेता है। अध्यापक को इकाई योजना द्वारा यह जानने में भी सहायता मिलती है कि उसे अपने शिक्षण कार्य में कहां तक सफलता मिली।

- **पाठय पुस्तक में एकरूपता–** पाठ्य पुस्तक में गद्य व पद्य के विभिन्न पाठों का संकलन होता है। उन्हें इकाइयों में विभाजित कर उनमें एकरूपता लाई जा सकती हैं, जैसे निबन्ध, कहानी, भाषा साहित्य आदि की अलग–अलग इकाइयां बना दी जाएं फिर दैनिक शिक्षण के लिए उन्हें उपइकाइयों में बांटा जा सकता है। इससे गद्य व पद्य के पाठों में समग्रता के साथ–साथ एकरूपता बनी रहेगी।

- **विषय सामग्री की सुबोध्ता–** इकाई योजना से विषय सामग्री सुव्यवस्थित होती है। इकाई को सरल से कठिन की ओर के शिक्षण सूत्र के अनुसार उपइकाइयों में विभाजित किया जाता है जिसमें विषय को सशिलष्ट रूप से प्रस्तुत किया जाता है। उचित शिक्षण विधियों व उपयुक्त उपकरणों द्वारा कठिन ग्राह्य विषय भी सरल बनते हैं।

- **शिक्षण प्रक्रिया की सुव्यवस्था–** इकाई योजना शिक्षण प्रक्रिया को व्यवस्थित बनाती है। अध्यापक को पूर्व निर्धारित करना होता है। कि उसने कब, क्या और कैसे पढ़ाना है। छात्रों को भी इस बात का ज्ञान होता है कि उन्होने कब क्या पढ़ना है। इससे शिक्षण प्रक्रिया स्वाभाविक क्रम से आगे बढ़ती है।

- **शिक्षण उपकरणों का सुप्रबन्ध** – दश्श्य श्रव्य साधन व अन्य उपकरण शिक्षण प्रक्रिया को सहज बनाते हैं। इकाई योजना मे यह पूर्व निश्चित होता है कि अध्यापक ने कौन से विषय कब पढ़ाने हैं, उनसे सम्बन्धित साधनों व उपकरणों के प्रबन्ध में सुविधा रहती है। अध्यापक पहले से ही चार्ट, चित्र, मॉडल, टेपरिकार्डर आदि का प्रबन्ध कर लेता है। यदि विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान करने के

लिए विद्यालय से बाहर किसी स्थान पर जाना हो ता उसकी भी पूर्व व्यवस्था की जाती है।

- **विद्यार्थियों में सक्रियता–** विद्यार्थियों के कक्षा में सक्रिय रहने से ही शिक्षण प्रक्रियाएं निर्धारित कर लेता है। अतः इकाइयों का निर्माण विद्यार्थी की रूचि व योग्यता के आधार पर किया जाता है जिससे विद्यार्थी सक्रिय रहता है।

- **समय की बचत –**प्रत्येक इकाई के शिक्षण के लिए निश्चित किया जाता है तथा उसी में ही शैक्षणिक कार्य सम्पन्न करना होता है। अध्यापक को अनुमान होता है कि उसने कब तक इकाई पूर्ण करनी है इससे समय व्यर्थ नहीं जाता है। अतः निश्चित अवधि में कार्य सम्पन्न हो जाता है।

- **स्वानु**शासन – इकाई योजना विद्यार्थी को शिक्षण प्रक्रिया में सक्रिय रखती है, जिससे वह स्वयं शिक्षण प्रक्रियाओं में व्यस्त रहता है। अध्यापक को कक्षा में अनुशासन के लिए प्रयत्न नहीं करना पड़ता।

- **मूल्यांकन–** इकाई योजना मूल्यांकन प्रक्रिया का आवश्यक तत्व है। इससे अध्यापक को अपनी शिक्षण विधियों की सफलता एवं विद्यार्थियों की योग्यता एवं रूचियों की जानकारी साथ साथ होती रहती है। इकाई योजना द्वारा वांछित परिवर्तन किए जा सकते है। अतः इकाई योजना के अभाव में वांछित सुधार संभव नहीं।

इकाई योजना निर्माण की सीमाएं

- भाषा **शि**क्षण के सभी उद्देश्य एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। कई बार जिस उद्देश्य को लेकर शिक्षा कार्य किया जाता है। उसके स्थान पर किसी अन्य उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है, जिससे शिक्षण कार्य की सफलता का निर्णय नहीं किया जा सकता।

- भाषा के पाठ्यक्रम में भाषा कौशलों का ज्ञान व साहित्य की विभिन्न विधाएं सम्मलित है जो एक दूसरे से सम्बन्धित होती हैं। इनका इकाइयों व उपइकाइयों मे विभाजन कठिन प्रतीत होता है। जैसे भाषा के विभिन्न कौशलों; सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखने का ज्ञान साहित्य की विधाओं द्वारा दिया जा सकता है जिन्हें अलग नहीं किया जा सकता।

- अध्यापक इकाई की विभिन्न उपइकाइयों के आधार पर शिक्षण विधियां अपनाता है लेकिन उसकी शिक्षा विधियां योजना केन्द्रित अधिक होती हैं। अध्यापक को योजनानुसार शिक्षण प्रदान करना होता है। इसमें प्रायः विद्यार्थियों की रुचियों व आवश्यकताओं की उपेक्षा की जाती है।

- कक्षा में योजनाबद्ध शिक्षण से नीरसता आ जाती है। कक्षा के शैक्षणिक वातावरण में अध्यापक व विद्यार्थी स्वतन्त्र रूप से विचारों का आदान–प्रदान नहीं कर सकते। शिक्षण कार्य को निश्चित अवधि में समाप्त करने के कारण स्वतन्त्र भावभिव्यक्ति की अपेक्षा की जाती है।

- भाषा शिक्षण के विभिन्न सामान्य व विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए छात्रों को भिन्न–भिन्न साहित्यिक क्रियाएं करनी होती है। किसी एक उद्देश्य के अन्तर्गत कई क्रियाओ को इकाई योजना में एक साथ सम्मिलित किया जा सकता है।

- अध्यापक द्वारा इकाई योजना में पूर्व निर्धारित किया जाता हे कि कौन से विषय का ज्ञान कितने समय तक प्रदान करना है। भाषा शिक्षण में अभ्यास का विशेष महत्व है। परन्तु किसी योजना में अभ्यास के समुचित अवसर प्रदान नहीं किए जा सकते।

इन सीमाओं के बावजूद इकाई योजना की उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता। इकाई योजना निर्माण में अध्यापक को उपर्युक्य सीमाओं के प्रति सतर्क रहने की आवश्यकता है छात्रों की रूचियों, योग्यताओं को ध्यान में रखकर उन्हें स्वतन्त्र रूप से भाव प्रकाशन के तथा अभ्यास कार्य के अवसर प्रदान करने चाहिए। इकाई योजना अवश्य ही भाषा शिक्षण के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. इकाई योजना से क्या अभिप्राय है।
2. इकाई योजना की उपयोगिता स्पष्ट कीजिए।

इकाई पाठ योजना का नमूना

ऊपर जो इकाई पाठ योजना का विवेचन किया गया है। उनके आधार पर इस योजना के भिन्न भिन्न भागों को इस प्रकार लेखबद्ध किया जा सकता है–

1. पाठ के शीर्षक का चुनाव
2. उद्देश्य एवं अपेक्षित योग्यताएँ –

   (क) उद्देश्य

   (ख) बालक में संदर्शनीय अपेक्षित अभियोग्यताएँ।

इन उद्देश्यों और योग्यताओं का सम्बन्ध कौशलों से होगा, समझने की बातों से होगा, मूल्यों से होगा तथा रसानुभूति से होगा। पाठ को पढ़ाते समय विद्यार्थी जिन उद्देश्यों और योग्यताओं को प्राप्त कर सकते है, केवल उनका ही उल्लेख किया जाना उचित है।

3. वस्तु–संकलन (विषय–वस्तु)
4. शिक्षण प्रक्रिया –

   (i) अध्यापक की क्रियाएँ

   (ii) छात्रों की क्रियाएं
5. मूल्यांकन –

   (i) पाठान्तर्गत,

   (ii) पाठोपरान्त।

इकाई पाठ–योजना

विषय–हिन्दी (गद्य) दिनांक–भाद्र 9, 2026 वि0 पाठ–शीर्षक कक्षा–7(अ)

उद्देश्य एवं अपेक्षित उपलब्धियाँ		शिक्षण प्रक्रिया			मूल्यांकन	
उद्देश्य	अपेक्षित योग्यताएँ	वस्तु संकलन	अध्यापक क्रियाएँ	छात्रा क्रियाएँ	पाठान्तर्गत	पाठोपरान्त
1.भाषा तत्वों का ज्ञान प्राप्त करना (क) उच्चारण (ख) वर्तनी (ग) शब्द और मुहावरे कहना प्रश्न)	1. छात्रा इन्हे पहचान सकेगा। 2. वह इनका पुनः स्मरण कर सकेगा। (2) वाक्य प्रयोग की त्राुटियां पकड़ सकेगा। 4. वह इनमें अन्तर कर लघुउतरात्मक सकेगा। 5. वह इनके उदाहरण दे सकेगा। 6. वह इनका विश्लेषण कर सकेगा। 7. वह इनका संश्लेषण कर सकेगा।	(क) जान्हवी, जणि अग्र। (ख) दरिद्र, निर्धन (ग) 1. क्रुहासा 2. जान्हवी 3. वह इनमें अशुद्व रूपों 4. स्नेह 5. संकल्प 6. जीर्ण 7. मलिन 8. दरिद्र 9.अप्रतिम 10. निर्धन 11. वय 12. बरौनी	(क) (1) आदर्श वाचन, (2) श्यामपट पर उच्चारण का 3. प्रत्यक्ष (ख) श्यामपट पर वर्तनी का विश्लेषण (ग) वाक्य प्रयोग सन्धि विच्छेद उपसर्ग प्रत्यक्ष प्रदर्शन आदि के द्वारा अर्थ निकलवाना।	(क) (1) अनुकरण वाचन (2) उच्चारणाभ्यास (ख) वर्तनीअभ्यास (ग) अध्यापक द्वारा प्रयुक्त विश्लेषण पर अर्थ बताना तथा प्रयोग करना।	(क) (1) अनुकरण वाचन के समय शुद्धता का पता लगाकर विधियों के आधार शुद्ध वर्तनी लिखने शब्दों का वाक्यों में (ग) अपने वाक्यों में प्रयोग करना।	(क) वस्तुनिष्ट प्रश्नों द्वारा (ख) (1) वस्तुनिष्ट प्रश्नों द्वारा (ख) श्यामपट पर विषयक के लिए प्रश्नों द्वारा। (बोध परीक्षा प्रश्न, वस्तु विश्लेषण
2. विषय वस्तु का ज्ञान प्राप्त (क) तथ्य और घटनाएँ (ख) वस्तुनिहित संवेदनाएँ।	1. छात्र इन्हे पहचान सकेगा। 2. छात्र इनका पुनः स्मरण कर सकेगा। 3. वह इनकी तुलना कर सकेगा। 4. वह इनका अन्तर कर सकेगा। 5. वह इनका परस्पर सम्बन्ध बता सकेगा।	1. भिखारिन का देखकर द्रवित होना। 2. देवर और भाभी का वार्त्तालाप।	बोध परीक्षा तथा वस्तु विश्लेषण प्रश्न जिनका सम्बन्ध तथ्यों, घटनाओं संवेदनाओं एवं चरित्रागत विशेषताओं के साथ होगा।	छात्रा प्रश्नो को सहायता से सम्बन्धित विषय वस्तु को समझकर उत्तर देंगे।	(1) बोध परीक्षा प्रश्न (2) वस्तु विश्लेषण।	(1) वस्तुनिष्ठ प्रश्न । (2) आवृत्यात्मक प्रश्न ।
3. सुनकर अर्थ ग्रहण करना।	विद्यार्थी – 1. धैर्यपूर्वक सुन सकेगा। 2. सुनने के शिष्टाचार का पालन कर सकेगा। 3. मनोयोगपूर्वक सुन सकेगा। 4. शब्दों, मुहावरों आदि	सम्पूर्ण पाठ।	1. आदर्श वाचन। 2. अन्य छात्रों का अनुकरण वाचन। 3. बोध परीक्षा प्रश्न। का उत्तर देना।	1. ध्यानपूर्वक सुनकर अर्थ एवं भावग्रहण करना। 2. अर्थ एवं भाव समझाते हुए बोध परीक्षा प्रश्नों	वाचनोपरान्त बोध परीक्षा	प्रश्न

	का प्रसंगानुकूल अर्थ समझ सकेगा। 5. स्वराघात, बलाघात एवं स्वर के आरोह अवरोहके अनुसार उनके अर्थ ग्रहण कर सकेगा। 6. थ्वचारों और तथ्यों में सम्बन्ध स्थापित कर सकेगा। 7. केन्द्रीय भाव तथा सारांश ग्रहण कर सकेगा।				
4. पढ़कर अर्थ या भाव ग्रहण करने की योग्यता प्राप्त करना। (क) सस्वर वाचन। (ख) मौन वाचन।	विद्यार्थी – 1) शुद्ध उच्चारण, उचित स्वराघात, बलाघात एवं स्वर के उतार चढ़ाव के साथ पढ़ सकेंगे। 2) विषयानुसारगतिपूर्वक पढ़ सकेंगे। 3) धैर्यपूर्वक तथा मनोयोगपूर्वक पढ़ सकेंगे। 4) ग्रहणशीलता की मनः स्थिति बनाये रख सकेंगे। 5) भावानुसार वाचन कर सकेंगे। 6) शब्दो मुहावरों व उक्तियों का प्रसंगानुकूल अर्थ व भाव समझ सकेंगे।	सम्पूर्ण पाठ	1) सस्वर आदर्श वाचन। 2) छात्रों को सस्वर वाचन हेतु निदेश। 3) छात्रों को मौन वाचन हेतु निदेश।	1) सस्वर अनुकरण वाचन 2) विचारों को ग्रहण करने हेतु शब्दों आदि का प्रसंग अनुसार अर्थ एवं भाव को ग्रहण करने के लिए मौन वाचन	1) सस्वर अनुकरण वाचन के बाद बोध परीक्षा प्रश्न। 2) मौन वाचन के बाद वस्तु विश्लेषण प्रश्न।
5. बोलकर अभिव्यक्त करने की योग्यता प्राप्त करना।	विद्यार्थी बोध–परीक्षा तथा वस्तु विश्लेषण प्रश्नों का उत्तर देते समय तथा कहानी कहते समय– 1. शुद्ध तथा स्पष्ट भाषा में और स्वर के उतार–चढ़ाव सहित अपने–आप को अभिव्यक्त करेंगे। 2. विराम–चिन्हों का ठीक–ठीक प्रयोग करेंगे।	सम्पूर्ण पाठ	1. बोध परीक्षा प्रश्न तथा वस्तु विश्लेषण प्रश्न। 2. छात्रों को कहानी सुनाने के लिए कहना। छात्रों को घटना सम्बन्धी कुछ प्रश्नों का उतर लिखने के लिए कहा जायेगा।	1) छात्रों द्वारा प्रश्नों के उतर देना 2) छात्रों द्वारा कहानी सुनाना। छात्र अपने विचार और कल्पना के आधार पर इन प्रश्नों का उतर लिखेगा। सामग्री के रूप में ममता	1) प्रश्नों के उतर सुनकर 2) कहानी सुनकर 1) छात्र अतिरिक्त वाचन

	3. सुश्रव्य वाणी में अपने आपको अभिव्यक्त करेंगे। 4. व्याकरण–सम्मत भाषा का प्रयोग करेंगे। 5. शब्दों, मुहावरों व उक्तियों का प्रसगानुकूल			कहानी को पढेगे। 2) छात्र अपने कहानी संग्रह में ऐसी कहानियों का संग्रह करेगें। विद्यार्थियों के हृदय में संवेदना तथा विनोद का अनुभव होना।		
6. लिखकर अभिव्यक्त करने की योग्यता प्राप्त	विद्यार्थी – सकेंगे। 1) सुपाठय लिख 2) आवश्यक गति से लिख सकेंगे। 3) शुद्व वर्तनी लिख सकेंगे। 4) उचित ढंग से विराम –चिन्हों का प्रयोग कर सकेंगे। 5) व्याकरण सम्मत शुद्व भाषा का प्रयोग कर सकेगे। 6) सरल मुहावरेदार भाषा का प्रयोग कर सकेंगे। 7) वाक्यों में शब्दों मुहावरों आदि को ठीक क्रम में रख सकेंगे।	सम्पूर्ण पाठ	छात्रों को घटना सम्बन्धी कुछ प्रश्नों का उत्तर लिखने के लिए कहा जायेगा।	छात्र अपने विचार और कल्पना के आधार पर इन प्रश्नों का उत्तर लिखेंगे।		1) लिखे उतरों की जांच करके। 2) रूपरेखा के आधार पर कहानी विकसित करवाना।
7. भाषा और के प्रति रुचि उत्पन्न।	विद्यार्थी इस प्रकार की अन्य कहानियां पढ़ना चाहेंगे और उन्हें पढ़ेगे भी।	जयशंकर प्रसाद कृत 'ममता' कहानी।	1. अध्यापक गृह–कार्य के रूप में छात्रों को ममता कहानी पढ़ने को देगा। 2. अध्यापक छात्रों को ऐसी कहानियों का संग्रह करने के लिए कहेगा।	1. छात्र अतिरिक्त वाचन सामग्री के रूप में ममता कहानी को पढेगे। 2. छात्र अपने कहानी संग्रह मे ऐसी कहानियों का संग्रह करेंगे।		छात्र के कहानी संग्रह को देखकर।
8. सद्वृतियों का विकास।	सम्पूर्ण कहानी	कहानी के मार्मिक तथा विनोदपूर्ण स्थलों की ध्यान आकर्षित करना।	संवेदना तथा विनोद	विद्यार्थियों के हृदय में का अनुभव होना।	संवेदनाशील और	इस प्रकार की विनोदपूर्ण स्थितियों के सम्बन्ध में छात्रों की प्रतिक्रियाएं जानकर।

दैनिक पाठ योजना का अर्थ एवं परिभाषा

दैनिक पाठ योजना से तात्पर्य दैनिक पाठ योजना से अभिप्राय कक्षा में हर रोज पढ़ाए जाने वाले पाठ की योजना बनाने से है। कक्षा में जाने से पूर्व अध्यापक विषय वस्तु निर्धारित करता है। उसके अनुसार शिक्षण उद्देश्य निश्चित करता है। शिक्षण विधियों तथा शिक्षण उपकरणों का निर्णय लेता है। अध्यापक व विद्यार्थियों की क्रियाएं निर्धारित करता है। श्यामपट्ट लेखन पर विचार करता है। कक्षा कार्य व गृह कार्य को योजनाबद्ध करता है। वास्तव में पाठ योजना दैनिक पाठ को पढ़ाने की व्यवस्था है तथा अध्यापक व छात्रों की गतिविधियों का व्यापक औपचारिक लेखा है, जो अध्यापक के अनुभव से सीमित होता जाता है। दैनिक पाठ–योजना अध्यापक के लिए मार्ग निर्देशित करती हुई बतलाती है कि उसे छात्रों को किस पथ पर ले जाना है। दैनिक पाठ योजना की परिभाषा भिन्न भिन्न विद्वानों द्वारा इस प्रकार से की गई है:–

- **बॉसिग के अनुसार–**पाठ योजना उन उपलब्धियों की सूची का शीर्षक है, जिन्हें शिक्षक कक्षा प्राप्त करना चाहता है। इनमें वे सब साधन तथा क्रियाएं भी आयेंगी जिनकी सहायता से वे उपलब्धियाँ प्राप्त की जाती है। इस परिभाषा मे तीन प्रमुख बातें आ जाती है–

  (क) अध्यापक किन उपलब्धियों अथवा उद्देश्यों को प्राप्त करना चाहता है?

  (ख) इन उददेश्यों की प्राप्ति में वह किन सहायक साधनों का प्रयोग करेगा?

  (ग) बालको के द्वारा की जाने वाली पाठ सम्बन्धी क्रियाएँ।

- **कमला भाटिया तथा बलदेव भाटिया के अनुसार–** पाठ योजना से पता चलता है कि बालको ने क्या पढ़ा है, आगे किस दिशा मे उनका मार्ग–दर्शन किया जाये और तत्काल क्या पढ़ाया जाये है? इस परिभाषा के अनुसार पाठ योजना में ये तीन बातें होनी चाहिए–

  (क) छात्रों का पूर्व ज्ञान।

  (ख) पाठ का प्राप्तव्य उद्देश्य ।

  (ग) पाठ्य वस्तु की रूपरेखा।

- **दैनिक पाठ योजना की आवश्यकता इस सम्बन्ध में ये बाते कही जा सकती है–**

(क) इससे अध्यापक का कार्य क्रमबद्ध तथा सुव्यवस्थित हो जाता है।

(ख) उसे उन उद्देश्यों का ज्ञान हो जाता है जिन्हें वह प्राप्त करना चाहता है।

(ग) वह आत्मविश्वास के साथ पढ़ाता है।

(घ) अध्यापक पाठ के भिन्न भिन्न अंगों मे सम्बन्ध स्थापित कर सकता है।

(ङ) वह पाठ्य–वस्तु का गठन सुचारु रूप से कर सकता है।

(च) शिक्षक छात्रों का मार्ग–दर्शन भली भॉति कर सकता है।

(छ) पाठ की समाप्ति पर वह जान लेता है कि विद्यार्थियों ने पाठ्यवस्तु को कहाँ तक ग्रहण किया है।

दैनिक पाठ योजना की रूपरेखा

दैनिक पाठ योजना बनाते समय उसमें निम्नलिखित बातें दी जानी चाहिए–

(1) पाठ योजना संख्या (2) विद्यालय का नाम

(3) कक्षा (4) अवधि

(5) दिनांक (6) विषय (7) प्रकरण

पाठ का शीर्षक प्रकरण नहीं होता। प्रकरण का सम्बन्ध पढ़ाये जाने वाले अंश की प्रमुख घटना या विचार से होता है। यथा–पाठ का शीर्षक है–गुरु गोविन्द सिंह। परन्तु प्रकरण है–गुरु गोविन्द सिंह का बाल्यकाल या गुरु गोविन्द सिंह का युद्व कौशल।

(8) पाठ के उद्देश्य–उद्देश्यों का श्रेणी विभाजन प्रत्येक मनुष्य में तीन प्रवशत्तियाँ पाई जाती हैं–

(क) ज्ञान (ख) क्रिया (ग) रागात्मक भाव।

इन प्रवशत्तियों को सामने रखते हुए हम हिन्दी शिक्षण के उद्देश्यो को भी तीन श्रेणियों मे विभाजित कर सकते है– (क) ज्ञानात्मक उद्देश्य (ख) कौशलात्मक उद्देश्य (ग) भावात्मक उद्देश्य ।

(9) **सहायक सामग्री –** सहायक सामग्री में ये उपकरण हो सकते हैं–(क) वास्तविक वस्तुएँ (ख) प्रतिरूप (ग) चित्र (घ) रेखाचित्र (ड) पोस्टर (च) सारणियाँ या चार्ट (छ) श्यामपट (ज) माया दीप (झ) चित्र दर्शक ;ञा) सीतावाद्य या ग्रामोफोन (ट) ध्वनि लेख या टेप रिकार्डर आदि।

(10) **पूर्व ज्ञान–** नया ज्ञान पूर्व ज्ञान के आधार पर ही टिक सकता है। अतः पूर्व ज्ञान जानना आवश्यक है।

(11) **प्रस्तावना–**प्रस्तावना या पाठोपस्थापन का सम्बन्ध पूर्व ज्ञान से रहता है। पूर्व ज्ञान से नया ज्ञान जुड़ जाने पर नया ज्ञान सरस एवं ग्राह्य हो जाता है। प्रस्तावना या पाठोपस्थापन पूर्व ज्ञान और प्रस्तुतिकरण की कड़ियों को जोड़ने वाला सूत्र है।

(12) **उद्देश्य कथन या पाठ्याभिसूचन**–यदि बालकों को उद्देश्य कथन या पाठ्याभिसूचन द्वारा पाठ का उद्देश्य बतला दिया जाता है तो वह पाठ में रुचि लेता है और उसकी पाठ ग्रहण करने की तत्परता बढ़ जाती है।

(13) **प्रस्तुतिकरण –**प्रस्तुतिकरण पाठ का सबसे महत्वपूर्ण भाग है। इसमें अध्यापक कुशलता के साथ बालकों के सामने पाठ प्रस्तुत करता है। इसमें ये बातें रहती है–

(क) पाठ को रोचक बनाने के साधन

(ख) छात्रों को क्रियाशील बनाने के साध्न,

(ग) नवीन शब्द और उनका स्पष्टीकरण,

(घ) पाठ्यवस्तु।

(14) **सारांश**—सारांश या आवशति द्वारा पाठ के मुख्य बिन्दुओं को दोहरा लिया जाता है।

(15) **गशह कार्य**—गशह कार्य के द्वारा देखा जाता है कि बालक अर्जित ज्ञान का नवीन परिस्थितियों में कहां तक प्रयोग कर सकता है।

इकाई योजना तथा दैनिक पाठ योजना में अन्तर

दैनिक पाठ योजना भी एक प्रकार से इकाई योजना है क्योकि पाठ को एक इकाई के रूप में मानकर योजना बनाई जाती है। लेकिन दोनो के अन्तर को निम्नलिखित रूप से दर्शाया गया है–

- इकाई योजना समूचे पाठ्यक्रम से सम्बन्धित है और दैनिक पाठ योजना प्रतिदिन के पाठ की योजना बनाई जाती है।
- इकाई योजना का क्षेत्र विस्तशत है जबकि पाठ योजना एक पाठ से सम्बन्धित होने के कारण सीमित होती है।
- एक इकाई के अन्तर्गत उप इकाइया होती है तथा उन सबकी पाठ योजना बन सकती है जबकि दैनिक पाठ योजना एक ही होती हैं।
- इकाई योजना के शिक्षण उद्देश्य भाषा शिक्षण के विभिन्न सामान्य व विशिष्ट उद्देश्य होते है। जबकि पाठ योजना के विषय से सम्बन्धित विशिष्ट उद्देश्य होते हैं।
- इकाई योजना की शिक्षण विधियां भी साहित्य की विभिन्न विधओं गद्य, पद्य रचना? व्याकरण आदि से सम्बन्धित भिन्न भिन्न एवं व्यापक होती है। पाठ योजना की शिक्षण विधियां प्रस्तुत विषय से सम्बन्धित एवं सीमित होती है।
- इकाई योजना में पाठय पुस्तक के सभी पाठ सम्मिलित होते हैं अर्थात् सभी पाठों से चयन करके उन्हे एक इकाई में रखा जाता है पाठ योजना पाठय पुस्तक के किसी एक पाठ की उससे आधे, तिहाई व चौथाई हिस्से की भी बन सकती है। जैसे कोई निबन्ध लम्बा है, उसके अनुसार एक ही पाठ की एक से अधिक पाठ योजनाएं बन सकती है।
- इकाई योजना स्वतन्त्र होती हैं जबकि पाठ योजना इकाई की उप इकाइयों के अनुसार बनाई जाती है।
- इकाई योजना की अपेक्षा दैनिक पाठ योजना विद्यार्थियों की रुचियों, अभिरूचियों, योग्यताओं, क्षमताओं आदि के अनुसार बनाई जाती है।
- इकाई योजना में अधिक परिवर्तन की गुजाइश नहीं होती है जबकि पाठ योजना लचीली होती है। इसमें कक्षा की परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन किया जा सकता है।
- दैनिक पाठ योजना, इकाई पाठ योजना का प्रतिरूप है।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. इकाई योजना तथा दैनिक पाठ योजना में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

7.6 मासिक पाठ योजना

इकाई और दैनिक पाठ योजना की तरह मासिक पाठ योजना का भी उद्देश्य शिक्षण प्रक्रिया के रोचक बनाने के लिए पाठ की विधिवत योजना तैयार करना होता है। मासिक पाठ योजना पूरे महीने भर के पाठ को व्यवस्थित कर शिक्षण प्रक्रिया का कार्यान्वयित करने का विशेष प्रयास है जिससे विषयवस्तु की समय वह प्रगतिशीलता एवं समय के अनुसार पाठयोजना के उचित विभाजन व निर्माण करना है। इसमें इकाई पाठयोजक प्रभागों के (अध्यायो) को महीने के अनुसार विभाजित करना तथा दैनिक योजना की तरह महीने भर की पाठयोजना का निर्माण करना है। इससे व्यक्ति प्रक्रिया के आने वाली गलतियों से बचा जाता है तथा एक सुनिश्चित लक्ष्य रखकर उसके हिसाब चरणबद्ध रूप में आगे बढ़ा सकता हैं

मासिक पाठ योजना से निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले जा सकते है मासिक पाठ योजना सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया के प्रभागों के रूप में योगदान को सुनिश्चित करती है। मासिक पाठ योजना इकाई पाठ योजना की समस्याओं को चरणबद्व रूप में प्रस्तुत करने तथा उसका चित्र करने के लिए होती है। मासिक पाठ योजना इकाई पाठ योजना (सम्पूर्ण पाठयोजना) से सम्बन्धित उद्देश्यों को चरण बद्ध रूप में प्रस्तुत करती है। महीने भर की इस प्रक्रिया में विद्यार्थी कितनी सीख सका तथा उसे आगे कितने पश्ष्ठ योजना की जरूरत है। को जानकारी के लिए मासिक पाठ योजना की जरूरत पड़ती है। मासिक पाठ योजना में अध्यापक एक महीने तक किन विधियों युक्तियों तथा प्रक्रियाओं का प्रयोग करता है। तथा उसमें आने वाली समस्याओं का निदानकर अगले महीने के लिए उसमें अपेक्षित सुधर करता है।

निर्ष्कष यह कहा जा सकता है मासिक पाठयोजना इकाई पाठयोजना से छोटी तथा दैनिक पाठ योजना से बडी होती है। यह दोनों के बीच की कडी है जो शिक्षण प्रक्रिया को बेहतर बचाने के लिए प्रयोग में लाई जाती है। जहां दैनिक पाठ योजना त्वरित होती है अर्थात एक दिन की होती है और इकाई पाठयोजना कुछ ज्यादा समय की होती है वहीं मासिक पाठ योजना दोनो सामजस्य बिठाने के लिए महमस्थ की भूमिका अदा करती है।

7.7 वार्षिक योजना

वर्तमान वार्षिक योजना में एक कक्षा से संबंधित, तत्संबंधी विषय में शैक्षिक वर्ष की समाप्ति पर बालक किन–किन शैक्षिक मापदंडों की प्राप्ति करें, एक–एक पाठ के लिए कितने कालांश चाहिए ? इसका विवरण लिखना चाहिए ।

शिक्षण प्रक्रिया सुचारु रूप से चलने के लिए किन–किन शिक्षण अधिगम सामग्रियों की आवश्यकता पड़ती है ? प्रत्येक माह शैक्षिक मापदंडों की प्राप्ति के लिए किन–किन कार्यक्रमों का आयोजन करना चाहिए? सी.सी.ई. से संबंधित किन–किन जानकारियों का अंकन करना चाहिए ? जैसे अंशों को वार्षिक योजना में स्थान देना चाहिए । निम्नलिखित सोपानों के द्वारा वार्षिक योजना लिखनी चाहिए ।

1. कक्षा

2. विषय

3. आवश्यक कालांशों की संख्या

4. शैक्षिक वर्ष की समाप्ति पर चालकों द्वारा अर्जित की जाने वाली शैक्षिक दक्षताएँ

5. माहवार पाठों का विभाजन

6. अध्यापक की प्रतिक्रियाएं

7. प्रधानाध्यापक के सुझाव, निर्देश

अ) वार्षिक योजना – नमूना

1. कक्षा :

2. विषय :

3. आवश्यक कालांशों की संख्या :

   अ) कुल कालांश :

   आ) शिक्षण अधिगम के लिए आवश्यक कालांशों की संख्या :

4. वर्ष की समाप्ति पर अर्जित किये जाने वाले शैक्षिक मापदंड :

   अर्थग्राह्यता – प्रतिक्रिया

   अभिव्यक्त – सृजनात्मकता

   भाषा की बात

5. मासवार पाठों का विभाजन :

महीना	शिक्षण हेतु पाठ का नाम	आवश्यक कालांशों की संख्या	संसाधन	आयोजित किये जाने वाले कार्यक्रम, सी.सी.ई
जून	1			
	2			

6. अध्यापक की प्रतिक्रिया :

7. प्रधानाध्यापक के सुझाव व निर्देश :

आ) वार्षिक योजना के सोपानों का विवरण

1. कक्षा : जिस किसी कक्षा की वार्षिक योजना लिख रहे हैं, उस कक्षा की संख्या यहा लिखें । (उदाः 6वीं, 7वीं, 8वीं, 9वीं)

2. विषय : विषय लिखें । (उदाः हिन्दी, तेलुगु, अंग्रेज़ी आदि।)

3. **आवश्यक कालाशों की संख्या :** पाठ्यपुस्तक के सभी पाठों को पूर्ण करने के लिए आवश्यक कालांशों की संख्या यहाँ लिखें । इनमें –

अ) कुल कालांश : 110 (यानी इसमें वर्ष की कुल कालांशों की संख्या लिखेंगे।)

आ) शिक्षण के लिए आवश्यक कालांशों की संख्या : 90 (यानी कुल शिक्षण कालांश 110 हैं, तो पाठ्यपुस्तक शिक्षण के लिए, 90 कालांश निर्धारित हैं ।)

4. **वर्ष की समाप्ति तक अर्जित किये जाने वाले शैक्षिक मापदंड :** शैक्षिक वर्ष की समाप्ति तक छात्रा का अपनी कक्षा के स्तरानुसार किन–किन शैक्षिक मापदंडों को अर्जित करना चाहिए, इसके बारे में लिखना चाहिए । इन्हें लिखते समय पाठ्यपुस्तक को ध्यान में रखना चाहिए ।

1. **अर्थग्राह्यता–प्रतिक्रिया :**

बालक किसके बारे में किस तरह बातचीत करें, के बारें में लिखें ।

बालक किसके बारे में पढ़कर व समझकर प्रतिक्रिया करें, के बारे में लिखें ।

2. **अभिव्यक्ति–सृजनात्मकता :**

बालक किसके बारे में अपने शब्दों में लिखना है, के बारे में लिखें ।

सृजनात्मक रूप में किन–किन विधाओं में प्रस्तुतीकरण है, उसके बारे में लिखना है ।

किनकी प्रशंसा कर सकें, उन्हें लिखना है ।

3. **भाषा की बात :** व्याकरणांश में किन अंशों की प्राप्ति करना है, उन्हें लिखना है ।

4. **परियोजना कार्य :** पाठ के आधार पर बालक को किस तरह के परियोजना कार्य करना है, के बारे में लिखना है । इस तरह शैक्षिक वर्ष की समाप्ति पर बालक किन–किन दक्षताओं में क्या प्राप्त करना है, के बारे में उन–उन दक्षताओं के नीचे लिखना है ।

5. **माहबार पाठों का विभाजन – योजना :** पूरे साल भर में किस महीनें में क्या पढ़ाना है ? उस पाठ की समाप्ति के लिए आवश्यक कालांशों की संख्या कितनी होगी ? (यहां पाठ का शिक्षण यानी प्रस्तावना चित्र से लेकर परियोजना कार्य तक के क्रियाकलाप करवाना है । अध्यापक को इन सबका ध्यान रखकर पाठ कालांशों का विभाजन करना चाहिए ।) उसी तरह पाठ शिक्षण के लिए अतिरिक्त सामग्री क्या चाहिए, आदि के बारे में लिखना चाहिए । शैक्षिक मापदंडवार विकास के लिए प्रति महीने किन कार्यक्रमों का आयोजन करने वाले हैं, आदि के बारे में विवरण देने चाहिए । (उदा : निबंध लेखन, भाषण प्रतियोगिता, कविता वाचन, नाटक मंचन आदि) तालिका को निम्नलिखित ढंग से लिखना चाहिए ।

माह	पाठ का नाम	आवश्यक कालांशों की संख्या	सामग्री	आयोजित किये जाने वाले कार्यक्रम, सी.सी.ई
जून	जिस देश में गंगा बहती है	7	चित्र. वीडियो आदि।	गयन प्रतियोगिता

इस तरह सभी पाठों के लिए लिखना चाहिए । इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कालोंशों का विभाजन पाठ के स्वभाव को ध्यान में रखकर करना चाहिए । इस तरह एक पाठ के लिए औसत छह कालांश होते हैं ।

शिक्षण के लिए संसाधन एवं शिक्षण अधिगम सामग्री (Resources for teaching & TLM) :

प्रत्येक अध्यापक को चाहिए कि वह शिक्षण करने वाले पाठ के लिए संसाधन इकट्ठा कर लें । यहां संसाधन का अर्थ है – उपयुक्त ग्रंथः (reference books) अध्यापक सहायक पुस्तिका, शिक्षण में उपयोगी सामग्री, शब्दकोश, सी.डी., वीडियो, पत्रिकाएं, समाचार पत्र के मुख्यांश, शिक्षण टिप्पणियां आदि। अध्यापक इनके अतिरिक्त अन्य सामग्रियों का उपयोग भी कर सकते हैं ।

आयोजित किये जाने वाले कार्यक्रम (Activities / Programmes to be performed):

अपेक्षित दक्षताओं की प्राप्ति के लिए संबंधित विषय में कुछ कार्यक्रम आयोजित करने चाहिए । इनका आयोजन स्थानीय परिवेश का उपयोग करते हुए करना चाहिए । इसके अंतर्गत कुछ कार्यक्रम कक्षा में तो कुछ कार्यक्रम बाहर आयोजित करने चाहिए । इनमें क्षेत्र पर्यटन (field visit), सांस्कृतिक कार्यक्रम (cultural activities), विज्ञान यात्राएं (educational tours), सामाजिक संस्थाओं का पर्यटन (visiting of social institutions), समाज सेवा (social service), कूटप्रश्न प्रतियोगिता (quiz), सेमिनार (seminars), विविध तरह की कविताएं, कहानियां, करपत्र, पोस्टर आदि बनाने के लिए कार्यशालाएँ (workshops for material development), समाचार पत्र के लिए लेख लिखना (writing articles/case studies to newspapers), कवि सम्मेलन विषय विशेषज्ञों द्वारा भाषण (lecturers from experts), पद्य वाचन, निबंध लेखन, भाषण प्रतियोगिता, चित्रलेखन, कविता लेखन कहानी लेखन आदि सृजनात्मक क्रियाकलापों (creative activities), का आयोजन करना चाहिए । इन्हें वार्षिक योजना में दर्शाना तथा अमल में लाना चाहिए । इन कार्यक्रमों से छात्रों में विविध दक्षताओं, रुचियों का विकास होता है तथा पाठशाला मनोरंजन का केंद्र बनता है । इसके लिए प्रत्येक अध्याकप, प्रधानाध्यापक को व्यावसायिक ढंग से सोचते हुए अपने व्यवसाय के प्रति न्याय करना चाहिए । उसी तरह सी.सी.ई से संबंधित किस महीने में रचनात्मक मूल्यांकन आयोजित व दर्ज करना है तथा सारांशात्मक मूल्यांकन के लिए प्रश्न पत्र तैयार करना है, आदि वार्षिक योजना में दर्शाना चाहिए ।

6. अध्यापक की प्रतिक्रियाएं :

वर्ष समाप्त होने तक अध्यापक शैक्षिक मापदंडों की प्राप्ति के लिए किन–किन क्रियाकलापों का आयोजन किया है ? छात्रों की भागीदारी कैसी है ? किन शैक्षिक मापदंडों में छात्रों ने प्रगति की है? किनमें पिछड़े हैं ? सृजनात्मक, प्रशंसापूर्वक कार्य, परियोजना कार्य किस तरह किये ? शैक्षिक मापदंडों की प्राप्ति के लिए वह और क्या कर सकता है ? आदि के बारे में अध्यापक को अपनी प्रतिक्रियाएं लिखनी चाहिए । इसके लिए कुछ पृष्ठ रखने चाहिए । वार्षिक योजना के सोपान एक से पांच तक

कोई बड़े परिवर्तन देखने को नहीं मिलेंगे। किनतु अध्यापक की प्रतिक्रियाएं पाठबार बदलती रहती है । इसीलिए माहबार प्रतिक्रियाएं लिखनी चाहिए । प्रधानाध्यापक के सुझाव व निर्देश भी माहबार होती हैं, जिन्हें वार्षिक योजना के सोपान संख्या सात में दर्ज करने होते हैं । इस तरह अध्यापक की प्रतिक्रियाएं, प्रधानाध्यापक के सुझाव व निर्देश लिखने के उपरांत अगले वर्श के लिए एक नया पृष्ठ रखना चाहिए । अतः वार्षिक योजना के इन सोपानों के लिए अलग से पृष्ठ रखने चाहिए ।

7. **प्रधानायापक के सुझाव व निर्देश :** प्रधानाध्यापक को चाहिए कि वह मासबार अपने सुझाव व निर्देश दर्ज करें । इस तरह वर्ष समाप्त होने पर अगले वर्ष के लिए एक और पृष्ठ आबंटित करना चाहिए।

वार्षिक योजना

1. **कक्षा :** दसवीं

2. **विषय :** हिंदी

3. **आवश्यक कालांशों की संख्या :**

   अ) कुल कालांश : 220

   आ) शिक्षण के लिए आवश्यक कालांश : 110

4. **शैक्षिक वर्ष की समाप्ति पर छात्र द्वारा प्राप्त की जाने वाली दक्षताएँ**

क. **अर्थग्राह्यता – प्रतिक्रिया :**

- दिये गये विषय पर चर्चा कर सकेंगे ।
- पंक्तियाँ क्रमानुसार लिख सकेंगे ।
- भाव से संबंधित दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिख सकेंगे ।
- पाठ पढ़कर दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिख सकेंगे ।
- गद्यांश पढ़कर दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिख सकेंगे ।
- किसी एक विषय पर अपने विचार प्रकट कर सकेंगे ।
- दिये गये विषय के महत्व के बारे में बता सकेंगे ।
- पाठ के आधार पर वाक्य जोड़कर सही वाक्य लिख सकेंगे ।
- कवियों के नाम बता सकेंगे ।
- कवियों के बारे में बता सकेंगे ।
- रिक्त स्थानों की पूर्ति कर सकेंगे ।
- पाठ पढ़कर पूछे गये प्रश्नों के उत्तर लिख सकेंगे ।

- पद्य, गीत, कविता, वार्तालाप आदि सुनकर समझ सकेंगे । अपने शब्दों में कह सकेंगे ।
- संबंधित अंशों के कारण बता सकेंगे ।
- पद्य, गीत धारा प्रवाह के साथ गा सकेंगे । अपने शब्दों में कह सकेंगे ।
- छात्र समाज के प्रति संवेदनशील बन सकेंगे ।

ख) अभिव्यक्ति सृजनात्मकता :

- पाठ्यांशों की घटनाओं, अंशों, पात्रों स्थानों, विषयों के बारे में समझकर अपने शब्दों में लिख सकेंगे।
- अधुरे विषय, कहानी, कविता, संवाद आदि आगे बढ़ा सकेंगे ।
- अलग–अलग घटनाओं में स्वयं को रखकर घटना आगे बढ़ा सकेंगे ।
- शब्दों का विविध संदर्भों में सही पद्धति में वाक्य प्रयोग कर सकेंगे ।
- पर्याय शब्दों के अर्थग्रहण कर दैनिक जीवन में उपयोग कर सकेंगे ।
- पद्य या गद्य को एक विधा से दूसरी विधा में बदल सकेंगे ।
- निमंत्रण, बधाई पत्र, दीवार पत्रिका, पोस्टर, पावर पाईट प्रस्तुतीकरण तैयार कर सकेंगे ।
- पाठ का भाव अपने शब्दों में लिख सकेंगे ।
- दिये गये विषय पर अपने विचार लिख सकेंगे ।
- संदेश लिख सकंगे ।
- साक्षात्मकार के लिए प्रशन लिख सकेंगे ।
- दिये गये विषय मा महत्व लिख सकेंगे ।
- किसी पात्र, लेखक या कवि, व्यक्ति, मित्र आदि की प्रशंसा लिख सकेंगे ।
- प्रेरणा देने वाले किसी भी अंश की प्रशंसा लिगं, धर्म, वर्ग और भेद के बिना कर सकेंगे ।
- भिन्न संस्कृति, संप्रदायों की प्रशंसा कर सकेंगे ।

ग. भाषा की बात :

- व्याकरणों को पहचान सकेंगे ।
- मुहावरों के अर्थ बताकर उनका वाक्य में प्रयोग कर सकेंगे ।
- सरल, संयुक्त, मिश्र वाक्यों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- शब्दार्थ बताकर वाक्य प्रयोग कर सकेंगे ।
- पर्यायवाची शब्द बता सकेंगे ।
- समुच्चय बोधक, संबंध बोधक, विस्मयादि बोधक शब्द जोड़ सकेंगे ।

- पुनरुक्त शब्द समझ सकेंगे ।
- विपरीतार्थक शब्द सकेंगे ।
- विपरीतार्थक शब्द लिख सकेंगे ।
- पद–परिचय बता सकेंगे ।
- विपरीतार्थक शब्द लिख सकेंगे ।
- पद–परिचय बता सकेंगे ।
- तत्सम, तद्भव, उपसर्ग, प्रत्यय शब्द पहचान सकेंगे । लिख सकेंगे ।
- संधि–विग्रह कर सकेंगे ।
- समास पहचान सकेंगे ।
- काकर शब्द पहचान सकेंगे ।
- संयुक्त क्रिया का प्रयोग समझ सकेंगे ।
- अनेक शब्दों के लिए एक शब्द लिख सकेंगे ।
- अकर्मक, सकर्मक क्रिया पहचान सकेंगे ।
- वाक्य के प्रकार बता सकेंगे ।

ङ)　　माहवार पाठ योगना का विभाजन :

इकाई	मास	पढ़ानेवाले पाठ का नाम	आवश्यक कालांशों की संख्या	संसाधन	आयोजित किये जानेवाले कार्यक्रम
	जून	1. बरसते बादल	8	वर्षा से संबंधित कुछ चित्र ।	◆ हावभाव के साथ कविता का प्रदर्शन । ◆ वर्षा से संबंधित कविताओं को संग्रहण ।
1.	जुलाई	2. ईदगाह	8	कुछ त्यौहारों से संबंधित संदर्भो के चित्र, रमजान से संबंधित चित्र किसी किसी मेले का चित्र।	◆ कहानी का नाटकीकरण पाठशाला में मेले का आयोजन छात्रों से करवाना ।
		◆ यह रास्ता कहां जाता है ? (पठन हेतु नाटक)	1		
		3. हम भारतवासी	8	महान व्यक्तियों के चित्र, देश भक्तों चित्र	◆ हावभाव के साथ कविता का प्रदर्शन ◆ देश भक्ति से संबंधित कविता, गीता का संग्रहण ।
		◆ शांति की राह में			
2.	अगस्त	4. कण–कण का अधिकारी	8	गाँधीजी का चरखा चलाते हुए चित्र, कुछ मेहनती व्यक्तियों के चित्र	◆ हावभाव के साथ कविता का प्रदर्शन ◆ छात्रों से श्रम दान करवाना । ◆ श्रम से संबंधित प्रेरणा दायक कविताओं का संग्रहण ।

		5. लोकगीत ◆ उलझन (पइन हेतु)	8 1	कई प्रकार के लोकगीतों का आडियों सुनवाना जिस संदर्भों में लोकगीत गाये जाते हैं उनके चित्र ।	◆ हावभाव के साथ कुछ लोकगीतों का प्रदर्शन ◆ एक अंश देकर उस विषय पर निबंध लिखवाना ।
3.	सितंबर	6. अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी दो कलाकार (उपवाचक)	8 2	महान व्यक्तियों द्वारा लिखे पत्र।	◆ हिंदी दिवस का आयोजन भाषण प्रतियोगिता का चर्चा आयोजन ।
3.	सितंबर / अक्तूबर अक्तूबर अक्तूबर /नवम्बर	भक्ति पद स्वराज्य की नींव माँ मुझे आदे दे ! दक्षिणी गंगा गोदाबरी अपने स्कूल को एक उपहार (उपवाचक)	8 8 1 8 2	रेदास, मीराबाई के चित्र, हिंदू, मुस्लमान, सिख, ईसाई देवताओं के चित्र । संबंधित लोक कथाएं । लक्ष्मीबाई से कहानियां । तात्या, लक्ष्मीबाई के चित्र, तोप, नूपुर के चित्र गोदावरी नदी पी.पी. टी., भारत के मानचित्र में गोदबारी को दर्शाना	◆ भजन प्रतियोगिता का आयोजन । हाव–भाव के साथ पद चौपाइयों का गायन नाटकीकरण चर्चा यात्रा – वर्णन चर्चा चर्चा

4.	दिसंबर	नीति दोहे	8	रहीम, बिहारी के चित्र, दोहों का चार्ट	◆ राग व हाव–भाव के साथ दोहों का गायन पाठशाला में नीति संबंधी सृक्तियों के चार्ट लगाना।
	दिसंबर	जल ही जीवन है	8	जल के विभिन्न उपयोगों को दर्शाता चार्ट	सरकार की ओर से जल संरक्षण के लिए किये जाने वाले कार्यों की सूची बनवाना ।
	दिसंबर /जनवरी	क्या आपको पता है ? (पठन हेतु)	1		चर्चा
	जनवरी	धरती के सवाल के जवाब	8	दो, तीन विशिष्ट व्यक्तियों से लिये गये साक्षात्कार	साक्षात्कार का आयोजन
	जनवरी	अनोखा उपाय (उपवाचक)	1		चर्चा

7.8 निष्कर्ष :

सारांश रूप में यही कहना उचित है कि आप शिक्षण जिस किसी विधि से करें लेकिन शिक्षण क्रम हरबर्ट उपागम के अनुसार ही होना चाहिए। लेकिन यहां पर इस बात को स्पष्ट करना तर्क संगत और न्याय संगत होगा कि प्रत्येक विषय के प्रत्येक पाठ के शिक्षण हेतु हरबर्ट के पंचपदी का अनुसरण करना अनिवार्य नहीं होता। जहां पर इन पदों का अनुसरण करना उचित होता है। वहा पर इन पदों का अवश्य ही अनुसरण किया जाए। दूसरी तरफ अगर हम ध्यान दे ंतो ब्लूम के उपागम के अनुसार उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप से लिखना मूल्यांकन की दशष्टि से देखा जाए तो उपयोगिता बहुत कम प्रतीत होती है। दोनों के अध्ययन से इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि इन दोनो में सन्तुलन स्थापित किया जाए। दैनिक पाठ योजना के प्रारूप में शिक्षण की सम्पूर्ण प्रक्रिया को प्रदर्शित करने वाले त्रिकोण को ही विशेष रूप से ध्यान में रखा जाता है। दैनिक पाठ योजना स्तर पर शिक्षण, उद्देश्य, अध्यायपन, परिस्थितिय

7.9 आत्मजांच और परीक्षण

1. पाठ योजना से आप क्या समझते हैं? एक अच्छी पाठ योजना की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए?
2. पाठ योजना से क्या तात्पर्य है? एक शिक्षक के लिए पाठ योजना बनाना क्यों आवश्यक है?
3. शिक्षण में पाठ योजना की क्या आवश्यकता है? शिक्षक को पाठ योजना उपयोग किस प्रकार करना चाहिए?
4. इकाई योजना से आप क्या समझते है? यह पाठ योजना से किन अर्थो में भिन्न होती है?

7.10 सहायक ग्रन्थ सूची :

1. खन्ना, ज्योति (2000) हिन्दी शिक्षण, धनपत राय एण्ड कम्पनी दिल्ली।

2. भाई योगिन्दरजीत (1984) हिन्दी भाषा शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।

3. भाटिया, एम. एस. (1999) हिन्दी शिक्षण विधियां, टण्डन पब्लिकेशन; लुधियाना।

5. वरवाल, जसपाल सिंह (2005) हिन्दी भाषा शिक्षण, गुरूसर बुक डिपो, सुधार (लुधियाना)

6. पाण्डे, रमिशकल (1998) हिन्दी शिक्षण, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।

7. सुफाया, रघुनाथ (1986–97) हिन्दी शिक्षण विधि, दिल्ली पुस्तक सदन, पटना।

8. सूद, विजय (1997) हिन्दी शिक्षण विधियां, टण्डन पब्लिकेशन, लुधियाना ।

गद्य एवं पद्य शिक्षण की पाठ योजना का निर्माण

संरचना

8.1 भूमिका

8.2 उद्देश्य

8.3 गद्य शिक्षण

8.3.1 गद्य शिक्षण का अर्थ एवं परिभाषा

8.3.2 गद्य शिक्षण के उद्देश्य

8.3.3 गद्य शिक्षण की महत्ता

8.3.4 गद्य शिक्षण की विधियां

8.3.5 गद्य शिक्षण के सोपान

8.3.6 गद्य शिक्षण की पाठ योजना का नमूना

8.4 पद्य शिक्षण

8.4.1 पद्य शिक्षण का अर्थ एवं परिभाषा

8.4.2 पद्य शिक्षण के उद्देश्य

8.4.3 पद्य शिक्षण की प्रणालियां

8.4.4 पद्य में अभिरूचि बढाने के साधन

8.4.5 पद्य शिक्षण के सोपान

8.5.6 पद्य शिक्षण की पाठ योजना का नमूना

8.5 निष्कर्ष

8.6 आत्मजांत और परिक्षण

8.7 सहायक ग्रन्थ सूची

8.1 भूमिका

साहित्य के मुख्यतः दो अंग माने गये है– पद्य और गद्य । यद्यपि कई विद्वान नाटक को साहित्य का पश्थक अंग मानते हैं क्योंकि यह मंच की विधा है, परन्तु सामान्यतः इसे गद्य साहित्य के अन्तर्गत रखा जाता है और पाठ्यपुस्तक के पाठों में नाटक के किसी रूप का समावेश किया जाता है।

हिन्दी भाषा की पाठ्यपुस्तक में पद्य की अपेक्षा गद्यात्मक पाठों की संख्या अधिक होती है। इस का मुख्य कारण व्यवहारिक जीवन में पद्य की अपेक्षा गद्य की अधिक उपयोगिता है। पद्य में छन्द, लय और प्रवाह आदि पर अधिक ध्यान दिया जाता है। इसमें कल्पना द्वारा सरसता एवं लालित्य उत्पन्न किया जाता है। इसमें शब्दों का चमत्कारी प्रयोग होता है। अलंकार योजना होती है और रस विधान होता है। गद्य साहित्य में इन सब की आवश्यकता नहीं होती। यद्यपि गद्य में लालित्यपूर्ण निबंधों की रचना भी होती है, परन्तु हिन्दी की पाठ्यपुस्तक में प्रायः ऐसे निबंधों को सम्मिलित नहीं किया जाता है। पाठ्यपुस्तक में बहुधा ऐसे गद्य को सम्मिलित किया जाता है जिस में सर्वमान्य भाषा के माध्यम से जीवन के विविध ज्ञान–विज्ञान को प्रस्तुत किया गया हो। व्यवहारिक जीवन में पद्य की अपेक्षा गद्य का अधिक महत्व है। गद्य की ऐसी विधा है जिसके माध्यम से विचारों का आदान प्रदान होता है। हमारा समूचा ज्ञान विज्ञान गद्य में सुरक्षित है। अभिव्यक्ति मौखिक हो या लिखित अधिकांश रूप से गद्य में ही होती है। हमारे मनोरंजन का साधन भी गद्य है। पत्र–पत्रिकाओं में जितना स्थान गद्य को मिलता है उतना पद्य को नहीं मिलता। कविता से भी आनन्द की प्राप्ति होती है परन्तु ऐस लोगों की गिनती अपेक्षाकृत कम है। कविता का आनन्द कवि सम्मेलनों में सीमित होकर रह गया है जब कि गद्य साहित्य उपन्यासो, कहानियों, निबंधों तथा पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से घर घर पहुंच कर लोगों की ज्ञान वृद्धि भी कर रहा है और उनका मनोरंजन भी कर रहा है।

केवल साहित्यिक विधा के रूप में ही नहीं बल्कि भाषा शिक्षण की दशष्टि से भी गद्य का बहुत महत्व है। भाषा के शुद्ध रूप का ज्ञान गद्य के माध्यम से ही दिया जा सकता है। शब्द ज्ञान, वाक्य रचना तथा लेखन की विभिन्न शैलियों का ज्ञान गद्य के माध्यम से ही सम्भव हो सकता है। यदि कहा जाये कि गद्य के माध्यम से ही विद्यार्थियों को परिमार्जित भाषा, विषयानुकूल शैली, विचारों की क्रमबद्धता अपने मत का प्रतिपादन आदि लेखन कौशल की विशेषताओं का ज्ञान प्रदान किया जाता है।

8.2 उद्देश्य

इस पाठ को ध्यानपूर्वक पढ़ने के बाद, आप

- पद्य की परिभाषा स्पष्ट कर सकेंगे।
- पद्य की शिक्षा के उद्देश्य स्पष्ट कर सकेंगे।
- पद्य शिक्षण की प्रणालियों की व्याख्या कर सकेंगे।
- पद्य में अभिरूचि बढ़ाने के साधनों का वर्णन कर सकेंगे।
- गद्य के अर्थ समझाते हुए गद्य और पद्य में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे
- गद्य के महत्व का वर्णन कर सकेंगे।
- गद्य शिक्षण के विभिन्न उद्देश्यों की व्याख्या कर सकेंगे।
- गद्य शिक्षण की प्रणालियों को स्पष्ट कर सकेंगे।

8.3 गद्य शिक्षण

भाषा मनुष्य के भावों एवं विचारों को वाचिक व लिखित रूपों में अधिकाधिक संप्रेषणीय बनाती है। साहित्य में इस संप्रेषण की दो प्रमुख शैलियाँ है– गद्य और पद्य । जब हम अपने विचारों को विस्तृत रूप से व्याकरण सम्मत भाषा में प्रस्तुत करते है तो वह साहित्य की गद्य शैली कहलाती है और जब अपने भावों एवं विचारों को छंद, स्वर, लय व ताल में बांध कर प्रकट करते है तो यह कविता शैली कहलाती है।

आदिकाल के हिन्दी साहित्य में पद्य अथवा काव्य का ही प्रचलन था। तत्पश्चात् गद्य साहित्य का क्षेत्र विस्तीर्ण होने लगा। इसकी विशालता और व्यापकता को देखते हुए हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग को गद्ययुग की संज्ञा प्रदान की गई। वास्तव में गद्य साहित्य में काव्य के अतिरिक्त सभी साहित्यिक विधाएँ आ जाती है, जैसे –निबन्ध, कहानी, वर्णन, उपन्यास, नाटक, एकांकी, जीवनी, संस्मरण, आत्मकथा, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, आलोचना आदि। गद्य शिक्षण द्वारा साहित्य की इन विधाओं का ज्ञान प्रदान किया जाता है। इससे विद्यार्थियों मे भाषायी कौशल, सुनना, बोलना, पढ़ना व लिखना विकसित होते हैं तथा उनकी साहित्य के प्रति रूचि जागश्त होती है। गद्य शिक्षण द्वारा विद्यार्थी भाषा के सर्वमान्य रूप का ज्ञान प्राप्त करते हैं तथा उनमें रचनात्मक योग्यता विकसित होती है। अतः हिन्दी भाषा शिक्षण में गद्य की शिक्षण एक दूसरे के पर्यायी हैं। भाषा की शिक्षा गद्य के माध्यम से दी जाती है और गद्य की शिक्षा विशेष महत्व रखती है। हिन्दी भाषा शिक्षण एवं गद्य की शिक्षा भाषा के माध्यम से ही दी जाती है। गद्य साहित्य की विभिन्न विधाओं एवं शैलियों से गद्य की अभिव्यंजनात्मक शक्ति तथा विविधता का अनुमान लगाया जा सकता है।

8.3.1 गद्य शिक्षण का अर्थ एवं परिभाषा

गद्य शब्द संस्कृत भाषा की 'गद्' धतु से बना है जिसका अर्थ होता है– स्पष्ट कहना। साहित्य–दर्पण के अनुसार 'वृत वंधेज्झितं गद्यजे' अर्थात वृत–बन्ध–हीन रचना गद्य है। काव्यादर्श के अनुसार 'अपादः पदसंतानो गद्यजे' अर्थात् पद समुदाय में गण–मात्रा आदि के निपत पाद का न होना गद्य है। अग्रेजी में गद्य को 'प्रोज' कहते है। प्रोज की परिभाषाओं की गई है जैसे–स्टेट, डाइरेक्ट, अनएडार्न्ड स्पीच' अथवा लैंग्वेज स्पोकन ऑफ रिटन, ऐज इन आर्डिनरी यूसेज, विदाउट मीटर ऑफ राइम। अरबी मे गद्य को नस्र या 'इबारत' या 'नज्म को उल्टा' कहा गया है। उर्दू में भी अरबी के अनुसार ही गद्य को स्पष्ट किया गया है।

साहित्य की विभिन्न विधाओं में गद्य का स्थान महत्वपूर्ण है। 'गद्य कवीनां निकषं वदन्ति' उक्ति के अनुसार गद्य को कवियों की कसौटी कहा गया है। काव्य में अलंकार, पिगल आदि के रूपों में कवियों के समक्ष कुछ मार्गदर्शक तत्व होते है, किन्तु गद्य में इनका होना आवश्यक नहीं है। गद्य रचना में लेखक स्वतन्त्र रहता है। स्वतन्त्र होने के नाते उसे बहुत सावधान भी रहना पड़ता है। काव्य में भाषा–सम्बन्धी भूल को यह मानकर स्वीकार कर लिया जाता है कि लय एवं भाव की दशष्टि से व्याकरण पर कवि का ध्यान नही गया, किन्तु गद्य में लेखक को व्याकरणिक त्रृटि के लिए क्षमा नहीं किया जाता और उसे उसका दोष घोषित कर दिया जाता है।

आज ज्ञान की प्रत्येक शाखा में विषय का विस्तार होता जा रहा है। बीसवीं शताब्दी में ज्ञान का विकास बडी द्रुत गति से हो रहा है। साहित्य के क्षेत्र में भी कहानी, उपन्यास, निबन्ध, लेख आदि प्रचुर मात्रा में रचे जा रहे है। इन विषयों का माध्यम काव्य नहीं हो सकता। इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र, विज्ञान आदि का माध्यम गद्य ही होता है। कहानी, नाटक, उपन्यास, लेख आदि भी गद्य में ही रचे जा रहे है। गद्य के ही माध्यम से हम अपने दैनिक जीवन में विचारों का आदान–प्रादान करते है। इस दृष्टि से गद्य का शिक्षण भाषा शिक्षण का आवश्यक अंग बन जाता है।

गद्य और पद्य में पहले किसका प्रादुर्भाव हुआ, यह कहना कठिन है। पंडित करुणापति त्रिपाठी का कथन इस सन्दर्भ में ध्यान देने योग्य है। वे कहते है, "इस भाँति नर समाज ने पहले गद्य साहित्य का आविष्कार किया होगा, परन्तु गद्य साहित्य से उसकी पूर्ण पुष्टि न हो सकी। अतः प्रभावोत्पादकता और रमणीयता की अभिवृद्धि करने के विचार से मनुष्य ने अपनी साहित्यिक अभिव्यक्ति में संगीत तत्व का सम्मिश्रण कर उसे 'कविता' नाम दिया। संगीत तत्व से अनुप्राणित साहित्य का यह रूप इतना लोकप्रिय हो गया कि इसके सामने गद्यात्मक आख्यायिका आदि का साहित्य गौण हो गया। फलतः आज हम संसार के सभी प्राचीन साहित्यों में पद्य की ही प्रचुरता पाते है।"

भामह ने काव्यालंकार में गद्य को "प्रकशत अनाकुल श्रव्य शब्दार्थ पदवश्त्ति" कहा है। कुछ विचारक गद्य और पद्य की भाषा में कोई अन्तर नही मानते, किन्तु दोनों में कुछ अन्तर अवश्य है। पद्य साधरणतः छन्दोबद्व रचना होती है। कुछ विचारकों की दृष्टि में गद्य और पद्य का भेदक तत्त्व छन्द है। नई कविता छन्द से मुक्त है, किन्तु वहाँ भी लय, गति, प्रवाह, स्वराघात, संगीत, अर्थ की लय, अनुभूति आदि तो विद्यमान रहते ही है।

प्रसिद्ध समालोचक डी0 डब्ल्यू0 रेनी का कहना है कि कविता बौद्धिक सश्जन करती है, गद्य बौद्विक निर्माण करता है। हरबर्ट रीड के अनुसार भी कविता सश्जनात्मक अभिव्यक्ति है और गद्य निर्माणात्मक अभिव्यक्ति है। सश्जन नूतनता की उद्भावना है और निर्माण पहले प्राप्त वस्तुओं में व्यवस्था लाना है। भवन का नक्शा तैयार करना सश्जन है, ईट, चूना, गारा आदि को व्यवस्थित करना निर्माण।

8.3.2 गद्य शिक्षण के उद्देश्य

गद्य साहित्य की व्यापक विधा है जिसका समुचित ज्ञान बालक के चहुँमुखी विकास में सहायक है। गद्य की सभी शैलियों को सन्मुख रख उनके शिक्षण उद्देश्यों को सामान्य विशिष्ट वर्गो मे रखा गया है। गद्य शिक्षण के इन वर्गो में द्रुत व व्यापक तथा गहन व सूक्ष्म अध्ययन सम्बन्धी उद्देश्य भी शामिल हैं जिनकी परिचर्चा ऊपर की जा चुकी है।

1. **सामान्य उद्देश्य**—गद्य शिक्षण के सामान्य उद्देश्य इसकी महता में ही निहित हैं, लेकिन भाषा शिक्षण की दृष्टि से गद्य शिक्षण के सामान्य उद्देश्य इस प्रकार हैं—

- गद्य शिक्षण के माध्यम से शिक्षण भाषा का सही व शुद्ध उच्चारण सिखाना।
- उचित गति, विराम व हावभाव से मौखिक अभिव्यक्ति करना सिखाना।
- विद्यार्थियों को सस्वर आदर्श वाचन करते हुए अर्थ ग्रहण करने के योग्य बनाना।
- विद्यार्थियों को अनुकरण वाचन में निपुण करना।
- गद्य के द्रुत व विस्तश्त तथा गहन व सूक्ष्म अध्ययन का आधर मौनवाचन है। छात्रों में मौन वाचन कुशलता पैदा करना।
- विद्यार्थियों को अनुकरण वाचन में निपुण करना।
- गद्य के द्रुत व विस्तश्त तथा गहन व सूक्ष्म अध्ययन का आधार मौन वाचन है।
- छात्रों में मौन वाचन की कुशलता पैदा करना।
- गद्य शिक्षण द्वारा बालकों में स्वाध्याय की आदत विकसित करना।
- विद्यार्थियों में नियमित रूप से विद्यालय में जाने की प्रेरणा पैदा करना।
- गद्य शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों के शब्द भण्डार में निरन्तर वृद्वि करना।

- छात्रों में सम्भाषण, वाद–विवाद तथा परिचर्चा की योग्यता विकसित करना।
- गद्य शिक्षण द्वारा उनमें साहित्य की विभिन्न विधाओं व शैलियों को पढ़ते हुए अर्थ ग्रहण करने की योग्यता विकसित करना।
- विद्यार्थियों की कल्पना व निरीक्षण शक्तियों का विकास करना।
- गद्य के माध्यम से छात्रों को लिपि का ज्ञान कराना तथा वर्तनी का सही ज्ञान प्रदान करना।
- छात्रों को साहित्य के प्रति आकश्ष्ट करना।
- गद्य की विभिन्न विधाओ जैसे कहानी, नाटक, घटना, वश्तान्त आदि शिक्षाप्रद रचनाओं के माध्यम से छात्रों में चारित्रिक गुण पैदा करना।
- गद्य शिक्षण द्वारा उन्हें मनोंरजन के साहित्यिक साधनों से परिचित कराना।
- उनमें समय का सदुप्रयोग करने की प्रवशति जागृत करना।
- विद्यार्थियों की रचनात्मक एवं सृजनात्मक शक्तियाँ विकसित करना।
- छात्रों में समालोचना व समीक्षा की योग्यता उत्पन्न करना।
- उन्हें देश की सभ्यता संस्कशति से परिचय कराना।
- छात्रों में लिखित और मौखिक अभिव्यक्ति की कुशलता पैदा करना तथा विचारों में क्रमबद्वता सिखाना।
- उन्हें मुहावरे और लोकोक्तियों का अवसरानुसार प्रयोग सिखाना।
- बालकों का सवोंगीण विकास करना।
- छात्रों में आत्मविश्वास पैदा करना।

2. **विशिष्ट उद्देश्य** –किसी भी गद्य पाठ के विशिष्ट उद्देश्य पाठ में निहित मुख्य भाव विचार तथा कलात्मक विशेषता पर आधरित होते है। जैसे–

- छात्रों को गद्यकार के विचारों से अवगत कराना।
- पाठ में निहित सन्देश अथवा शिक्षा की जानकारी देना।
- छात्रों को लेख सम्बन्धी भाषायी तत्वों का ज्ञान देना।
- लेखक की अन्य साहित्यिक रचना की जानकारी देना।

गद्य शिक्षण की विविध विधाओं के उद्देश्य उनके अनुसार ही होंगे, जैसे कहानी, नाटक, उपन्यास, रचना आदि के विशिष्ट उद्देश्य उनकी विषय– वस्तु पर आधारित होंगे। अतः किसी पाठ का विशिष्ट उद्देश्य जानने के लिए, उस पाठ का शिक्षक को गहन अध्ययन करना चाहिए जिससे ज्ञात हो सके कि यथा पाठ की पाठ्य वस्तु छात्रों के किन भावों व विचारों को जागृत कर सकती है तथा वह मानव जीवन के किस पहलू पर प्रकाश डालती है। उससे विद्यार्थियों में किन प्रवश्त्तियों को जागृत किया जा सकता है?

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. **गद्य** शिक्षण क्या है
2. **गद्य** शिक्षण के उद्देश्य को स्पष्ट करो

8.3.3 गद्य शिक्षण की महत्ता

- **गद्य द्वारा विभिन्न विषयों का ज्ञान**—विभिन्न विषयों जैसे इतिहास, भूगोल, गणित, दर्शन, भाषा, विज्ञान, कला, व्यवसाय आदि सभी विषयों का ज्ञान गद्य द्वारा ही संभव है, जो काव्य द्वारा नहीं दिया जा सकता।

- **सामाजिक सांस्कशतिक व राष्ट्रीय गतिविधियों का ज्ञान**—सामाजिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय क्रिया—कलापों सम्बन्धी साहित्य गद्य में ही प्राप्त होता है। शैक्षणिक क्रिया—कलाप तो गद्य का ही प्रतिरूप है। कविता में ऐसी व्यापकता असंभव है। गद्य ने ही साहित्य को समाज का दर्पण बनाया है।

- **ज्ञानोपार्जन का सशक्त साध्न**— गद्य ज्ञानोपार्जन का सशक्त साधन है। विषय सामग्री की जितनी व्यापकता व विविधता गद्य साहित्य में पाई जाती है उतनी पद्य साहित्य में नहीं। यहाँ तक कि साहित्यिक विधाओं की विभिन्न शैलियों का परिचय गद्य शिक्षण द्वारा ही संभव है।

- **भाव व विचार प्रधान साहित्य का प्रतिनिधि** —गद्य शिक्षण भाव व विचार प्रधान साहित्य का प्रतिनिधित्व करता है। कविता में भाव प्रधान होते हैं लेकिन गद्य साहित्य में भाव विचार दोनो की प्रधानता रहती है। कहानी, नाटक, उपन्यास आदि में तो रसात्मकता होती ही है, इनके अतिरिक्त जीवनी, निबन्ध, वर्णन आदि में भी सरसता पाई जाती है।

- **भाषा का परिष्कृत रूप** —कविता शिक्षण में भाषायी तत्वों अथवा भाषा के व्याकरण सम्मत रूप का उल्लघंन पाया जाता है जबकि गद्य में इसके विपरीत भाषा के शुद्ध व परिष्कृत रूप की प्रमुखता पाई जाती है। व्याकरण सम्मत भाषा की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। भाषा का शुद्ध उच्चारण व लेखन गद्य शिक्षण द्वारा ही सम्पन्न होता है।

- **मनोरंजन का सहज प्राप्य साध्न**— गद्य मनोरंजन का सुलभ व सस्ता साधन है। वर्णन, उपन्यास, नाटक, कहानी आदि जहां ज्ञानवर्धन करते हैं वहाँ इनके द्वारा सहज रूप में मनोरंजन हो जाता है। लिखने पढ़ने का सामान्य ज्ञान रखने वाला व्यक्ति भी इसे पढ़कर प्रसन्नचित रहता है। पुस्तकालयों ने गद्य को और भी अधिक सहज प्राप्य बना दिया है रेडियो, दूरदर्शन आदि प्रसारण उपकरणों के कार्यक्रमों का आधार ही गद्य साहित्य है जिससे अनपढ़ व्यक्ति भी लाभान्वित होते हैं।

- **भाषा शिक्षण गद्य की महत्ता**—भाषा विचार—विनिमय का सशक्त साधन है जिसका ज्ञान गद्य द्वारा ही संभव है। पढ़ना, लिखना, सुनना, बोलना भाषा के इन चार मुख्य कौशलों का ज्ञान गद्य द्वारा ही दिया जा सकता है। भाषा जिससे ज्ञान प्राप्ति व्यापक रूप से हो सकती है, गद्य द्वारा ही सिखाई जा सकती है। गद्य— शिक्षण द्वारा भाषा का शब्द भण्डार विकसित होता है। अतः भाषा व गद्य—शिक्षण एक दूसरे के पर्यायी माने जा सकते हैं।

- **नैतिक मूल्यों का विकास** –गद्य की विभिन्न विधाओं के पठन से विद्यार्थियों में चारित्रिक गुण विकसित होते है। अच्छी शिक्षाप्रद कहानियाँ उनमें नैतिक मूल्यों को पैदा करती है। प्राथमिक कक्षा के विद्यार्थियों को पंचतन्त्र की कहानियाँ सुनाने का उद्‌देश्य भी उनमें सच्चाई, ईमानदारी, सद्‌भाव आदि पढकर अच्छे कार्य करने की प्रेरणा मिलती है। कविता का क्षेत्र गद्य की भाँति इतना विस्तश्त नहीं है।

- इस प्रकार गद्य शिक्षण की महता सर्वमान्य है। गद्य और पद्य में अन्तर की और जानकारी 'कविता शिक्षण' के पाठ में दी गई है।

8.4.4 गद्य शिक्षण की विधियाँ

- **अर्थ बोध विधि–** अर्थ बोध विधि द्वारा गद्य शिक्षण में अध्यापक स्वयं ही पाठ को पुस्तक द्वारा पढ़ता है तथा उसमें आए कठिन शब्दो के अर्थ बताता जाता है। कभी–कभी पाठ पढ़ने का कार्य विद्यार्थियों द्वारा कराया जाता है तथा अध्यापक कठिन शब्दों के अर्थ करता जाता है। इस विधि द्वारा अधिकतर छात्र निष्क्रिय हो पाठ सुनते रहते हैं। उनके सक्रिय योगदान के अभाव के कारण यह विधि अमनोवैज्ञानिक मानी जाती है। कठिन शब्दों का अर्थ बताना तो आवश्यक है लेकिन ऐसा कार्य छात्रों के पूर्ण सहयोग से किया जाना चाहिए। यह विधि गद्य शिक्षण के उद्‌देश्यों के अनुरूप नहीं है।

- **आख्यान विधि–** अर्थ बोध विधि का ही विकसित रूप है। आख्याता स्वंय अपने मुख से सब बातें कहता है। शिक्षण प्रक्रिया में आख्यान से अभिप्राय है शिक्षक द्वारा गद्य पाठ की व्याख्या। इसमें न सिर्फ शब्दो के अर्थ बताए जाते हैं बल्कि पूरे पाठ की विविध रूप से व्याख्या की जाती है। पाठ मे आए प्रसंगों, घटनाओं आदि के स्पष्टीकरण के लिए विस्तृत व्याख्या की जाती है। आख्यान विधि में भी छात्रों की निष्क्रिय भूमिका है। लेकिन गद्य शिक्षण में इस विधि की अपनी विशेषता है। जब तक मुख्य तथ्यों, घटनाओं, प्रसंगों आदि की समुचित व्याख्या नही की जाएगी तब तक विषय वस्तु का सही ज्ञान नहीं हो सकता। भाषायी तत्वों की व्याख्या से ही व्याकरण का ठीक परिचय मिल सकता है। विद्यार्थियों के सहयोग से यह विधि उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

- **प्रश्नोत्तर विधि–** अर्थ बोध और आख्यान विधि में छात्रों के सहयोग का अभाव रहा लेकिन प्रश्नोत्तर विधि द्वारा इस कमी को पूरा किया जा सकता है। गद्य पाठ से सम्बन्धित प्रश्नों का विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान से सह–सम्बन्ध स्थापित कर उनमें स्वतन्त्र विचार शक्ति को विकसित किया जा सकता है। माध्यमिक स्तर की कक्षाओं के लिए यह उपयोगी विधि है। शिक्षक को प्रश्न पूछने के सिद्वान्तों का परिपालन करते हुए इस विधि को अपनाना चाहिए जैसे प्रश्न स्पष्ट होने चाहिए तथा विद्यार्थियों की रचनात्मक प्रवृत्ति विकसित करने वाले हों। शिक्षक को छात्रों द्वारा आए उत्तरों के प्रति भी विशेष सतर्क रहना चाहिए कि वह भाषा, भाव तथा विचार की दृष्टि से पूर्ण हो। अध्यापक का सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार विधि को रोचक बना सकता है।

- **विश्लेषण विधि** –अन्य विधि द्वारा यदि शब्दों के अर्थ स्पष्ट न हो तो विश्लेषण विधि अपनाई जा सकती है। विश्लेषण से अभिप्राय किसी पदार्थ के संयोजक तत्वों को पृथक करना अतः शब्द में विश्लेषण से तात्पर्य उसकी व्युत्पति, तुलना, उपसर्ग, प्रत्यय, सन्धि तथा समास द्वारा उसका स्पष्टीकरण करने से है। शब्दों की व्युत्पति, तुलना, उपसर्ग, प्रत्यय, सन्धि तथा समाप्त द्वारा उसका स्पष्टीकरण करने से है। शब्दों की व्युत्पति किस धतु से हुई, जैसे विद्या शब्द विद् धतु से बना है। इसी प्रकार शब्दों की तुलना करके पर्याय शब्दों द्वारा अर्थ स्पष्ट किया जा सकता है। उपसर्गों के भेद बताते हुए उनका अर्थ समझाते हुए यह स्पष्ट करना चाहिए कि किस प्रकार इनके साथ शब्दों

के अर्थ मे परिवर्तन आता है। इसी तरह से सन्धि तथा समास से बने शब्दो के अर्थ परिवर्तित होते हैं। सन्धिच्छेद अथवा विग्रह द्वारा संयुक्त शब्दों का विश्लेषण करना चाहिए। विद्यार्थियों के मानसिक व कक्षा स्तर को ध्यान में रखते हुए इस विधि का कहाँ तक उपयोग उचित है, इस बात का अध्यापक को विशेष ध्यान देना चाहिए।

- **उद्बोध्न विधि–** 'उद्बोधन' शब्द का अर्थ है ज्ञान कराना, चेतना, याद दिलाना व जगाना। ऐसी क्रिया में विद्यार्थियों का सक्रिय सहयोग स्वाभाविक होगा जिससे यह विधि मनोवैज्ञानिक है। अध्यापक उद्बोधक की भूमिका निभाता है। वह शब्दार्थो का स्पष्टीकरण स्वंय न करके छात्रों से विभिन्न साध ानों द्वारा उद्बोधित करता है। श्यामपट का प्रयोग अथवा पाठ्य सहायक सामग्री इस विधि मे विशेष सहायक होती है। छात्र इसमें रुचि भी लेते है। अध्यापक प्रत्यक्ष प्रदर्शन द्वारा भी यह विधि अपना सकता है। जैसे संज्ञा, विशेषण, क्रिया आदि कराते हुए वस्तुओं एवं क्रियाओं का प्रत्यक्ष प्रदर्शन कर अर्थ समझाया जा सकता है। चित्र मॉडल आदि दर्शाते हुए छात्रों से पाठ को विकसित किया जा सकता है। उद्बोधित किया अर्थ शीघ्र स्मरण हो जाता है। प्राथमिक कक्षाओं में यह विधि अधिक उपयोगी है।
- **संयुक्त विधि–** गद्य शिक्षण की इन विधियों को अध्यापक अपनी एवं पाठ की आवश्यकतानुसार पश्थक एवं संयुक्त रूप से अपना सकता है। संयुक्त रूप से प्रयोग करके शिक्षण को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है। अर्थबोध विधि की उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता भले ही उसमें छात्र निष्क्रिय रहते हैं। इस विधि को आवश्यकतानुसार अपनाना उचित है। कई पाठों में आख्यान विधि प्रसंगों, घटनाओं आदि की विस्तश्त व्याख्या कर सकती है। इसी तरह विद्यार्थियों के सक्रिय योगदान के लिए प्रश्नोत्तर विधि सार्थक सिद्ध होती है। विश्लेषण विधि भाषायी तत्वों का स्पष्टीकरण करती है तथा उद्बोधन विधि विद्यार्थियों की विचार, कल्पना शक्ति आदि को प्रेरित करती है जिससे उनकी पाठ में निरन्तर रुचि बनी रहती है। अतः इन विधियों का संयुक्त रूप से प्रयोग ही उपयोगी है।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. **गद्य** शिक्षण की महता बताये ?
2. **गद्य** शिक्षण की विधियों का वर्णन करे ?

8.3.5 गद्य शिक्षण के सोपान

सोपान अर्थात् सीढ़ी, गद्य शिक्षण के सोपान से अभिप्राय उन विविध अंगों से है जिन्हें अध्यापक क्रमानुसार कक्षा में अपनाता है। गद्य शिक्षण के सोपानों के क्रम के लिए शिक्षकों व प्रशिक्षकों में मतभेद पाया जाता है लेकिन क्रम जो भी हो, शिक्षक का उद्देश्य यह होना चाहिए कि पाठ के अन्तर्गत कोई भी शिक्षण पहलू छूटने न पाए। विद्यार्थी सभी वैचारिक एवं भाषायी तत्वों से अवगत हो जाएं। उनमें स्वयं पाठ पढ़कर अर्थ ग्रहण करने तथा अपने विचारों को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करने की क्षमता उत्पन्न हो जाए। इन्हीं उद्देश्यों को मुख्य रखकर गद्य शिक्षण के सर्वमान्य आवश्यक सोपानों का उल्लेख निम्नलिखित रूप से किया गया है– गद्य शिक्षण की पाठ योजना तैयार करने के लिए महान शिक्षा शास्त्री हरबर्ट की पंच पद प्रणाली सर्वमान्य है, जिसमें पाठ के आवश्यकतानुसार इसमें परिवर्तन किया जा सकता है। शिक्षा शास्त्री वेस्टवे का कथन है कि "पाठन प्रणाली" कोई ऐसी प्रतिमा नहीं है जो पूर्णतया अपरिवर्तनीय है। इसके विपरीत वह सततः परिवर्तनशील है। अतः शिक्षा विशेषज्ञों ने इन्हीं पदों के आधार पर कुछ पाठ संकेत व सोपान निर्मित किए हैं, जिनका अनुसरण पाठ के शिक्षण में सहायक है। ये सोपान इस प्रकार है–

1.परिचय	2.प्रस्तावना	3.प्रस्तुतीकरण	4.स्पष्टीकरण	5.नियमीकरण	6.अभ्यास
(क) सहायक सामग्री	(क) पूर्व ज्ञान परीक्षण	(क) वाचन	(क) समवाय	(क) शिक्षक द्वारा आदर्श पाठ	(क) पुनरावृति
(ख) सामान्य उद्देश्य	(ख) उद्देश्य कथन	(ख) व्याख्या	(ख) विचार विश्लेषण		(ख) गृह कार्य
(ग) विशिष्ट उद्देश्य		(ग) श्यामपटट कार्य	(ग) कक्षा कार्य निरीक्षण	(ख) अनुकरण पाठ	
(घ) पूर्व ज्ञान			(घ) बोध प्रश्न		

इन सोपानों का विस्तशत विवेचन निम्न प्रकार से है–

1. **परिचय –**

(i) सहायक सामग्री – छोटी कक्षाओं में सहायक सामग्री के द्वारा प्रस्तावना का आरम्भ किया जा सकता है जैसे यदि शिक्षक को विद्यार्थियों को जवाहरलाल नेहरू का पाठ पढ़ाना है तो उन्हें जवाहरलाल नेहरू का चित्र दिखाकर प्रश्न पूछे जा सकते है।

(ii) सामान्य उद्देश्य– सामान्य उद्देश्य का सम्बन्ध विषय से है। गद्य की विभिन्न विधाओं जैसे निबन्ध, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि के शिक्षण के अपने सामान्य उद्देश्य हैं उनका संक्षिप्त परिचय पाठ योजना में दिया जा सकता है जैसे लेखक के भावों व विचारों को ग्रहण व व्यक्त करने की योग्यता उत्पन्न करना, शुद्ध उच्चारण की योग्यता उत्पन्न करना आदि।

(iii) विशिष्ट उद्देश्य– विशिष्ट उद्देश्यों का सम्बन्ध उपविषय से होता है। इनके निर्धारण में प्रस्तुत पाठ के सभी शिक्षण पहलुओं का ध्यान रखना आवश्यक होता है। उदाहरणार्थ, यदि विद्यार्थियों को कहानी कराना चाहते हैं तो इससे कौन सी योग्यताएं विकसित करना चाहते हैं उनका सक्षिप्त परिचय दिया जाए।

(iv) पूर्व ज्ञान– शिक्षण सिद्वान्तों, जैसे ज्ञात से अज्ञात की ओर, सरलता से कठिनता की ओर आदि का परिपालन करते हुए छात्रों के उस पूर्वज्ञान का उल्लेख जिसे आधार बनाकर प्रस्तुत पाठ प्रस्तावित किया जा सकता है।

2. **प्रस्तावना –** वास्तविक शिक्षण प्रस्तावना से ही प्रारम्भ होता है। इसका मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को विषय वस्तु की तरफ आकशष्ट करना है। अतः प्रस्तावना रोचक व अभिप्रेरक होनी चाहिए। इस सोपान में पूर्व ज्ञान परीक्षण व उद्देश्यकथन किया जाता है।

(i) पूर्व ज्ञान परीक्षण –विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान का परीक्षण निम्न प्रकार से किया जा सकता है–

– पूर्व ज्ञान पर आधारित प्रश्नों द्वारा।

– लेखक के जीवन व साहित्यिक परिचय द्वारा।

– शैक्षणिक उपकरणों की सहायता से।

– यदि प्रस्तुत पाठ पहले पाठ का द्वितीय भाग है तो प्रश्न पहले पाठ से सम्बन्धित हो सकते है।

– प्रस्तुत विषय सामग्री सम्बन्धी वर्णन, प्रसंग के माध्यम से।

प्रस्तावना अध्कि लम्बी नहीं होनी चाहिए। प्रश्न उद्देश्यों की पूर्ति करने वाले हों तथा मनोवैज्ञानिक क्रम से व्यवस्थित किए जाएं। प्रस्तावना पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित होनी चाहिए।

(ii) उद्देश्य कथन–पूर्व ज्ञान परीक्षा के उपरान्त उसी के आधार पर उद्देश्य कथन करना चाहिए जो सक्षिप्त और स्पष्ट हो। पाठ के शीर्षक को श्यामपट पर लिखा जाए। उद्देश्य का स्पष्टीकरण हो जाने से वह अपने अवधान और परिश्रम को उद्देश्य के चारों ओर केन्द्रित कर देते हैं और विषय भी क्रमबद्ध रूप से आगे बढ़ता है। यदि विषय पाठ्य पुस्तक का है तो छात्रों की सुविधा के लिए पृष्ठ संख्या बताना आवश्यक है।

3. **प्रस्तुतीकरण–** गद्य के पाठ प्रायः बडे होते हैं इसलिए पाठों को भावों की समानता की दृष्टि से दो या दो से अधिक भागों में विभाजित करना चाहिए। प्रस्तुतीकरण में विद्यार्थियों के सामने प्रकरण प्रस्तुत किया जाता है। इसलिए अब शिक्षक का कार्य ज्ञान का प्रस्तुतीकरण करना हो जाता है। उद्देश्य कथन के समाप्त होने के बाद विद्यार्थी का ध्यान नवीन पाठ पर केन्द्रित हो जाता है। परन्तु समस्या यह है कि नवीन पाठ को किस प्रकार प्रस्तुत किया जाए ? प्रस्तुतीकरण से अभिप्राय नवीन ज्ञान को प्रस्तुत करना है जिसमें निम्नलिखित पहलू है–

(i) वाचन–वाचन का अर्थ है पढ़ते हुए अर्थ ग्रहण करना, जो मुखर से सस्वर, अनुकरण तथा मौन तीन प्रकार का होता है वाचन गद्य तथा पद्य शिक्षण का महत्वपूर्ण अंग है। वाचन की विस्तश्त जानकारी वाचन के पाठ में दी गई है। यहां संक्षिप्त रूप से इनका वर्णन किया गया है।

(क) आदर्श वाचन–शिक्षक को आदर्श वाचन की ओर मुख्य रूप से ध्यान देना चाहिए तथा उस पाठ का वाचन प्रभावशाली तरीके से करना चाहिए। आदर्श वाचन करते समय शिक्षक को निम्नलिखित बातों की ओर ध्यान देना चाहिए।

- ◆ जिस समय शिक्षक वाचन कर रहा हो, उस समय विद्यार्थी पुस्तक खोलकर नहीं देखें बल्कि पुस्तक को बन्द करके शिक्षक की ओर देखें। ऐसा करने पर विद्यार्थी शिक्षक की मुख की आकशति के द्वारा भाव समझ सकेंगे और उच्चारण तथा पढ़ने की गति की ओर उनका ध्यान रहेगा। अनुकरण वाचन के लिए भी तैयार हो सकेंगे।
- ◆ वचन करते समय शिक्षक को अपने खड़े होने के ढंग तथा पुस्तक को पकड़ने के ढंग आदि का भी ध्यान रखना चाहिए। झुककर या टेढे होकर खड़े होने के स्थान पर सीधे खड़ा होना चाहिए तथा बायें हाथ में पुस्तक लेकर दाये हाथ को स्वतन्त्र संचालन के लिए छोड दिया जाए।
- ◆ वाचन करते समय शिक्षक को अपना चित प्रसन्न रखना चाहिए। मुख पर नीरसता न होकर मृदु मुस्कान रहनी चाहिए।
- ◆ वाचन करते समय विराम आदि चिन्हों का ध्यान विशेष रूप से रखा जाए तथा भाव के अनुसार ही ध्वनि का उतार–चढाव होना चाहिए।
- ◆ वाचन करते समय पाठ्य सामग्री के भावों के अनुसार मुख की आकशति बनायी जाए। हाव–भाव भी संगत होने चाहिए।

- वाचन करते समय परिस्थिति तथा आवश्यकता के अनुसार सीमित मात्रा में अंगों को संचालन किया जाए।

(ख) अनुकरण वाचन—अध्यापक के आदर्श वाचन के उपरान्त विद्यार्थी अध्यापक की ही तरह हाव—भाव के साथ बोलने का प्रयत्न करते हैं जिसे अनुकरण वाचन कहा गया है। छात्रों द्वारा अनुकरण वाचन करते समय अध्यापक को उनकी उच्चारण सम्बन्धी त्रशटियों की ओर विशेष सावधान रहना चाहिए जिनका अनुकरण वाचन के उपरान्त संशोधन करना चाहिए।

(ग) मौन वाचन—मौन वाचन कराने का प्रमुख उद्देश्य छात्रों को गद्य पाठ के सार तत्व को समझने तथा मनन करने का अवसर प्रदान करना है। इसलिए शब्द व्याख्या हो जाने के पश्चात् मौन वाचन का सोपान आता है। मौन पाठ की सार्थकता गहन अध्ययन वाले गद्य पाठों में अधिक सिद्ध होती है। अध्यापक को मौन वाचन कराते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि विद्यार्थी शान्त भाव से पढ़ रहे हों।

गद्य शिक्षण के प्रस्तुतीकरण सोपान का प्रारम्भ मौन वाचन से प्रारम्भ हो अथवा आदर्श वाचन से, उस पर शिक्षा शास्त्रियों के भिन्न—भिन्न मत हैं जिनके निष्कर्षस्वरूप कहा जा सकता है कि प्राथमिक स्तर की कक्षाओं पर गद्य शिक्षण का प्रारम्भ आदर्श पाठ द्वारा ही होना चाहिए। अध्यापक गद्य पाठ का आदर्श वाचन विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करे। तत्पश्चात् उनके द्वारा अनुकरण वाचन कराकर उनकी अशृद्धियों का संशोधन करना चाहिए। कक्षा छठी से गद्य शिक्षण का प्रारम्भ मौन वाचन से करना अधिक मनोवैज्ञानिक और सोद्शय सिद्ध होता है क्योंकि इस अवस्था तक छात्रों का अनुकरण वाचन का समुचित अभ्यास हो चुका होता है। यदि वे प्रारम्भ में मौन वाचन द्वारा प्रस्तुत पाठ का केन्द्रीय भाव ग्रहण करने में कठिनाई अनुभव करें तो भी अध्यापक को उन्हें मौन वाचन में प्रवृत्त करना चाहिए, क्योंकि मौन वाचन में छात्रों का ध्यान भाव व विचार ग्रहण पर अवश्य केन्द्रित रहता है।

(ii) भाषा कार्य, व्याख्या एवं विचार विश्लेषण —इसके अन्तर्गत विस्तार से शब्दार्थ, शब्द प्रयोग, उच्चारण —प्रशिक्षण, प्रस्तुत—अप्रस्तुत अर्थ, अर्थ—ग्रहण, विचार—विश्लेषण, साहित्यि सौन्दर्य तत्वों को बोध, सराहना आदि के सम्बन्ध में प्रश्नोत्तर प्रणाली के शिक्षण कार्य सम्पन्न होना चाहिए। शिक्षक आवश्यकतानुसार प्रेरणात्मक एवं पाठ—विकासात्मक प्रश्न पूछेगा और छात्रों में अभीष्ट उत्तर प्राप्त करते हुए आगे बढ़ता चलेगा। पाठ विकास का यह सोपान सबसे महत्वपूर्ण है। इस सोपान के मुख्यतः दो अंग है—

(क) भाषा सम्बन्धी शिक्षण —भाषा सम्बन्धी शिक्षण में शब्द भण्डार की अभिवृद्धि मुख्य कार्य है। पाठ में आए हुए कठिन एवं अपरिचित शब्दों के आधार पर शिक्षक इसका प्रयत्न करता है। इसकी अनेक विधियाँ है—

- **पर्याय तथा समानार्थी शब्द** —शब्दार्थ बताने की परम्परागत विधि यही हैं, जैसे— भास्कर—सूर्य, बसुन्धरा—पृथ्वी पर्यायवाची शब्दों के ज्ञान से बालकों के शब्द भण्डार की अभिवृद्धि होती है। इन समानार्थी शब्दों के सूक्ष्म अन्तर को भी यथा प्रसंग स्पष्ट कर देना चाहिए।

- **अनेकार्थी शब्दो का ज्ञान**—जहां तक एक शब्द के अनेक अर्थ होते है, वहां प्रस्तुत प्रसंग के अनुसार शब्द का अर्थ विशेष रूप से बताना चाहिए और आवश्यकतानुसार अन्य अर्थ भी बता देने चाहिए, जैसेः— कर—किरण, हाथ, सारंग—कमल, मुरली—मृग आदि।

- **सहचर शब्द**—सहचर शब्द कभी विपरीतार्थक, जेसे हर्ष—विषाद, कभी मिलते—जुलते अर्थ वाले, जैसे, ईर्श्या—द्वेष, अन्वेषण—आविष्कार । कभी भिन्नार्थक पर समानप्राय उच्चरित, जैसे अनल—अनिल आदि रूपों में आते है। इनके अर्थ स्पष्ट हो जाने चाहिए। ऐसे युग्म शब्दो का उल्लेख शब्द—शिक्षण के अध्याय में किया जा चुका है।

- **वाक्य प्रयोग द्वारा**—कुछ शब्दों को वाक्यों में प्रयोग करके समझाया जा सकता है। वाक्य प्रयोग विद्यार्थियों से भी कराए जाते है। इस विधि के प्रयोग द्वारा विद्यार्थियों में शब्द के अर्थ को समझने की उत्सुकता बनी रहती है।

- **प्रसंग कथन के द्वारा**—प्रसंग कथन के द्वारा भी अर्थ को स्पष्ट किया जा सकता है।

- **विलोम शब्द द्वारा**—विलोम शब्दों के अर्थ स्पष्ट करने में बहुत सरलता रहती है। जैसे दिन शब्द का विलोम रात बताकर विद्यार्थियों को समझाया जा सकता है।

- **सन्धि अथवा समास विच्छेद द्वारा**—शब्दों को सन्धि विच्छेद के द्वारा भी समझाया जा सकता है। जैसे 'महर्षि' शब्द को सन्धि—विच्छेद के द्वारा इस प्रकार भी समझाया जाएंगाः महाॠषि तथा त्रिमूर्ती=त्रि+मूर्ती।

- **प्रतीकात्मक या रूपक शब्दों की व्याख्या**—ऐसे शब्दों का अर्थ व्याख्या द्वारा स्पष्ट किया जाए, जैसे, उषा—प्रसन्नता या प्रफुल्लता, रात्रि दुःख, अंधकार—अज्ञान, प्रकाश—सुख या ज्ञान आदि।

- **व्याख्या, परिभाषा और उदाहरण द्वारा**—अध्यात्म, पुरूषार्थ, निर्वाण आदि शब्दों की व्याख्या द्वारा ही स्पष्ट किया जा सकता है।

- **व्यत्पत्ति द्वारा**—कुछ शब्दों का अर्थ उनके मूल रूप को, जिनसे वे निकाले है, सामने रखकर स्पष्ट किया जा सकता है।

- **मुहावरों कहावतों** आदि का अर्थ और प्रयोग दोनों ही आवश्यक है।

(ख) विषय सामग्री सम्बन्ध शिक्षण—इसके अन्तर्गत वस्तुबोध, व्याख्या, स्पष्टीकरण, विचार विश्लेषण, सराहना, समीक्षा आदि सम्बन्धी प्रश्न आते है। सामान्य अर्थ के साथ साथ विशेष एवं लक्षणिक अर्थो को भी स्पष्ट कराने का प्रयत्न करना चाहिए। यह ध्यान रखना चाहिए कि सभी तथ्य, भाव, विचार आदि बालक हृदयंगम कर सकें। यदि छात्रा विविध अर्थान्वितियों को पश्थक—पश्थक स्पष्ट कर सकें, पठित सामग्री की विचार—श्रश्ंखला बता सकें, यथा प्रसंग अंतः कथाओं को जान सकें, शीर्षक दे सकें, सारांश बता सकें अपने शब्दों में भावार्थ प्रकट कर सकें, चरित्र चित्रण कर सकें, घटना का विवरण या वर्णन प्रस्तुत कर सकें, भाव एवं विचार सौन्दर्य को परख सकें, मर्मस्पर्शी स्थलों को पहिचान सकें और भावानुभूति कर सकें, समीक्षात्मक एवं सराहना सम्बन्धी प्रश्नों के उत्तर दे सकें, तभी समझना चाहिए कि पठन सफल हुआ है।

विषय सामग्री के बोध में व्याख्या का विशेष महत्व है। भाषा एवं अर्थ की दश्ष्टि से किसी कठिन बात को सरल करके समझना ही व्याख्या है। पाठ में आई हुई प्रत्येक कठिनाई या जटिलता को इस रूप में स्पष्ट करना ही बालक उसे तत्काल ग्रहण कर ले, व्याख्या का उद्‌देश्य है। भाषा पाठों में शाब्दिक कठिनाइयों को समझने के साथ—साथ भावों एवं विचारों की कठिनाइयाँ भी

सुलझानी पड़ती है। व्याख्या करने में वही शिक्षक सफल होता है जिसका भाषा पर अधिकार हो और जिसका शब्द भण्डार प्रचुर एवं व्यापक हो। उसे विषय का अच्छा ज्ञान हो और अन्य विषयों का भी सामान्य ज्ञान हो जिसका समय पर उपयोग कर सके। व्याख्या करने में निम्नलिखित बालकों को ध्यान रखना आवश्यक है–

- व्याख्या करने में सरल भाषा का प्रयोग अपेक्षित है अन्यथा व्याख्या का उद्देश्य ही नष्ट हो जाता है। कुछ शिक्षकों में व्याख्या करते समय भी क्लिष्ट शब्दावली के प्रयोग का मोह बना रहता है। यह दृष्टिकोण सर्वथा त्याज्य है। सरल एवं छोटे वाक्यों में व्याख्या प्रस्तुत करने से बालक आसानी से विचारों एवं भावों को ग्रहण कर लेते हैं।
- व्याख्या स्पष्ट, क्रमयुक्त एवं सुसम्बद्ध हो। बालको की योग्यता एवं ग्राह्यता को ध्यान में रखकर व्याख्या करनी चाहिए।
- व्याख्या न तो इतनी लम्बी हो कि अनावश्यक आवृति हो और इतनी संक्षिप्त कि कठिनाई ही न सुलक्ष सके। प्रसंगानुकूल उचित रूप में व्याख्या होनी चाहिए, जो बातें बालक स्वयं समझ सकते है। उनकी व्याख्या अनावश्यक है। शिक्षक प्रश्नों द्वारा समझ सकता है कि बालक कहां समझ रहे है और कहाँ नही समझ रहे है। व्याख्या करने से पहले विचार–प्रेरक प्रश्नों द्वारा छात्रों को स्वयं अर्थ एवं भाव ग्रहण करने के लिए उद्बद्ध करना चाहिए। यदि वे स्वयं ही अर्थ निकाल लेते है तो उन्हें बहुत आनन्द आता है। इस पर भी यदि पूरी बात स्पष्ट न हो तो व्याख्या अवश्य करनी चाहिए।
- व्याख्या को रोचक एवं सजीव बनाने के लिए आवश्यक उदाहरणों एवं दशष्टिान्तों का प्रयोग करना चाहिए।
- व्याख्या के बीच–बीच में छात्रों को प्रश्न पूछने अथवा अपनी कठिनाई प्रस्तुत करने का अवसर देना चाहिए। विद्यार्थियों की शंकाओं का निराकरण करने से व्याख्या सरल और सुग्राह्य हो जाती है।
- व्याख्या करते समय बालकों का ध्यान मुख्य–विषय, प्रसंग या स्थल की ओर आकशष्ट करना चाहिए।
- व्याख्या उपदेशात्मक नहीं होनी चाहिए। वह विषय को स्पष्ट करने का एक साधन या युक्ति मात्र है, स्वतः कोई साध्य नहीं है।
- व्याख्या के उपरांत प्रश्नों द्वारा यह जाँच कर लेना चाहिए कि छात्रों ने समझ लिया है। यदि कुछ कमी प्रतीत हो तो पुनः समझा देना चाहिए।

यह ध्यान रखना चाहिए कि शब्दार्थ तथा भाषा कार्य इस वस्तु के बोध एवं विचार– विश्लेषण के सहायक हैं, अतः दोनों कार्य एक संगति एवं क्रमायोजित रूप में हों। एक दूसरे से सर्वथा स्वतन्त्र इनका कोई अस्तित्व नहीं। अतः पाठ–विकास में दोनों कार्य यथाक्रम साथ–साथ चलते रहेंगे। कक्षा के स्तर को देखते हुए शब्दों की व्याख्या करनी चाहिए।

(iii)श्यामपटट् पर कार्य–शिक्षण कार्य में श्यामपटट् का प्रयोग अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह एक ऐसा सहायक साधन है जो सर्वदा शिक्षक की सहायता के लिये तैयार रहता है। इसके माध्यम

से अध्यापक शिक्षण को सुबोध एवं सुगम बना सकता है। केवल अध्यापक के लिये ही नहीं बल्कि विद्यार्थियों के लिए भी यह अत्यन्त उपयोगी है। यह विद्यार्थियों को सक्रिय बनाता है और उनका ध्यान शिक्षण की ओर आकर्षित रखता है अतः गद्य शिक्षण में इसका प्रयोग किया जाना चाहिए। गद्य शिक्षण के सभी सोपानों पर इसका प्रयोग किया जा सकता है। इस पर अध्यापक पाठ का शीर्षक लिखकर विद्यार्थियों को पाठ की ओर आकर्षित कर सकता है। आदर्श पाठ और अनुकरण पाठ के पश्चात् कठिन शब्दों को श्यामपट पर लिखकर उनके उच्चारण का व्यक्तिगत तथा सामूहिक अभ्यास करवा सकता है। तथा अक्षर विन्यास की सूक्ष्मताओं का समझा सकता है। 'व्याख्या' सोपान पर शब्दों की व्युत्पति, विलोम, पर्यायवाची, वाक्य प्रयोग आदि में श्यामपटट् का प्रयोग किया जा सकता है। 'विचार विश्लेषण सोपान पर विचारों को शीषकों तथा उपशीर्षको में श्यामपटट् पर लिख सकता है। 'आवृति' और 'गृहकार्य' सोपानों में प्रश्न लिखने के लिये श्यामपटट् का प्रयोग कर सकता है। कहने का तात्पर्य यह गद्य शिक्षण का कोई सोपान ऐसा नही जहां श्यामपटट् का प्रयोग न किया जा सकता हो। अतः अध्यापक को श्यामपटट् का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। कभी कभी विद्यार्थियों से भी श्यामपटट् का प्रयोग करवाना चाहिए। जैसे वाक्य बनवाना, कठिन शब्द लिखवाना आदि। 'आवृति' के पश्चात् विद्यार्थियों को श्यामपटट् पर लिखे सारांश, प्रश्नों आदि को अपनी अपनी कॉपियों पर उतारने का समय भी देना चाहिए। इस प्रकार श्यामपटट् के समुचित प्रयोग से शिक्षण कार्य को रोचक, सुबोध एवं सुगम बनाने मे सहायता मिलती है और विद्यार्थियों को भी शिक्षण के दौरान सक्रिय रखा जा सकता है।

4. स्पष्टीकरण

(i) **समवाय**—समवाय से अभिप्राय प्रस्तुत पाठ के स्पष्टीकरण के लिए उसका सह—सम्बन्ध छात्रों के दैनिक जीवन, उनके अनुभवों तथा अन्य विषयों के साथ जोड़ना। समवाय में शैक्षणिक सूत्रों व सिद्धान्तो का परिपालन करते हैं जैसे ज्ञात से अज्ञात, सरलता से कठिनताकी ओर। इससे शिक्षण सहज व रोचक हो जाता है।

(ii) **विचार वि**श्लेषण—विचार विश्लेषण वाचन तथा कठिन शब्दों के अर्थ निरूपण के पश्चात् अध्यापक विचार विश्लेषण की ओर बढ़ता है। इस के द्वारा अध्यापक भाषा— शिक्षण के महत्वपूर्ण उद्देश्य की पूर्ति करता है। भाषा शिक्षण या किसी पाठ के शिक्षण में अध्यापक के सम्मुख दो प्रधान उद्देश्य रहते है। (क) भाषा के ज्ञान में वृद्वि और (ख) विचार ग्रहण करना। पहला उद्देश्य वाचन तथा व्याख्या द्वारा पूरा किया जाता है और दूसरा उद्देश्य विश्लेषण द्वारा पूरा किया जाता है।

भिन्न भिन्न प्रकार के पाठों में भिन्न भिन्न प्रकार के विचार होते हैं। विचारों के विश्लेषण के लिये प्रश्नोत्तर, उदाहरण, दृष्टान्त, तुलना आदि का प्रयोग किया जा सकता है। विद्यार्थियों को शिक्षण के दौरान सक्रिय बनाये रखने के लिये बहुध विश्लेषणात्मक प्रश्नों का ही प्रयोग किया जाता है अर्थात अध्यापक विद्यार्थियों से प्रश्न पूछ कर उन से विचारों का विश्लेषण कराता है, परन्तु विद्यार्थियों के उत्तर से विचारों का वांछित विश्लेषण नही हो पाता। इसलिए अध्यापक को उदाहरण, दश्ष्टांत, तुलना आदि विधि से भी विचारों का विश्लेषण करना चाहिए और बीच में विद्यार्थियों को मानसिक रूप से सक्रिय बनाये रखने के लिये उन से प्रश्न भी पूछते रहना चाहिए। विचार विश्लेषण में निम्नलिखित बातों की ओर अवश्य ध्यान रखना चाहिएः—

- जटिल भावों तथा विचारों का स्पष्टीकरण होना चाहिए। उसके लिये दश्ष्टान्त, उदाहरण, प्रदर्शन आदि विभिन्न युक्तियों का प्रयोग करना चाहिए। इनका प्रयोग करते समय विद्यार्थियों के मानसिक एवं बौद्धिक स्तर का अवश्य ध्यान रखना चाहिए।
- कई बार एक गद्यांश में कई विचारों की अभिव्यक्ति हो जाती है। ऐसी स्थिति में विचारों का क्रमानुसार संग्रह करके उन्हे विद्यार्थियों के लिये सुबोध बनाना चाहिए।
- विचारों का विद्यार्थियों के आत्मानुभवों के साथ सम्बन्ध जोड़ना चाहिए। नए विचारों का विद्यार्थियों के पूर्वविचारों के साथ सम्बन्ध जोडना मनोवैज्ञानिक दशष्टिकोण से महत्वपूर्ण है।
- विद्यार्थियों को इस योग्य बनाना चाहिए कि वे गद्यांश में आए विचारों को अच्छी तरह समझ सकें और अपने विचारों के साथ उनका तादात्म्य स्थापित कर सकें। यदि लेखक के विचारों के साथ उनका मतभेद हो तो उन्हें दोनों की तुलना करने को कहना चाहिए और विचारों की भिन्नता का महत्व भी समझाना चाहिए।
- लेखक का संक्षिप्त परिचय भी देना चाहिए। इस से विद्यार्थियों को उसके विचार सूझने में सहायता मिलती है।
- विचार विश्लेषण के पश्चात् विद्यार्थियों का बोध परीक्षण भी करना चाहिए। यह विचार विश्लेषण का अन्तिम सोपान है। पठित गद्यांश से सम्बन्धित प्रश्न पूछ कर अध्यापक को इस बात की जांच करनी चाहिए कि वे गद्यांश के विचारों को कहा तक समझ पाये है।

(iii) **कक्षा कार्य निरीक्षण–** शब्दों, प्रसंगों आदि की व्याख्या एवं स्पष्टीकरण के लिए अध्यापक ने श्यामपटट् पर जो कार्य किया अथवा विद्यार्थियों को कुछ लिखने को कहा उसका निरीक्षण आवश्यक है। इससे छात्रों की सतर्कता का परिचय मिलता है तथा उनकी अशुद्धियों का संशोधन भी होता है।

(iv) **बोध प्रश्न** –बोध प्रश्न गद्यांश के मध्य में छात्रों की सतर्कता बनाए रखने के लिए पूछे जा सकते है तथा यह जानने के लिए उन्हें विषय का कितना ज्ञान हुआ है।

5. **नियमीकरण–** मूल पाठ के ज्ञान को पूर्णरूप से ग्रहण करने के पश्चात् छात्र किसी एक निष्कर्ष पर पहुँचता है, जिसके सहायक तत्व निम्न प्रकार के हैं–

(i) **पुनः आदर्शवाचन** – प्रभावान्विति की दृष्टि से पुनः आदर्श वाचन का विशेष महत्व है। अब तक विषय वस्तु का स्पष्टीकरण हो चुका होता है तथा अध्यापक द्वारा किसी पुनः आदर्श वाचन छात्रों को निष्कर्ष तक पहुँचाने में सहायक होता है।

(ii) **अनुकरण वाचन–** विद्यार्थी सस्वर करेंगे। तीन–चार विद्यार्थियों को यह अवसर दिया जा सकता है। शिक्षक का आदर्श पाठ उनके लिए पथ–प्रदर्शन का काम करता है। छात्र शिक्षक अनुकरण करने का प्रयास करेंगे।

गद्य पाठ प्रायः दो अन्वितियों में पढ़ाया जाता है। प्रथम अन्विति पढा लेने पर द्वितीय अन्विति भी इसी प्रकार अर्थात् मौन पाठ, भाषा कार्य, व्याख्या एवं स्पष्टीकरण, आदर्श पाठ, अनुकरण पाठ के सोपानों द्वारा पीढ़ा ली जायेगी। फिर निम्नांकित सोपानों का प्रयोग किया जायेगा।

6. **अभ्यास**– गद्याश शिक्षण में यह अन्तिम सोपान है जो निम्न प्रकार से कराया जा सकता है–

(i) **आवृति–**गद्य शिक्षण के इस सोपान पर पढ़े हुये गद्यांश की आवशति करनी होती है। आवृति के मुख्यतः दो लाभ हैं– (क) गद्यांश के शिक्षण की दोहराई हो जाती है और उसके कठिन अंशों को एक बार फिर विद्यार्थियो के मस्तिष्क में बिठाने का अवसर मिल जाता है। (ख) अध्यापक को ज्ञात हो जाता है कि वे विद्यार्थियों के भाषा ज्ञान में कहा तक वशद्वि हुई और पठित गद्यांश के विचारों तथा भावों को विद्यार्थी कहां तक समझ पाये है।आवशति में निम्नलिखित बातों की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए :–

- ◆ आवृति विद्यार्थियों की सहायता से होनी चाहिए। अध्यापक को केवल उन अंशों को स्पष्ट करने का प्रयास करना चाहिए जिन के बारे में विद्यार्थियों को कुछ भ्रम हो।
- ◆ आवृति में विद्यार्थियों की सहायता प्राप्त करने के लिये उन से गद्यांश से सम्बन्धित प्रश्न पूछने चाहिए। प्रश्न छोटे और सटीक होने चाहिए।
- ◆ आवृति केवल दो चार योग्य विद्यार्थियों तक सीमित नहीं होनी चाहिए बल्कि औसत तथा कमजोर विद्यार्थियों से भी आवश्त्यात्मक प्रश्न पूछने चाहिए।
- ◆ यदि समूचे पाठ को विभिन्न इकाईयों मे पढाया गया हो तो प्रत्येक इकाई की आवृति के पश्चात् समूचे पाठ की आवशति की जानी चाहिए ताकि विद्यार्थी सभी इकाईयो मे सम्बन्ध स्थापित कर के समूचे पाठ के विचारों को समझ सके।
- ◆ आवृति सोपान पर विद्यार्थियों को रचनात्मक कार्यो के लिये प्रेरित करना चाहिए। उन्हें उत्साहित करना चाहिए कि वे गद्यांश में प्रस्तुत विचारों की स्वतंत्रा रूप से व्याख्या करें और अपने विचार प्रकट करें।

(ii) **गृहकार्य–**यह गद्य शिक्षण का अन्तिम सोपान है। इस में विद्यार्थियों को घर पर करने के लिये काम दिया जाता है। गशहकार्य में विद्यार्थियों को–गद्यांश का सार लिखने को कहा जा सकता है।

- ◆ उन्हें गद्यांश में प्रस्तुत विचारों की स्वतन्त्र रूप से व्याख्या करने को कहा जा सकता है।

- ◆ उन्हें कुछ प्रश्नों के उत्तर लिख लाने को कहा जा सकता है।
- ◆ कठिन शब्दों को वाक्यों में प्रयुक्त करने को कहा जा सकता है– आदि।

गृहकार्य देना चाहिए या नहीं यह एक विवादस्पद प्रश्न है। कुछ विद्वानों का विचार है कि गृहकार्य विद्यार्थियों के कन्धें पर अनावश्यक बोझ है। गश्हकार्य की चिन्ता में न तो वे खेल पाते हैं, न ही रोचक कार्यो मे उनकी प्रवृति विकसित होती है। और न ही घर के काम–काज में माता पिता को सहयोग दे पाते हैं। अतः बच्चों को गश्हकार्य नहीं दिया जाना चाहिए। इस के विपरीत कुछ विद्वानों का विचार है कि गृहकार्य अवश्य मिलना चाहिए क्योंकि इससे स्वतंत्रातापूर्वक अभ्यास करने का अवसर मिलता है जिसके परिणाम स्वरूप उनके भाषा कौशल का विकास होता है और उनके ज्ञान को स्थायित्व प्राप्त होता है। इस के अतिरिक्त उनमें स्वतंत्रा रूप से अध्ययन करने की प्रवशति का विकास होता है। कुछ सीमा तक दोनों दृष्टिकोण उचित है। हमारे विचार में दोनों दृष्टिकोणों का समन्वय होना चाहिए और विद्यार्थियों को इतना गश्हकार्य देना चाहिए जिसे वे अन्य कार्य करते हुये आसानी से कर सकें।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. **गद्य** शिक्षण के सोपान कौन–कौन से है?

8.3.6 निबन्ध पाठ योजना का नमूना

पाठ योजना

दिनांक................................	हिन्दी–निबन्ध	कलांश–चतुर्थ
	प्रकरण–मेरा बाल्यकाल	कक्षा–सप्तम्
	(गांधीजी की आत्मकथा से)	

◆ **सामान्य उद्देश्य**–हिन्दी गद्य शिक्षण के सामान्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. छात्रों के शब्द भण्डार में वृद्धि करना।
2. छात्रों मे वाचन कौशल का विकास करना।
3. शब्दों के शुद्ध उच्चारण व शुद्ध लेखन के कौशल का विकास करना।
4. छात्रों में भाषा सम्बन्धी ज्ञान का विकास करना।
5. छात्रों को नवीन ज्ञान प्रदान करना।
6. छात्रों में मातृभाषा के प्रति रूचि उत्पन्न करना।
7. छात्रों में आलोचनात्मक प्रवृति का विकास करना।
8. छात्रों में अच्छे भावों एवं विचारों का विकास करना।

◆ **विशिष्ट उद्देश्य** – प्रस्तुतीप्रकरण के शिक्षण से निम्नांकित व्यवहार परिवर्तन का प्रयास किया जायगा–

1. छात्रों को महात्मा गाँधी के बाल्यकाल के सम्बन्ध में जानकारी देना।
2. छात्रों को आत्मकथा का बोध कराना।
3. छात्रों को महात्मा गांधी की माता के जीवन आदर्शो का बोध कराना।
4. छात्रों को महात्मा गांधी के बाल्यकाल के आदर्शो एवं शिक्षा से अवगत कराना।
5. छात्रों को 'श्रवण कुमार' की पितश्-भक्ति से अवगत कराना।
6. छात्रों को अच्छे आचरण की प्ररेणा देना। छात्रों को अच्छे आचरण की प्रेरणा देना।

- **पूर्व ज्ञान–** छात्र महात्मा गांधी के नाम से परिचित हैं तथा श्रवण कुमार की पित्–भक्ति की कहानी भी सुन रखी है।
- **सहायक सामग्री–**महात्मा गाधी का चित्र, तथा श्रवण कुमार को कांवर में अपने माता–पिता का हरिद्वार ले जाते हुए का चार्ट/चित्र।
- **प्रस्तुतीकरण**

शिक्षण बिन्दु	शिक्षक की क्रियाएं	छात्रों की क्रियाएं	उद्देश्य एवं मूल्यांकन
प्रस्तावना	प्र0–हमारे राष्ट्र–पिता कौन थे? (महात्मा गांधी का चित्र दिखाकर) प्र0–इन्होने देश के लिए क्या किया था?	महात्मा गांधी को राष्ट्र–पिता कहते है। यह चित्र महात्मा गांधी जी का है। उ0–भारत को आजाद कराया था।	विषय प्रवेश
उद्देश्य कथन	आज महात्मा गांधी जी के बाल्यकाल के सम्बन्ध में अध्ययन करेंगे।	छात्र ध्यानपूर्वक सुनेंगे	
आदर्श पाठ	शिक्षक गद्यांश को शुद्ध उच्चारण तथा स्पष्टवाणी से सस्वर पाठ करेगा।	छात्र पुस्तक में देखते जायेंगे तथा शब्दों के उच्चारण पर भी ध्यान देंगे। अध्यापक की ओर देखेंगे।	शुद्ध उच्चारण का अनुकरण।

मेरा बाल्यकाल

यह पाठ राष्ट्र पिता महात्मा गांधी की आत्मकथा से लिया गया है। गाँधी जी ने आत्मकथा अपनी मात्भाषा गुजराती में लिखी है। इसका हिन्दी में भी अनुवाद हो गया है। इस पाठ में बताया गया है कि माता की धर्मनिष्ठा तथा श्रवणकुमार और हरिश्चन्द्र की कथाओं का उन प्रभाव क्या पड़ा। मेरी माता जी साधवी और धर्मनिष्ठ थी। उनकी यही प्रतिमा मेरे मन पर अंकित है। पूजा पाठ किए बिना वे भोजन न करती। राज हवेली दर्शन के लिए जाया करती। जब से मैंने होश सम्भाला है, मुझे ये याद नहीं कि उन्होंने कभी भी चातुर्मास्य छोड़ा हो। कठिन से कठिन व्रत करने में भी वे हिचकती न थी और उन्हें दश्ढता से पूरा करती। बीमार पड जाने पर भी व्रत न छोडती। चातुर्मास्य में एक बार भोजन करना तो उनके लिए मामूली बात थी। एक चातुर्मास्य में उन्हें ऐसा व्रत लिया कि सूर्यनारायण के दर्शन होने पर ही भोजन किया जाए। इस चौमासे में हम लड़के आसमान की तरफ देखा करते कि कब सूरज दिखायी पड़े और कब मां खाना खाये। सब लोग जानते हैं कि

चौमासे में बहुत बार सूर्य– दर्शन मुश्किल से होते है। मुझे ऐसे दिन याद हैं, जब कि हमने सूर्य को निकला हुआ देखकर पुकारा– 'मां–मां, वह सूरज निकला' और जब तक मां जल्दी दौड़कर आती, सूरज छिप जाता। मां यह कहती हुई वापस चली जाती कि खैर कोई बात नही, ईश्वर नहीं चाहता कि आज खाना मिले और अपने कार्यो में व्यस्त हो जाती। इसी समय के दो और प्रसंग हैं जो मुझे सदा याद रहे है। पिता जी एक 'श्रवण पितश भक्ति' नामक नाटक खरीद लाए थे। उस पर मेरी दशष्टि पडे चाव से उसे पढ़ा। इन्हीं दिनों काठ के बक्स में शीशे की तस्वीर दिखाने वाले लोग भी आया करते थे। उनमें मैने यह चित्र भी देखा कि श्रवण अपने माता–पिता को काँवर में बैठाकर तीर्थयात्रा के लिए जा रहे हैं। ये दोनों चीजें अन्तस्तल पर अंकित हो गयी। मेरे मन में यह बात उठा करती कि मै भी श्रवण की तरह बनूँ। श्रवण की मश्त्यु पर उनके माता–पिता का विलाप अब भी मुझे याद है।

अनुकरण पाठशब्दों का शुद्व उच्चारण	शिक्षक दो–तीन छात्रों से अनुकरण पाठ करायेंगा। शिक्षक कठिन शब्दों का उच्चारण करायेगा।	छात्र शिक्षक के निर्देशन पर अनुकरण पाठ करेंगे। साध्वी, धर्मनिष्ठ, चातुर्मास्य, पितृ–भक्ति, व्यस्त, अन्तस्तल, श्रवण आदि का उच्चारण करेंगे।	शुद्व उच्चारण का अभ्यास कराना। शुद्व उच्चारण के कौशल का विकास करना।
शब्दार्थ	शिक्षक कठिन शब्दों का अर्थ श्यामपटट् पर लिखेगा। शब्द अर्थ प्रयोग सध्वी – पतिव्रता धर्मनिष्ठ– धर्म में पूरी आस्था चातुर्मास्य – वर्षाऋतु के चार माह व्यस्त– कार्य में संलग्न रहना अन्तस्तल –हृदय विलाप–रोना, रूदन करना धारण– विचार	छात्र अपनी पुस्तिका पर लिखेगे।	शब्द भण्डार में वृद्वि करना। लेखन का विकास करना।
मौन–पाठ	शब्दार्थ के पश्चात शिक्षक सभी छात्रों से मौन–पाठ करायेगा।	छात्र बिना होंठ हिलाये मौन पाठ करेंगे।	वचन के कौशल का विकास करना।
बोध प्रश्न	प्र0– यह गद्यांश कहाँ से लिया गया है?	उ0 –महात्मा गांधी की आत्मकथा से लिया है।	ज्ञान बोध कराना।
स्पष्टीकरण	महात्मा गांधी ने अपनी आत्मकथा गुजराती में लिखी थी इसका अनुवाद हिन्दी में किया गया प्र0–गांधी ने अपनी माताजी के सम्बन्ध में क्या लिखा है।	अपनी माँ के आदर्शो तथा अच्छे आचरणों का वर्णन किया है।	अच्छे आदर्शो एवं आचरणों का बोध कराना।

स्पष्टीकरण (विश्लेषण)	उनकी माताजी पतिव्रता, धर्म में आस्था रखने वाली, आदर्श महिला थी, पूजा– पाठ के बाद नित्य भोजन करती चातुमास्य अर्थात वर्षो के चार माह (आसाढ़ सावन, भादों तथा क्वार) में एक बार ही भोजन करती थी। सूर्य–दर्शन के बिना बरसात के दिनों में भोजन नहीं करती थी। अपने घर के कार्यो में सदैव लगी रहती थी।		
बोध प्रश्न	प्र0 उनकी माता जी कौन सा व्रत रखती और किस देवता का पूजन करती थीं?	उ0 –चातुर्मास्य व्रत रखती और सूर्य देवता का पूजन करती थी।	
	प्र0 उनके पिताजी कौन सी पुस्तक लाये थे?	उ0 श्रवण पितश भक्त नाटक लाये थे।	बोध प्रश्न से मूल्यांकन ।
श	प्र0 उस नाटक से क्या शिक्षा ग्रहण की थी?	उ0 श्रवण कुमार अपने माता–पिता को तीर्थ कराने काँवर में ले जा रहा था। यह उन्होंने चित्र में देखा था।	ज्ञान–बोध विकास करना।
	प्र0 श्रवण पितश भक्ति से क्या प्रेरणा मिली?	वे श्रवण कुमार की भांति पितश–भक्ति बनना चाहते थे।	अच्छे गुणों का आदर्श प्रस्तुत करना।
समानन्तर (उदाहरण)	तुलसीदास जी ने भी चौपाई में माता–पिता को विशेष सम्मान दिया। "वह सुत बढ़ भागी, मात–पितु अनुरागी।	ध्यान पूर्वक सुनेंगे	बोध तथा आदर्शो की पुष्टि करना।
स्पष्टीकरण (विश्लेषण)	वह पुत्र बड़ा भाग्यशाली होता है जो माता–पिता से प्रेम करता है और उनकी आज्ञा पालन करता है।उनके पिता ने उन्हें हरिश्चन्द नाटक भी दिया था। उससे उन्होंने कर्तव्य पथ पर दश्ढ रहने की शिक्षा ली थी।	छात्र ध्यान पूर्वक सुनेंगे।	छात्रों में माता–पिता के प्रति आदर भाव विकास करना। विकास करना । छात्रों में अच्छे आचरणों का विकास करना।
सस्वर पाठ	शिक्षक छात्रों से सस्वर पाठ करायेगा।	छात्र सस्वर पाठ करेंगे।	शुद्व उच्चारण का अभ्यास
पुनरावश्त्ति	प्र0 – गांधीजी की माताजी के क्या	वह साध्वी (पतिव्रता) तथा धर्मनिष्ठ	कराना। ज्ञान का मूल्यांकन।

प्रश्न	आदर्श थे?	महिला थीं।	
	प्र0 – गांधीजी के पिता ने कैसे शिक्षा दी थी	श्रवण–पितश–भक्ति तथा हरिश्चन्द्र नाटक लाकर उन्हें दिखलाया।	बोधगम्यता का मूल्यांकन।
	प्र0 – गांधीजी बाल्यकाल में क्या शिक्षा ग्रहण की?	उ0– माता से धर्मनिष्ठ कार्य में व्यस्त रहना।पिता ने माता–पिता के पति अनुराग हरिशचन्द्र नाटक से कर्त्तव्य निष्ठ की शिक्षा ली थी।	बोध का मूल्यांकन तथा अच्छे आचरणों का छात्रों मे विकास करना।
	प्र0 – गांधीजी ने बाल्यकाल से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है?	उ0– माता–पिता से प्रेम तथा आज्ञा–पालन करना, कर्त्तव्य निष्ठ होना।	छात्रों को अच्छे गुणों की प्रेरणा देना और उनका पालन करना।
गृहकार्य	गांधी के बाल्यकाल से शिक्षा और आदर्शो पर एक निबन्ध लिखिए।	छात्र गृहकार्य को लिखकर ले जाएं तथा पूरा करने का प्रयास करेगा।	अभ्यास हेतु अवसर देना। पारिपाक अवसर देना।

8.4 पद्य शिक्षण

पद्य अथवा पद्य क्या है इस विषय पर संसार के बडे–बडे कवियों, विचारकों, आलोचकों और आचार्यो ने अपनी–अपनी धारणा के अनुसार अपने मत व्यक्त किये हैं। वे सभी इतने अधिक तथा इतने विविध रूपों में हैं कि उन सबका न यहा उल्लेख हो सकता है और न प्रकरण में उनकी विशेष आवश्यकता ही है। फिर भी कविता का परिचय देते हुए शिक्षक को कभी इसकी आवश्यकता पड़ सकती है । इसलिए यहां एक दो पाश्चात्य तथा एक दो भारतीय आचार्यो के विचारों का उल्लेख कर देना अनुचित न होगा। आंग्ल भाषा के प्रसिद्ध कवि कॉलरिज का कहना है शब्दों का उत्तम क्रम विधन गद्य है तो उत्तम शब्दों का उत्तम पद्य क्रम विधान पद्य, इसी प्रकार हड्सन ने पद्य के शब्द सौन्दर्य से कुछ आगे जाकर उसे 'कल्पना और मनोवेगों द्वारा जीवन की व्याख्या' कहा है। वस्तुत हमें भी काव्य को 'मनोवेगमय और संगीतमय भाषा में मानव अन्तः करण की मूर्त और कलात्मक व्यंजना' कहना अच्छा लगता है। पद्य को केवल 'पद्यमय निबन्ध' या 'संगीतमय विचार' ही कहना पर्याप्त नहीं, क्योंकि पद्य का प्रभाव–क्षेत्र विशाल है, गहन है। यह मानव की सम्पूर्ण रूप से प्रभावित करती है। उसकी बुद्धि को ही नहीं उसकी भावना को, कल्पना को भी प्रभावित करती है। यह एक स्वीकृत तथ्य है कि कविता केवल मानव की भावनाओं और चेतन मन तक ही नहीं अपितु उसके अचेतन मन तक अपना प्रभाव डालती है।

8.4.1 पद्य शिक्षण का अर्थ एवं परिभाषा

कविता 'क', 'वि', 'ता' का योग है अर्थात् कल्पना, विचार एवं ताल जिस रचना में हैं वह कविता है। यह मन के भावों को व्यक्त करने का उत्तम साधन है जिसमें हम अपनी कल्पना शक्ति व रस छन्द व अलंकार युक्त भाषा का प्रयोग करते है। कविता वह संगीतमय विचार है जिसमें जीवन का प्रतिबिम्ब है। यह सर्वोत्तम शब्द योजना है जिसमें भाव, रस, अलंकार, छन्द, गुण आदि विविध परिचायक तत्व हैं। वस्तुतः कविता इन सभी तत्वों की समष्टि है। परन्तु आधुनिक कविता इन तत्वों से रहित है। आज की कविता हृदय के संवेगों व भावों से युक्त एक आत्मीय विचार है, भले ही इसमें छंद, अलंकार आदि की ओर ध्यान नहीं दिया जाता, तब भी वह कविता रहती है। काव्यत्व कविता के द्वारा प्रस्तुत भावानुभूति पर टिका होता है, उसे प्रस्तुत करने की शैली पर कम।

कविता की सृष्टि तभी होती है जब मानव हृदय में अनुभूति की तीव्रता होती है और भावों का ऐसा आवेग जो फूट पड़ने को आतुर हो। यह भाव या विचार हमारे मन को छू जाता है। कविता का अभिव्यक्ति कौशल, छंद, तुक, वर्ण –प्रयोग, शब्द चयन, अंलकार आदि हैं। कल्पना ओर वर्णन शैली की विशेषता से कविता में विलक्षणता आती है।

कविता शिक्षण – कविता के तात्पर्य को स्पष्ट करने के लिए भिन्न भिन्न आचार्यो ने अपने विचार व्यक्त किए हैं, जो निम्नलिखित हैं–

(1) भारतीय दृष्टिकोण

(i) ऐसे शब्द और अर्थ को पद्य कहते हैं जिसमें दोष न हों, अंध्कार हों और कभी अलंकार न हो

(ii) रसात्मक वाक्य को पद्य कहते हैं। –मम्मट

(iii) रमणीय अर्थ के प्रतिपादन करने वाले शब्द को काव्य कहते हैं। –जगन्नाथ

(iv) हृदय की मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती है उसे पद्य कहते है । –रामचन्द्र शुक्ल

(v) जल कर चीख उठा वह कवि था। –पंत

(vi) कलात्मक रीति से सजी हुई भाषा जिसमें भावों का व्यंजन होता है। –श्यामसुन्दर दास

(2) पाश्चात्य दृष्टिकोण

(i) पद्य छन्दोमय रचना है। –जानसन

(ii) पद्य को सरल, ऐन्द्रिक एवं उत्तेजनापूर्ण माना है। –मिल्टन

(iii) संगीतमय विचार को ही कविता माना है। –कार्लाईल

(iv) कविता मूल में जीवन की आलोचना हैं। –मैथ्यू आर्नोल्ड

(v) कविता और शान्ति के समय स्मरण किए गए प्रबल मनोवेगों का स्वच्छन्द प्रवाह माना है। – वर्ड्सवर्थ

(vi) कविता उत्तमोत्तम शब्दों को उत्तमोत्तम क्रम विधान है। –कॉलरिज

8.4.2 पद्य शिक्षण के उद्देश्य

पद्य रागमय होती है, उसमें हमारे हृदय को स्पन्दित करने की शक्ति होती है। इसलिए उसके द्वारा बच्चों की बोध, कल्पना एवं अभिव्यक्ति शक्ति के विकास के साथ–साथ उन्हें भावानुभूति, आनन्दानुभूति करानी चाहिए। कविता के शिक्षण से बच्चों में कविता और साहित्य के प्रति रुचि उत्पन्न होती है, उनकी चित्तवृत्तियों का परिर्माजन होता है और वे उच्च आदर्शो को ग्रहण करते है। कविता शिक्षण के उद्देश्य को निम्नलिखित क्रम में अभिव्यक्त कर सकते हैं :–

1. **सामान्य उद्देश्य–**विभिन्न शिक्षा एवं भाषा शास्त्रियों ने इन उद्देश्यों को इस प्रकार स्पष्ट किया है :–

◆ छात्रों को स्वर प्रवाह तथा भावों के अनुसार कविता–पाठ करने के योग्य बनाना।

- काव्य सौन्दर्य से प्रभावित करके छात्रों को कविता के प्रति आकर्षित करना कविता के प्रति रुचि बढ़ाना।
- छात्रों में सौन्दर्यानुभूति की भावना को जागश्त करना और उस भावना की अन्तर वश्द्धि करना।
- छात्रों की सात्विक भावनाओं का उद्बोधन करना।
- उनकी की रागात्मक प्रवृत्तियों का संशोधन करना।
- छात्रों के उदात्त कार्यों का संवर्द्धन करना तथा उनके दूषित मनोभावों का परिष्कार करना।
- छात्रों की कल्पना शक्ति का विकास करना।
- छात्रों में काव्य सौन्दर्य को परखने की क्षमता का विकास करना।
- उनको पूर्ण मनोयोग से सुनने और सुनकर अर्थ ग्रहण एवं भावानुभूति करने के योग्य बनाना।
- छात्रों में भावानुसार उचित गति एवं आरोह–अवरोह से पठन करने एवं उसका भाव ग्रहण करते हुए रसानुभूति करने के योग्य बनाना।
- छात्रों को कविता की सुन्दर समीक्षा करने और उसे अपनी भाषा में प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करने योग्य बनाना।
- उनको भिन्न–भिन्न काव्य शैलियों से परिचित कराना।
- छात्रों का चरित्रिक विकास करना।
- कवि के भावों एवं अनुभूतियों के साथ छात्रों का तादात्म्य स्थापित करना।
- छात्रों को शब्द योजना, शब्द शक्तियों, छन्दों, अलंकारों, विधनों और विभिन्न रसों की अनुभूति एवं शास्त्रीय ज्ञान कराना।
- उनकी सृजनात्मक शक्तियों का विकास करना।
- छात्रों का काव्य रचना की प्रेरणा प्रदान करना।

2. विशिष्ट उद्देश्य

- छात्रों में कविता विशेष के भावों को समझने की क्षमता प्रदान करना।
- कवि के विशेष विचार या शैली का आनन्द प्राप्त करना।
- किसी कवि की काव्यगत विशेषता को समझने की योग्यता उत्पन्न करना।
- कवि के सन्देश को छात्रों तक पहुंचाना।
- छात्रों को काव्यगत विषय से परिचित कराकर उनमें सौन्दर्यानुभूति की भावना का विकास करना।
- कविता विशेष में जीवन सम्बन्धी की गई आलोचना से अवगत करना।
- छात्रों को कवि विशेष के साहित्य को पढ़ने के लिए प्रेरित करना।
- कविता की किसी विशेष शैली अथवा वाणी शैली से परिचित करना तथा गीतकाव्य की शैली, वर्णनात्मक शैली, स्वच्छन्द शैली, आदि।

मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि पद्य साहित्य का एक रूप है जो कि अनेक अंशों में गद्य से भिन्न होता है। पाठशालीय शिक्षा के प्रारम्भिक स्तर पर काव्य की रसपरक या भावपरक व्याख्या की अपेक्षा शब्दार्थपरक स्थूल व्याख्या ही उन्हें समझानी चाहिए। फिर जब उन्हें कविता का आस्वादन होने लगे वे कुछ आगे बढ़ जायें तो फिर उन्हें कुछ और व्याख्याएं भी प्रसंग और आवश्यकता के अनुसार बताई जा सकती हैं। किन्तु छात्रों के लिए आवश्यक न होते हुए भी शिक्षक के लिए कविता के स्वरूप, शिक्षण के उद्देश्य, शिक्षण–विधान आदि का ज्ञान होना आवश्यक है।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. पद्य शिक्षण क्या है?
2. पद्य शिक्षण के उद्देश्य कौन–कौन से है।

8.4.3 पद्य शिक्षण की प्रणालियां

अन्य विषयों की शिक्षा के समान ही शिक्षा–शास्त्रियों ने पद्य–शिक्षण के लिए भी अनेक विधियों की सिफारिश की है। किस स्तर पर तथा किन परिस्थितियों में कौन सी प्रणाली उपयुक्त होगी, इस बात का प्रयोग करने से पूर्व उसे उन सभी विधियों का ज्ञान होना आवश्यक है जोकि कविता शिक्षण के लिए उपयुक्त मानी गई है। नीचे इन सभी विधियों पर हम संक्षेप में विचार कर रहे हैं। योग्य अध्यापक को स्वयं ही देख लेना चाहिए कि वहां किस विधि से अधिक लाभ हो सकता है। अनुभवी अध्यापक एक साथ ही एक से अधिक विधियों का भी सफलतापूर्वक उपयोग करके वांछित लाभ उठा सकता है। सामान्यता निम्नलिखित विधियां अधिक प्रचलित हैं :–

- **गीत प्रणाली–**बच्चे जन्म से ही संगीत प्रिय होते हैं। संगीत प्रधान बाल–गीत शिशुओं को बहुत प्रभावित करते हैं। गीत, खेल और मनोविनोद के साधन बनते हैं। ऐसे बाल गीतों को पढ़ाने की सवोत्तम प्रणाली गीत प्रणाली है। इस प्रणाली में सर्वप्रथम अध्यापक पहले ताल के साथ गीत का सस्वर वाचन करता है। फिर कक्षा के बच्चों को खड़ा किया जाता है। अध्यापक और बच्चे हाथ से ताल देते हैं और ताल के साथ साथ गीत को सरल राग में गाते हैं।

यह प्रणाली केवल छोटी कक्षाओं में प्रयोग की जा सकती है। शिशु शिक्षा में इस विशेष स्थान प्राप्त है फरोबेल ने इस प्रणाली के आधार पर बच्चों के लिए अनेक गीतों की रचना की थी। इस प्रणाली का सबसे बड़ा गुण यह है कि गीत गाने से बच्चों के ह्रदय झंकश्त होते है और वे गीतों को आसानी से याद कर लेते हैं। गीत सरल एवं आकर्षक होना चाहिए। ऐसे गीत को बच्चे खेल–खेल में ही याद कर लेते है। उदाहरणार्थः–

लाठी लेकर भालू आया, छम छम छम, छम छम छम ।

ढोल बजाता मेंढ़क आया, ढम ढम ढम, ढम ढम ढम।

- **अभिनय प्रणाली–**बाल गीतों में कुछ प्रधान होते है, उन्हें अभिनय प्रणाली से पढ़ाया जाना चाहिए। अभिनय सामूहिक भी हो सकता है और वैयक्तिक भी। वैयक्तिक अभिनय के लिए कविता को भिन्न भिन्न पंक्तियों को बच्चों में बांटा जाता है। एक बालक एक पंक्ति को अभिनय के साथ पढ़ता है और उसके उपरांत दूसरा बालक उसे प्रयुक्त अभिनय के साथ बोलता है।

– एक एक यदि पेड़ लगाओ तो तुम बाग बना दोगे।

(एक छात्र) (दूसरा छात्र)

– सामूहिक अभिनय –उदाहरणार्थ

मोर है मेरा नाम रे, जंगल है मेरा गांव रे।

वर्षा में खुश होकर नाचूं, मैं बादल की छांव रे।

मोर के वेश में अभिनय करते हुए बालक यह गीत गायेंगे। यह प्रणाली भी छोटी कक्षाओं के लिए बड़ी उपयोगी है। इस प्रणाली का सफल प्रयोग अध्यापक पर निर्भर करता है। इस प्रणाली का आंगिक अभिनय तक ही सीमित रखा जाए तो उचित रहेगा।

- **अर्थ–बोध प्रणाली**–आजकल स्कूलों में प्रायः यही प्रणाली प्रचलित है। इस प्रणाली में अध्यापक या तो स्वयं ही काव्य पाठ करता है अथवा कुछ छात्रों द्वारा करवा लेता है और फिर उसका अर्थ बताता चलता है। कविता में शब्दार्थ और सरल भाषा में अनुवाद ही पर्याप्त समझा जाता है। इस प्रकार कविता शिक्षण गद्य जैसा नीरस एवं यंत्रावत् हो जाता है। इस प्रणाली में छात्र निष्क्रिय श्रोता के रूप में रहते हैं। वे कविता के अर्थ समझने में तो सफल होते हैं लेकिन भाव समझने का अवसर उन्हें नहीं मिलता। यह प्रणाली सर्वथा दोषपूर्ण है। इससे निश्चय ही कविता की आत्मा का हनन होता है। छात्रा कविता का रसास्वादन नहीं कर पाते। पण्डित सीता राम चतुर्वेदी ने इस वृति को कविता का गला घोंट देना कहा है। इस प्रकार कविता शिक्षण का सारा उद्देश्य निष्फल हो जाता है। इस प्रणाली के अध्कि प्रचलित होने के कारणों का पता लगाना चाहिए और पाठय् क्रम में कविताओं का चयन काव्य सौष्ठय और काव्य और सौन्दर्य को सम्मुख रख कर किया जाए छात्रों की रूचि को भी ध्यान में रखते हुए कविताओं का संकलन किया जाए।
- **व्याख्या प्रणाली–**इस प्रणाली के अध्कि प्रचलित होने के कारणों का पता लगाना चाहिए और पाठ्यक्रम में कविताओं का चयन काव्य सौन्दर्य और काव्य रखते हुए कविताओं का सकंलन किया जाये। यह प्रणाली सर्वोत्तम प्रणाली मानी गई है। प्रारम्भिक कक्षाओं को छोड़कर माध्यमिक तथा उच्च कक्षाओं में इसी प्रणाली का अपनाना चाहिए। व्याख्या प्रणाली में अध्यापक अर्थ के साथ प्रासंगिक कक्षाओं की चर्चा करता चलता है। इसके अतिरिक्त छन्द, रस और अलंकारों का स्पष्टीकरण भी करता है। कविता के दार्शनिक पक्ष को भी स्पष्ट करने का प्रयत्न करता है। कविता पढ़ाने में इस विधि का प्रयोग ऊंची कक्षाओं में ही करना चाहिए। व्याख्या करते समय शिक्षक को छात्रों की मानसिक अवस्था, कक्षा स्तर, रुचि और बौद्विक विकास एवं ग्रहण करने की क्षमता को हमेशा ध्यान में रखना चाहिए। यहा इस बात की भी शंका रहती है कि छात्र प्रायः निष्क्रिय रहते हैं और अध्यापक ही अधिक काम करता है। इसलिए उचित होगा यदि अध्यापक यह व्याख्या स्वयं न करके छात्रों की सहायता से करे। कुछ विद्वानों ने व्याख्या प्रणाली के तीन उपभेद बताये हैं:–

  (i) **व्यास प्रणाली–** यह व्याख्या प्रणाली का ही विस्तृत रूप है। इसका नामकरण कथावाचक व्यासों को ध्यान में रखकर किया गया है। व्यास लोग अपनी कथा को रोचक बनाने के लिए तथा अर्थ एवं भाव को स्पष्ट करने के लिए भाषा और शैली का विशद विश्लेषण करते है। प्रंसगानुसार अनेक अन्तर्कथाओं का विवरण प्रस्तुत करते हैं। उदाहरण तथा दश्ष्टांत देकर कवि के दार्शनिक

सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण भी करते हैं। इस विधि के अनुरूप अध्यापक भी यदि इसी प्रकार एक एक पद की 'बाल की खाल उतारते हुए' कविता की विस्तशत व्याख्या करे तो कविता पाठ का उद्‌देश्य सफल हो जाता है परन्तु अध्यापक के पास इतना समय कहा। यह प्रणाली उच्च कक्षाओं में ही अपनानी चाहिए। माध्यमिक स्तर पर भी इसका सीमित प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन अध्यापक को इस ओर बहुत सतर्क रहना होगा, कहीं शिक्षण रोचक होने के स्थान पर कठिन न हो जाए।

(ii) **तुलना प्रणाली–** यह प्रणाली भी व्याख्या प्रणाली का ही रूप है। इसमें अध्यापक पाठ्‌य कविता की तुलना उसी भाव की अन्य कविताओं से करता है। तुलना में समानता और असमानता दोनों ही पक्षों पर प्रकाश डाला जाता है। इस प्रणाली का अनुसरण वही अध्यापक कर सकता है जिसने विस्तशत अध्ययन किया हो, जिसे समान भाषा, भाव एवं शैली की तत्सम्बन्धी अनेक पद्य रचनाएं कण्ठस्थ हों, और जिसका दशष्किोण निरपेक्ष हो। कविता में तुलना प्रणाली का प्रयोग चार विधियों से किया जा सकता है, यथा–

(a) **समभाषा कवि तुलना प्रणाली –** जहां अपनी ही हिन्दी भाषा के अन्य कवियों की रचनाओं की समानान्तर कविताओं को प्रस्तुत किया जाए, जैसे :–

– महादेवी जी की 'रश्मि' शीर्षक कविता –'चुभते ही तेरा अरुण बान

– बहते निर्झर फूट–फूट मधु निर्झर के सजल गान' के लिए प्रसाद जी के–

उषा सुनहले तीर बरसती, जय लक्ष्मी सी उदित हुई।

उधर पराजित काल रात्रि भी, जल में अन्तर्निहित हुई। – कामायनी

(b) **भिन्न भाषा कवि तुलना प्रणाली–** इस प्रणाली के अनुसार विभिन्न भाषाओं के कवियों की कविताएं समानान्तर रूप से प्रस्तुत की जा सकती हैं, जैसे–

– 'नारी तुम केवल श्रद्वा हो' –प्रसाद

– 'अबला जीवन हाय, तुम्हारी यही कहानी, आंचल में है दूध और आंखों में पानी'–गुप्त

– 'मुक्त करो नारी को मानव' –पंत

(c) **भाव तुलना प्रणाली –** इसमें एक ही भाव को लेकर लिखी गई विभिन्न भाषाओं के कवियों की रचनाओं को प्रस्तुत किया जाता है।

(d) एक ही कविता की एक भाव वाली विभिन्न कविताओं की तुलना कभी कभी एक ही कवि एक ही प्रसंग को लेकर अपने काव्य में उसे विभिन्न प्रकार से प्रस्तुत करता है। तुलसीदास जी ने केवट के प्रसंग को 'वरवै रामायण' 'कवितावलीद्व तथा 'रामचरित मानस' में विभिन्न प्रकार से वर्णित किया है।

(iii) **समीक्षा प्रणाली–** इस प्रणाली मे काव्य के गुण दोषों का विवेचन करके उसके यथार्थ को आंका जाता है। इसके अन्तर्गत अध्ययन का अधिक भार छात्रों पर रहता है। यह प्रणाली समीक्षा सिद्वान्तों का व्यावहारिक उपयोग करती है। उसमें पद्य रचना की भाषा, भाव, रस, अलंकार आदि पर आलोचनात्मक

दृष्टिकोण से विचार किया जाता है इन सब क्रियाओं में अध्यापक केवल सहायक का कार्य करता है। यह प्रणाली ऊंची कक्षाओं में ही प्रयोग की जा सकती है। जबकि छात्रों का मानसिक विकास हो चुका होता है और उन्हें समीक्षा के सिद्वान्त समझने और उस कसौटी पर काव्य रचनाओं को परखने की शक्ति आ जाती है। इस प्रणाली में मूलतः तीन बातों की समीक्षा की जाती है :–

(a) कविता पर पड़ने वाले प्रभावों की समीक्षा।

◆ **प्रश्नोत्तर प्रणाली**–इस विधि में सम्पूर्ण पद्य का प्रश्नोत्तर किया जाता है और उसे प्रश्नोत्तर के माध्यम से पढ़ाया जाता है। यह प्रणाली वास्तव में गद्य पढ़ाने की प्रणाली है परन्तु पद्य शिक्षण में भी इसका प्रयोग किया जाता हैं। पद्य को खण्डों में विभाजित करके उनका अर्थ स्पष्ट किया जाता है। यह प्रणाली वर्णनात्मक या कथात्मक प्रकार की कविताओं के लिए विशेष उपयोगी है। जैसे ऐतिहासिक काव्य, महाकाव्य आदि। अध्यापक भावपूर्ण शैली में पढ़ाता जाए और बीच–बीच में विद्यार्थियों से प्रश्न पूछता जाए और आगे बढ़ता जाए। प्रश्नों द्वारा ही आवश्यक स्थलों की व्याख्या हो जायेगी। लम्बे–चौडे पद्यबद्व वर्णन के लिए यही प्रणाली लाभदायक एवं उपयोगी है। एक बात ध्यान में अवश्य रखनी चाहिए और वह है– कविता की पूर्णता का सदैव ध्यान रखना। बीच बीच मे सम्पूर्ण कविता का पठन इस ओर सहायक होगा। ऐसा करने से कक्षा में काव्यमय वातावरण भी बना रहता है।

उपर्युक्त सभी प्रणालियों का विवेचन हो चुका है। अध्यापक को चाहिए कि विद्यार्थियों की मानसिक अवस्था और कविता के विषय के अनुकूल उपयोगी प्रणाली का अवलम्बन करें। प्रत्येक प्रणाली का अपना अपना विशेष स्थान है, जैसे प्रारम्भिक कक्षाओं में तीन नाट्य प्रणाली, पद्यात्मक वर्णन, खण्डात्मक प्रणाली, भाव प्रधान कविताओं में व्याख्या प्रणाली, कभी कभी तुलनात्मक जांच पैदा करने के लिए तुलनात्मक प्रणाली और महाविद्यालय की कक्षाओं के लिए व्यास प्रणाली ओर समीक्षा प्रणाली।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. पद्य शिक्षण की प्रणालियों की व्याख्या कीजिए

8.4.4 पद्य में अभिरूचि बढ़ाने के साध्न

कविता मनोरंजन और मनोभावों का परिष्कार एक साथ करती है। इसलिए कविता के प्रति आजीवन प्रेम बना रहना चाहिए। एक भाषा विज्ञानी यदि कक्षा में कविता का अध्यापन ठीक ढंग से हुआ है तो विद्यार्थी अवश्य कविता में रुचि लेंगे। परन्तु फिर भी कुछ अन्य साधनों के द्वारा छात्रों में काव्य के प्रति रुचि उत्पन्न की जा सकती है और कविता के प्रति उनके प्रेम को स्थायी बनाया जा सकता है। इनमें से कुछ प्रमुख साधन इस प्रकार हैः–

◆ **प्रभावशाली पठन**–अध्यापक को कविता पठन की कला में पूर्ण निपुण होना चाहिए। उसका स्तर (कण्ठ) भी कविता पठन के उपयुक्त हो तो सोने में सुहागा है। सुन्दर वाचन से बच्चे काव्यमय वातावरण में विचरण करने लगते है और काव्य के प्रति उनमें अभिरूचि जागृत होती है।

◆ **कविता को कण्ठस्थ करना**–अध्यापकों को चाहिए कि वे छात्रों को कवितायें कण्ठस्थ करने के लिए प्रेरित करें। बचपन मे कण्ठस्थ की गई सुन्दर कविताएं आजीवन याद रहती है और आनन्द वृद्वि का साधन होती है। छात्रों को आवश्यक प्रोत्साहन देना चाहिए।

- **कविता संग्रह –** बच्चों को अच्छी, उपयोगी एवं आकर्षक कविताओं के संग्रह के लिए प्रेरणा देनी चाहिए। कविता को कण्ठस्थ करने के साथ–साथ संग्रह की यह प्रवश्त्ति की कविता के प्रति रूचि को बनाये रखती है।

- **अन्त्याक्षरी प्रतियोगिता–**आजकल स्कूलों में अन्त्याक्षरी प्रतियोगिता बहुत प्रसिद्व है। कण्ठस्थ की हुई कविताओं का इस खेल द्वारा सुन्दर प्रयोग किया जा सकता है। इस खेल में कक्षा को दो वर्गों में बांटा जाता है। पहले दल का कोई सदस्य किसी कविता या पद का वाचन करता है। वाचन समाप्त हो जाने पर दूसरे दल का कोई सदस्य ऐसी कविता पढ़ता है। जिसका पहला अक्षर पूर्व पठित कविता का अन्तिम अक्षर होता है। इस प्रकार दोनों वर्गों के छात्र बराबर कविता पढ़ते चलते हैं। किसी समय यदि कोई दल किसी अक्षर विशेष से कविता सुनाने में अमसर्थ होता है तब दूसरे दल वाले उसी अक्षर से आरम्भ होने वाली कविता सुनाकर विजय प्राप्त कर लेते हैं। इस प्रतियोगिता की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि छात्र बिना प्रयास के ही कविताएं याद करने में उत्साह प्रकट करते हैं। सभी छात्रों को इसमें भाग लेने के लिए अवसर मिलना चाहिए।

- **सुभाषित प्रतियोगिता–** यह अन्त्याक्षरी का ही सुगम परन्तु आवश्यक रूप है। इस प्रतियोगिता में छात्र प्रसिद्ध कवियों की सुन्दर कविताओं का अभिनय पूर्वक सुनाते है। सुभाषित प्रतियोगिता एक ही विद्यालय की भिन्न भिन्न विद्यालयों के छात्रों में करायी जा सकती है।

- **समस्या पूर्ति–**यह प्रतियोगिता बड़ी पुरानी है। समस्या पूर्ति में कवियों को अथवा छात्रों का एक समस्या दे दी जाती है। वे उस समस्या पर कविता बना कर प्रभावशाली ढंग से पढ़ते हैं। कभी कभी छात्रों को कविता की एक एक पंक्ति लिख कर दी जा सकती है और उन्हें दूसरी पक्ति लिखने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। आज भी पाठशालाओं में समस्या –पूर्ति को फिर से स्थान देकर हम विद्यार्थियों में काव्य के प्रति प्रेम बढ़ा सकते है।

- **कवि सम्मेलन –**कवि सम्मेलनों के आयोजन भी कविता के प्रति अभिरूचि जागृत करने में सफल होते है। कविता सम्मेलन अनेक स्तरों पर किए जा सकते है। विद्यालय, नगर विशेष, जिला स्तर अथवा प्रांत स्तर पर प्रसिद्ध कवियों को आमंत्रित किया जा सकता है। छात्रों को कवियों का परिचय प्राप्त होता है और कवि के मुख से कविता सुनकर उन्हें अध्कि आनन्द तथा प्रेरणा की प्राप्ति होती है।

- **कवि जयन्ति–** विद्यालयों में प्रमुख कवियों के जन्म दिवसों पर उत्सव मनाये जाने चाहिए। इन अवसरों पर उनके जीवन पर प्रकाश डालते हुए उनके साहित्य से बच्चों को परिचय प्राप्त करना चाहिए।

- **कवि दरबार –** कवि दरबार के माध्यम से छात्र किसी युग विशेष के कवियों की वेश–भूषा में सुसज्जित होकर भावभंगिमा और अभिनय के साथ उनकी रचनाओं को पढ़कर सुनाते हैं। इस साध ान से बच्चे उस युग विशेष के कवियों की रचनायें पढ़ने के लिए उत्सुक हो जाते है।

- **कवि समादर**–समय–समय पर किसी विख्यात कवि को विद्यालय में बुलाकर उसका समादर किया जाना चाहिए। ऐसे अवसर पर उस कवि की रचनायें भी सुनी जा सकती है। कई बार आकाशवाणी द्वारा भी इसका आयोजन किया जाता है।

- **कवि गोष्ठी–** विद्यालय में साहित्य –परषिदों की स्थापना करनी चाहिए। इसके द्वारा समय– समय पर कवि –गोष्ठियों का आयोजन किया जा सकता है। इसमें छात्र कवियों की जीवनी एवं उनकी कविताओं की विशेषता का वर्णन करते है। छात्रों को स्वयं रचित कवितायें सुनाने के अवसर भी मिलते रहने चाहिए।

- **अध्यापक का दायित्व–**कविता शिक्षण में सब से बड़ा दायित्व अध्यापक का है । उसे प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करना ही एक कला है। अध्यापक को इस कला में प्रवीण होना चाहिए। छात्रों पर इसका बहुत प्रभाव पड़ता है। और वे स्वयं ही इस ओर आकश्ष्ट होते चले जाते है।

गद्य और पद्य शिक्षण में अन्तर

गद्य और पद्य साहित्य की प्रमुख विधाएँ है जो अपनी आवश्यकताओं के कारण एक दूसरे से इस प्रकार से भिन्न हैं–

- गद्य विचारों की उपज है और काव्य भावों की।
- गद्य शिक्षण का प्रमुख उद्‌देश्य बालकों की तार्किक शक्ति व उसका बौद्विक विकास करना है जबकि कविता शिक्षण का मुख्य उद्‌देश्य बालकों में सौन्दर्यानुभूति पैदा कर उनका भावात्मक विकास करना है।
- गद्य छन्दोबद्ध रचना नहीं होती । पद्य में लय, गति, यति, आरोह, अवरोह आदि से सुसज्जित रचना है। निःसदेह आधुनिक कविता इन सभी प्रकार के बन्धनों को तोड़कर उन्मुक्त रूप से निःसृत हुई हैं परन्तु उसमें भी आलोक है, ओज है, एक प्रवाह है जो हमारे हृदय को रससिक्त कर देता है।
- पद्य की अपेक्षा गद्य आकार में विस्तश्त होता है। पद्य गागर में सागर है जबकि गद्य रचना विस्तृत रचना है।
- गद्य में रचनाकार यथार्थ के धरातल पर विचरण करता है। पद्य में कवि कल्पना की उड़ान भरता है।
- साहित्य के दो पक्ष होते हैं, कला पक्ष और भाव पक्ष–कला पक्ष की दृष्टि से गद्य में शैली प्रधान होती है और पद्य में गुण, अलंकार लय आदि।
- भाव पक्ष की दृष्टि से गद्य में बुद्वि तत्व प्रधान होता है। और पद्य में कल्पना एवं राग तत्व की प्रधानता होती है।
- गद्य शिक्षण में मौन वाचन का विशेष महत्व है जबकि पद्य शिक्षण में सस्वर वाचन ही प्रभावशाली होता है।
- गद्य शिक्षण में प्रत्येक अन्विति के शब्दों के अर्थ बताए जाते हैं जबकि पद्य शिक्षण में रसास्वादन को बनाए रखने के लिए ऐसा करना उचित नहीं।
- गद्य हर कोई लिखने का प्रयास कर सकता है, पद्य रचना में ऐसा नहीं। गद्य और पद्य की शिक्षण प्रणालियों के अन्तर पर प्रकाश डालते हुए श्री मुकर्जी के शब्दों में 'गद्य शिक्षा का मुख्य उद्‌देश्य विद्यार्थियों को ज्ञान, अर्थबोध, शब्द–भण्डार वृद्वि या भावाभिव्यंजन में सहायता पहुँचाना है पर पद्य शिक्षा का उद्‌देश्य है, कविता का भाव हृदयंगम करना, कवि के कल्पना लोक में विचरण करना और कवि के शब्दों को जादू के समान अनुभव करना। पद्य शिक्षा में न तो शब्दार्थों की ओर ही विशेष ध्यान देना उचित है और न वाक्य प्रयोग तथा व्याकरण के पचडे में पड़ना आवश्यक है। ऐसा करने से कविता की सरसता की हत्या हो जाती है।'

कविता शिक्षण के सोपान

कविता शिक्षण की विधियों के अनुरूप शिक्षक कक्षा में कविता पाठ के विकास की दृष्टि से विभिन्न शिक्षण सोपान निर्धरित कर सकता है। कक्षा की निश्चित अवधि में कविता शिक्षण के लिए अध्यापक को कविता की पाठ योजना पूर्व निर्धारित कर निम्नलिखित सोपानों का परिपालन करना चाहिए–

1. विशिष्ट उद्देश्य
2. पूर्वज्ञान परीक्षण
3. उद्देश्य कथन
4. प्रस्तावना
5. आदर्श वाचन
6. अनुकरण वाचन
7. शब्दार्थ बोध
8. भाव विश्लेषण एवं सौंदर्यानुभूति
9. आदर्श पाठ
10. सस्वर पाठ
11. अनुभूति परीक्षण
12. रचनात्मक कार्य
13. पुनरावशति
14. मूल्यांकन
15. गृह कार्य

1. **विशिष्ट उद्देश्य**–कक्षा में जो कविता करानी है उसके विशिष्ट उद्देश्यों को पूर्ववत् निर्धारित करके उसके अनुरूप कविता शिक्षण कराया जाए। प्रस्तुत कविता के भाव व विचार ग्रहण सम्बन्धी उद्देश्य, भाषा–शैली सम्बन्धी उद्देश्य आदि का अनुसरण करना।

2. **पूर्वज्ञान परीक्षण**– ज्ञात से अज्ञात की ओर के सिद्वान्त के अनुरूप कक्षा में पूर्वज्ञान परीक्षण किया जाए। यहीं से औपचारिक रूप से कविता शिक्षण का आरम्भ होता है। पूर्वज्ञान परीक्षण प्रश्न–उत्तर द्वारा, चित्र व चार्ट भी हो सकता है। पूर्वज्ञान के पहले दो या तीन प्रश्न विषय यानि काव्य से सम्बन्धि‍त होने चाहिए तथा अन्तिम प्रश्न उपविषय अर्थात प्रस्तुत कविता से सम्बन्धित हो।

3. **उद्देश्य कथन** – पूर्वज्ञान परीक्षण उपरान्त शिक्षक प्रस्तुत कविता के बारे में बताएँ कि कौन सी कविता की जाएगी तथा उसका नाम श्यामपट पर लिखा जाए। उद्देश्य कथन स्वाभाविक व रोचक ढंग से होना चाहिए।

4. **प्रस्तावना–** जिस कवि विशेष की कविता की जा रही है उसका परिचय तथा उसकी अन्य रचनाओं की जानकारी प्रस्तावना में दी जाए। प्रस्तावना द्वारा ही कविता शिक्षण के अनुरूप वातावरण का निर्माण किया जाए, जिसमें कविता मे आने वाले प्रसंगों की व्याख्या, समान भाव वाली अन्य कविताओ का उल्लेख, कविता के भाव का संक्षिप्त परिचय आदि शामिल है।

5. **आदर्श वाचन**– कविता किसी भी स्तर की कक्षा को पढ़ाई जाए लेकिन आदर्श वाचन सबके लिए आवश्यक व उपयोगी है, क्योंकि सस्वर आदर्श वाचन से ही कविता का स्वरूप प्रकट होता है। आदर्श वाचन शिक्षक द्वारा सही ढंग से किया जाए। इसके लिए आवश्यक है अध्यापक को आदर्श वाचन से पूर्व कई बार स्वयं उसके वाचन का अभ्यास कर लेना चाहिये। कविता का आदर्श वाचन भावानुकूल रुचि, लय, गति, हाव–भाव व आरोहावरोह के साथ किया जाए।

6. **अनुकरण वाचन– श**िक्षक द्वारा आदर्श वाचन करने के पश्चात् विद्यार्थियों से अनुकरण वाचन करवाना चाहिए। छोटी कक्षाओं में यह अति आवश्यक है। विद्यार्थियों द्वारा की गई उच्चारण सम्बन्धी अशुद्धियों का निवारण साथ–साथ नहीं करना चाहिए। उसके उचित हाव–भाव, लय, उच्चारण आदि की तरफ विशेष ध्यान देना चाहिए। विद्यार्थी की वाचन सम्बन्धी त्रुटियों को अनुकरण वाचन के उपरान्त सहानुभूतिपूर्ण दूर करना चाहिए।

7. **शब्दार्थ बोध–** छात्रों द्वारा अनुकरण वाचन कर लेने के उपरान्त उन्हीं की सहायता से कविता में आए कठिन शब्दों का स्पष्टीकरण करना चाहिए जिससे बालकों का सक्रिय योगदान बना रहे। शब्दार्थों की व्याख्या अत्यन्त संक्षिप्त होनी चाहिए क्योंकि कविता शिक्षण का उद्‌देश्य शब्द भंडार में वृद्वि करना नहीं बल्कि सौन्दर्यानुभूति करना है। इसलिए व्याकरण का इसमें कोई स्थान नहीं है। शब्दार्थ स्पष्टीकरण के बाद अध्यापक को भाव व सौन्दर्यानुभूति के लिए पुनः आदर्श वाचन करना चाहिए।

8. **भाव विश्लेषण एवं सौन्दर्यानुभूति–** भाव विश्लेषण एवं सौन्दर्यानुभूति के सोपान में अध्यापक को विशेष सतर्क रहना चाहिए कि प्रस्तुत कविता में भाव, विचार एवं साहित्यिक सौन्दर्य सम्बन्धी जितने तत्व हैं उन सभी का ज्ञान विद्यार्थियों को हो जाए। उच्च स्तरीय कक्षाओं में भाव विश्लेषण एवं सौन्दर्यानुभूति की दृष्टि से यथा प्रसंग, व्याख्या, समीक्षा एवं तुलना आदि विभिन्न विधियों का प्रयोग करना चाहिए। छात्रों की कल्पना शक्ति को जागश्त करने के लिए आवश्यक प्रश्न पूछने चाहिए। अध्यापक का यह प्रयत्न होना चाहिए कि विद्यार्थी स्वयं कविता का भाव ग्रहण करने के लिए प्रयत्नशील हों और यह तभी संभव है जब अच्छे एवं उत्प्रेरक प्रश्न छात्रों से पूछे जाएँगे।

9. **आदर्श पाठ–** समस्त कविता के भाव स्पष्ट हो जाने के उपरान्त समग्र प्रभाव की दृष्टि से अध्यापक आदर्श पाठ प्रस्तुत करे। ऐसा करने से छात्रों में रसानुभूति उत्पन्न होगी क्योंकि अब तक वह कविता में आए कठिन शब्दों का स्पष्टीकरण कर चुके हैं तथा प्रसंगों की व्याख्या से भी परिचित हो चुके हैं। इस सोपान पर छात्र कविता का पूर्णरूपेण रसास्वादन करते है।

10. **सस्वर पाठ–** पुनः छात्रों से सस्वर अनुकरण वाचन कराया जाएगा जिससे उनकी कविता के प्रति सौन्दर्यो नुभूति का परिचय मिलेगा। शिक्षक दोनों बार कराए अनुकरण वाचन में अन्तर अनुभव कर सकता है।

11. **अनुभूति परीक्षण–** वैसे तो पुनः अनुकरण वाचन से जाना जा सकता है कि विद्यार्थियों ने कविता के सौन्दर्य को कहां तक ग्रहण किया है, फिर भी छोटे–छोटे प्रश्न पूछ कर उनकी व्याख्यानुभूति का परीक्षण किया जा सकता है।

12. **रचनात्मक कार्य–** विद्यार्थियों में रचनात्मक प्रवशत्ति विकसित करने के लिए उन्हें कविता कठस्थ करने की दी जा सकती है या फिर कविता के भावों को अपने शब्दों में अभिव्यक्त करने को कहा जा सकता है। छात्रों में मानसिक स्तर को ध्यान में रखकर रचनात्मक कार्य कराया जा सकता है।

13. **पुनरावृत्ति –** पठित विषय से प्राप्त की हुई जानकारी का ज्ञान करने के लिए एवम् बालकों को पूरी कविता के भावों, रसों तथा विशेषताओं से भिज्ञ कराने के लिए पाठ की पुनरावशत्ति की जा सकती है। जिससे समस्त पाठ श्रृंखलाबद्व हो जाने से कविता पाठ अधिक स्पष्ट और प्रभावशाली बन सके। पुनरावशत्ति से पूर्व सम्पूर्ण पाठ का सस्वर वाचन भी कराया जा सकता है। पुनरावृत्ति सभी पाठों में अनिवार्य नही है। इसके स्थान पर आत्मीकरण अथवा मूल्यांकन कराया जा सकता है।

14. **मूल्यांकन–** काव्य शिक्षण के उद्‌देश्यों की प्राप्ति हुई या नहीं, इसकी जांच के लिए कुछ प्रयास करना चाहिए। प्रश्नों आदि के माध्यम से मूल्यांकन किया जा सकता है। पुनरावृति और मूल्यांकन मे से एक ही सोपान रखना ठीक है। आजकल मूल्यांकन की ओर लोगों का अधिक झुकाव है।

15. **गृह कार्य –** गशह कार्य में अजिर्तत ज्ञान का व्यवहारात्मक प्रयोग करा लेना चाहिए। क्योंकि इससे बालक को अपने भावों तथा मतों को प्रकट करने का अवसर मिलता है। साथ ही प्रयोगात्मक कार्य अधिक स्थायी और प्रभावशाली होता है।

कविता पाठ के अध्ययन में निम्नलिखित बातों का सदैव ध्यान रखना चाहिए–

(i) बेसुरे तथा अशुद्ध उच्चारण वाले बालकों से कविता नहीं पढ़वानी चाहिए। यदि अध्यापक स्वयं बेसुरा हो तो उसे आदर्श पाठ स्वयं न करके सुस्वर बालकों से कराना चाहिए।

(ii) कविता–शिक्षण के समय श्यामपट का प्रयोग यथासम्भव कम करना चाहिए।

(iii) प्रश्नोत्तर विधि का यथासम्भव कम प्रयोग हो और जो हो भी, वह काव्यगत भाषा तथा भाव–सौन्दर्य का परिचय एवं रसमग्न कराने में सहायक हो।

(iv) काव्य पाठ में चित्र आदि न दिखाकर कल्पना को उतेजित करना चाहिए।

(v) व्याकरण का विश्लेषण कविता पाठ में कम से कम होना चाहिए। जहां तक हो सके, कविता के उद्‌देश्यों की पूर्ति का ध्यान रखना चाहिए। बहुत कुछ अध्यापक पर निर्भर है कि वह कक्षा में कविता के योग्य वातावरण उत्पन्न करे तथा रसानुभूति का आस्वादन कराने के लिए प्रयत्न करे। इसके लिए यह सोपानों के बन्धनों से मुक्त भी हो सकता है। सफल अध्यापक के लिए वही श्रेष्ठ विधि तथा प्रणाली है जिसके द्वारा वह अधिक से अधिक बालकों को कवि के भावों तक पहुंचा दे।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. पद्य शिक्षण के सोपान की व्याख्या करें।

16.3.6 पद्य शिक्षण की पाठ योजना का नमूना

पाठ–योजना

दिनांक........................ **प्रकरण–'झाँसी की रानी'** **कलांश–चतुर्थ**

हिन्दी–कविता **कक्षा– अष्टम्**

- **सामान्य उद्देश्य**
  1) छात्रों में कविता के प्रति रूचि का विकास करना।
  2) छात्रों में देशभक्ति के भाव जागश्त करना।
  3) कवि के भावों को बोधगम्य करके अपने शब्दों में प्रस्तुत करना।
  4) छात्रों में काव्य सौन्दर्य परखने की क्षमता का विकास करना।
- **विशिष्ट–उद्देश्य–** इस प्रकारण के शिक्षण से निम्नांकित व्यवहार परिवर्तन का प्रयास किया जाएगा।
  1) छात्रों को 'झाँसी की रानी' लक्ष्मीबाई से अवगत कराना।
  2) छात्रों को लक्ष्मीबाई की वीरता का बोध कराना।
  3) छात्रों में कविता पाठ से गति–लय तथा भावानुभूति का विकास करना।
  4) छात्रों में देशभक्ति की भावना का विकास करना।
  5) छात्रों को शुद्ध उच्चारण एवं स्पष्ट वाचन का अभ्यास कराना।
- **पूर्व ज्ञान–** छात्रों भारत की वीरांगनाओं के सम्बन्ध में जानकारी है। झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई का नाम सुन रखा है।
- **सहायक सामग्री–** झाँसी की रानी का चित्र तथा भारत का मानचित्र जिसमें कानपुर तथा झाँसी स्थान अंकित है।
- **प्रस्तुतीकरण** – (सीखने के अनुभव)

शिक्षण बिन्दु	शिक्षक की क्रियाएँ	छात्रों की क्रियाएँ	उद्देश्य एवं मूल्यांकन
1. प्रस्तावना	पूर्व ज्ञान के आधर पर प्रश्न करेगा।		पूर्वज्ञान का मूल्यांकन
	प्र0–भारत की कुछ वीर महिलाओं के नाम बताओ।	उ0–इन्दिरा, दुर्गावती सीता, लक्ष्मी–बाई आदि।	
	प्र0–चित्र दिखाकर, यह चित्र किसका है?	उ0– रानी लक्ष्मी बाई का चित्र है।	
	प्र0–इनकी ख्याति का कारण क्या था?	उ0–यह एक वीर महिला थीं।	
2. उद्देश्य कथन	आज हम रानी लक्ष्मी बाई जिन्हें झांसी की रानी भी कहते है। इस वीर रस की कविता की रचना 'सुभद्रा कुमारी चौहान ने की थी।	छात्र ध्यानपूर्वक सुनेंगे	विषय प्रवेश
3.आदर्श वाचन	शिक्षक शुद्व उच्चारण एवं स्पष्ट वाणी से लय एवं भावों के साथ कविता पाठ करेगा		छात्र–ध्यानपूर्वक सुनेगे तथा कविता को भी पढ़ते जाएंगे

'झाँसी की रानी'

(रचियता–सुभद्रा कुमारी चौहान)

सिंहासन हिल उठे राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में भी फिर से आयी नयी जवानी थी,
गुमी हुई आजादी की कीमत सबने पहचानों थी,
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी,

चमक उठी सन् सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी ।
बुन्देले, हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी।
खूब लडी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

सभी छात्र कविता को ध्यान पूर्वक सुनेंगे।

कानपुर के नाना की मुँहबोली बहिन छबीली थी,
लक्ष्मीबाई नाम, पिता की वह सन्तान अकेली थी,
नाना के संग पढ़ती थी वह, नाना के संग खेली थी,
बरछी, ढाल, कृपाण, कटारी उसकी यही सहेली थी,

वीर शिवाजी की गाथाएँ उसको याद जबानी थी।
बुन्देले हरबोलो के मुँह हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

अनुकरण–वाचन	शिक्षक आदर्श पाठ के उपरान्त दो–तीन छात्रों से अनुकरण वाचन करायेगा।	जिन छात्रों को कहा जायेगा वे ही अनुकरण वाचन करेंगे।	शुद्व उच्चारण का अनुसरण करेंगे।
शुद्व–उच्चारण	शिक्षक पद्यांश में आये कठिन शब्दों का उच्चारण करायेगा तथा शुद्व उच्चारण का अभ्यास करायेगा। शिक्षक कठिन शब्दों का अर्थ बोध भी करायेगा श्यामपटट् पर लिखेगा।	भृकुटी, सत्तावन, कृपाण, आदि शब्दों को छात्र उच्चारण का अभ्यास करेंगे।	उच्चारण का सुधर शुद्व उच्चारण का अभ्यास कराया जायगा
शब्दार्थ	**शब्द अर्थ**	**प्रयोग छात्रा अपनी पुस्तिकाओं पर शब्दार्थ लिखेंगे।**	**शब्द के अर्थ का बोध कराना।**
	भश्कुटी– भौंहें सिंहासन – राजगद्दी, शासन राजवंशों – राज के वंशज फिरंगी – अंग्रेज ठानी – निश्चय कियामर्दानी – पुरूषों के समान वीर		
आदर्श–वाचन	शिक्षक उच्चारण एवं शब्दार्थ के उपरान्त एक बार पुनः कविता पाठ करेगा।	छात्र ध्यान पूर्वक कविता पाठ को सुनेंगे।	शुद्व उच्चारण का अभ्यास कराना।
मौन–पाठ	शिक्षक छात्रों से मौन पाठ करायेगा (आवश्यक नही)	छात्र बिना होंठ हिलाये पद्यांश का पाठ करेंगे।	अभ्यास करना।
बोध–प्रश्न	प्र0– झांसी रानी ने अंग्रेजों से क्यों युद्व किया था।	उ0 भारत को आजाद कराने के लिए छात्र ध्यानपूर्वक सुनेंगे	भाव का बोध कराना।
स्पष्टीकरण	सभी राजघरानों में देश की आजादी के	छात्र ध्यानपूर्वक सुनेंगे	भाव का बोध कराना।
(विश्लेषण)	प्रति जागरूकता हुई। इसलिए झाँसी की रानी ने अंग्रेजी को भारत से निकालने		देश भक्ति की भावना का विकास कराना।

	का निश्चय किया जिससे खोई हुई आजादी पुनः प्राप्त की जा सके। प्र0–बुन्देलों के मुँह से क्या कहानी सुनी थी?	उ0–लक्ष्मीबाई की वीरता की कहानी सुनी।	
स्पष्टीकरण (विश्लेषण)	झाँसी की रानी बुन्देलखण्ड क्षेत्र की रहने वाली थी। इसलिए बुन्देलखण्ड के निवासियों के मुख से झाँसी की रानी वीरता की गाथाएँ सुनी जाती थी कि उसने पुरूषों की भांति अंग्रेजी से युद्व किया।		भाव एवं वीर रस का विकास करना।
बोध–प्रश्न (जीवनी)	प्र0 –लक्ष्मीबाई ने युद्व करना कैसे सीखा था?	उ0–उनके भाई नाना ने युद्व की शिक्षा दी थी।	झाँसी की रानी के जीवन के सम्बन्ध में बताना।
स्पष्टीकरण (विश्लेषण)	लक्ष्मीबाई अपने माता–पिता की अकेली सन्तान थी। कानपुर में उनके भाई नानाजी ने लालन पालन किया ओर उन्हें बरछी, ढाल, कश्पान तथा कटारी से युद्व विद्या भी सिखाई थी। नाना जी वीर शिवाजी की गाथांए भी सुनाया करते थे।	छात्र ध्यानपूर्वक सुनेंगे।	जीवन के कार्यो से अवगत कराना।
सामानान्तर उदाहरण	राष्ट्र कवि भूषण द्वारा रचित– “साजि–चतुरंग अंग में उमंग–धरि। सरजा शिवाजी ज्रंग जितन चल है।” आदर्श पद सिर कटा सकता हूँ झुका नहीं सकता।	छात्र एकाग्रचित होकर सुनेंगे।	भाव को बोधगम्य कराने के लिए छात्रों को देशभक्ति की प्रेरणा देना।
सामानान्तर उदाहरण	राष्ट्र की आजादी एवं मर्यादा की रक्षा हेतु तलवार उठाकर स्वयं की रक्षा	ध्यान से सुनेंगे।	छात्रों में वीरता भाव जाग्रत करना तथा देशभक्ति की

	करना अहिंसा नहीं कायरता है यह वीरों की गाथायें, कवियों की वाणी शस्त्रों की छाया में ही पलती है। ताकत का जबाव ताकत है, जिसने हमें सिखाया, सोये हुए प्रताप शिक्षा ने जिसने आज हमें जगाया। वीर रस की कविताओं से छात्रों को प्रेरणा देना शिक्षक का लक्ष्य है।		भावना का विकास करना।
सस्वर पाठ	छात्रों से पद्यांश का सस्वर लय में पाठ कराना।	दो–तीन छात्र सस्वर पाठ करेंगे।	शुद्व उच्चारण अभ्यास के लिए।
पुनर्रावशति प्रश्न	प्र0– झाँसी की रानी कौन थी?	उ0–लक्ष्मीबाई को झांसी की रानी कहते है।	झाँसी की रानी से अवगत कराना।
	प्र0–लक्ष्मीबाई ने अंग्रेजो से क्यों युद्व किया?	उ0–देश को आजाद कराने के लिए।	वीरता का गाथाओं का बोध कराना।
	प्र0–बुन्देले किस की गाथाएं कहते थे?	उ0–झाँसी की रानी की वीरता की गाथाएँ कहते थे।	
	प्र0–झाँसी की रानी ने युद्ध की विद्या कहाँ से सीखी थी?	उ0–उनके भाई नाना ने लालन–पालन किया और युद्व विद्या भी सिखाई थी।	झाँसी की रानी के जीवन से अवगत कराना।
	प्र0–झाँसी की रानी में वीरता का भाव कैसे उत्पन्न हुआ?	उ0–उनके नाना जी वीर शिवाजी की गाथाओं को भी सुनाया करते थे।	वीरता भाव उत्पन्न करना।
गश्हकार्य	झाँसी की रानी के जीवन और उनकी वीरता पर एक निबन्ध लिखिए।		

8.5 निष्कर्ष :

आधुनिक हिन्दी गद्य का जन्म उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम दशाब्द में हुआ। उसके हिन्दी में गद्य बहुत ही थोड़ा था और जो कुछ था भी, वह ब्रजभाषा में, साहित्य वर्तमान भाषा खड़ी बोली में नहीं। जन्म के उपरान्त आधुनिक गद्य के विकास की पचास वर्ष तक अत्यन्त मंद रही, लेकिन भारतेन्दु हरिशचन्द्र के साहित्य–क्षेत्र में अवतीर्ण होने पर उसकी धरा में प्रवाह आ गया। विषय तथा शैली दोनों की विविधता के विचार से भारतेन्द्व तथा उनके समकालीन लेखकों ने गद्य विषय की उन्नति की, लेकिन शैली में प्रौढ़ता तथा भाषा में परिष्कार का काम बीसवीं शताब्दी में महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा उनके समकालीन और पववर्ती लेखकों द्वारा पूरा हुआ।

इस तरह से आधुनिक हिन्दी गद्य के विकास का इतिहास पिछले सौ वर्षो का इतिहास है। यद्यपि अभी सारा गद्य साहित्य पद्य के समान समृद्व नहीं फिर भी जिस द्रुत गति से उसकी उन्नति हो रही है, वह एक अत्यन्त उज्ज्वल भविष्य का संकेत है। हिन्दी के राष्ट्रभाषा स्वीकृत होने तथा एक विस्तृत भू–भाग में शिक्षा का मायम चुने जाने के कारण गद्य के रूपों की रचना तत्परता और वेग से हो रही है। आवश्यकतानुसार गम्भीर से गम्भीर बौद्विक तथा वैज्ञानिक विषयों के विवेचन के लिए पारिभाषिक शब्दावली तथा उपयुक्त शब्दावली का निर्माण हो रहा है। ललित साहित्य के विभिन्न रूप नाटक, कहानी, उपन्यास निबन्ध आदि सबका भण्डार भरा जा रहा है। साहित्य के निरन्तर विकास का यह एक लक्षण है। हिन्दी गद्य का एक अंग जीवनी है। घटनाओं के ऐतिहासिक ब्यौरे से पूर्ण जीवनियां बहुत लिखी गयी हैं लेकिन व्यक्तित्व का विश्लेषण और मूल्यांकन करने वाले जीवन चरित्र बहुत थोड़े हैं।

हिन्दी आत्मकथा लिखने का चयन कुछ ही वर्षो से चला है। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद महापण्डित राहुल सांकश्त्यायन, श्री वियोगी हरि प्रभशति विद्वानों के आत्म चरित्र बडे सुन्दर निकल हैं जिससे आशा होती है कि भविष्य में हमारे साहित्यकार इस ओर अग्रसर होंगे। बाबू गुलाबराय ने मेरी असफलताएं नाम से अपने कुछ आत्मकथात्मक स्फुट लेख का संग्रह प्रकाशित किया था।

मानव चेतना सम्पन्न तथा संवेदनशील प्राणी है। उसका मन अपने शरीर पर पडने वाले सुख दुख, प्रेम, दया, क्रोध एवं आशा से चलायमान रहता है और प्रकृति के प्रतिपल परिवर्तन होने वाले सौम्य, मनोरम, विकराल रूपों से भी भाव ग्रहण करता चलता है। साथ ही वाणी का वरदान भी मानव को चिरकाल से प्राप्त है। अतः प्रकृति के इन नाना रूपों से उद्भूत मनोविकारों तथा जीवन की अन्य परिस्थितियों के सम्बन्ध में अपनी वाणी द्वारा मानव अपने अनुभवों को व्यक्त कर सन्तोष, तृप्ति और आनन्द की प्राप्ति करता रहा है। मनुष्य की इसी प्रवृति की प्रेरणा से ज्ञान और आनन्द के उस भण्डार का सृजन, चयन एवं संवर्द्वन होता रहा है, जिसे साहित्य कहते हैं।

साहित्य का ही एक अंग कविता है जो मानवीय भावों का सहज अभिव्यक्तिकरण है, अथवा सुख–दुख की भावावेशमयी अवस्था का स्वर साधना के उपयुक्त पदों में प्रकाशन ही कविता है। कविता में भाव–तत्व, कल्पना–तत्व और बुद्धितत्त्व तीनों का सम्मिश्रण होता है। काव्य मनुष्य को उस धरातल पर ले जाता है जहां वह 'स्व' पर 'पर'की भावना से रहित होकर अपने को केवल मनुष्य अनुभव करता है। हृदय की इसी मुक्तावस्था के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती है, वही कविता है।

जिस प्रकार जीवित व्यक्ति नहीं कह सकता कि जीवन क्या है और एक भक्त विश्लेषण नहीं कर सकता कि ईश्वर क्या है, उसी प्रकार काव्य की भी कोई निश्चित परिभाषा नहीं की जा सकती। फिर भी इतना अवश्य है कि कविता आत्मा की संकल्पनात्मक अनुभूति है जो छन्दोबद्ध तथा नियमित गति में होने के कारण ताल और लय पर चलती है। इस कारण कविता की शिक्षण पद्वति का विधन गद्य–शिक्षण की पद्धति से भिन्न होता है।

8.6 आत्मजांच और परीक्षण

1. गद्य किसे कहते है तथा गद्य और पद्य में अन्तर स्पष्ट कीजिए ?
2. गद्य भाषा के कौन कौन से उद्देश्य हैं ? इन उद्देश्यों का स्पष्टीकरण करें।
3. गद्य शिक्षण में विचार विश्लेषण का क्या महत्व है? इस सन्दर्भ में अपने विचार लिखिए।
4. गद्य शिक्षण की पाठ–योजना के लिए किसी प्रकरण का चयन कीजिए और उस पर पाठ योजना बताइये।
5. गद्य शिक्षण के सोपानों की व्याख्या करें।
6. पद्य की परिभाषा दीजिए।
7. बाल गीत से क्या तात्पर्य है। एक बाल गीत लिखते हुए उसका स्थान हिन्दी शिक्षण में निर्धारित कीजिए।
8. पद्य का आस्वादन कराने के लिए तथा रोचक बनाने के लिए आप कौन कौन से उपयोग को काम में लाएंगे?
9. पद्य पढ़ाने की कौन–कौन सी विधियां प्रचलित हैं? उनमें से आप कौन कौन सी विधि अपनाएंगे और क्यों?

8.7 सहायक ग्रन्थ सूची :

1. वरवाल, जसपाल सिंह (2005) हिन्दी भाषा शिक्षण, गुरूवर बुक डिपो, सुधार (लुधियाना)
2. खन्ना, ज्योति (2000), हिन्दी शिक्षण,धनपत राय एण्ड कम्पनी दिल्ली।
3. भाई, योगिन्द्रजीत (1984), हिन्दी भाषा शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
4. भाटिया, एम. एम. (1999), हिन्दी शिक्षण विधियां टण्डन पब्लिकेशन्ज, लुधियाना।
5. पाण्डे, रामशकल (1999), हिन्दी शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
6. शर्मा, बी. एन. (1968) , हिन्दी शिक्षण, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।
7. सफाया, रघुनाथ (1986–97), हिन्दी शिक्षण विधि, दिल्ली पुस्तक सदन, पटना।
8. सूद, विजय (1997), हिन्दी शिक्षण विधियां, टण्डन पब्लिकेशन्ज, लुधियाना।

....

हरबर्ट एवं आर सी ई एम उपागमों

9.1 भूमिका

9.2 उद्‌देश्य

9.3 पाठ योजना निर्माण

9.4 पाठ योजना के विभिन्न उपागम

9.5 हरबर्ट उपागम

9.6 आर सी ई एम उपागम

9.7 निष्कर्ष

9.8 आत्मजांच और परीक्षण

9.9 सहायक ग्रन्थ सूची

9.1 भूमिका

कोई भी कार्य आरम्भ करने से पहले उस पर चिन्तन करना, उसके उद्‌देश्य निर्धारित करना, उन उद्‌देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक साधन जुटाना तथा कार्य विधियां निश्चित करना और कार्य समाप्त करने की अवधि निर्धारित करना अत्यन्त आवश्यक है– और इन सब की गणना योजना के अन्तर्गत होती है। हमेशा से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में योजना की आवश्यकता रही है। आज के व्यस्थ या तथा तेज रफतार जीवन में इसकी आवश्यकता अत्यधिक है। आज का जीवन बहुमुखी है। एक व्यक्ति को कई काम करने होते है। कौन सा काम पहले करना है और किस प्रकार करना है, इसके लिए भी योजना बनानी होती है आज के युग प्रत्येक व्यस्त व्यक्ति अपनी दैनिक योजनाएं बनाता है। योजनाओं के अभाव में जीवन इतना अस्त व्यस्त व्यक्ति अपनी

दैनिक योजनाएं बनाता है योजनाओं के अभाव में जीवन इतना अस्त व्यस्त हो जाता है कि कुछ समझ नहीं आता कि क्या करें और क्या न करे। जिस प्रकार जीवन की व्यवस्तता एवं सुव्यवस्था योजना की मांग करती है उसी प्रकार सामाजिक जीवन के बडे बडे दायित्व भले ही वह सरकार से सम्बन्धित हों लेकिन योजना के बिना पूरे नहीं हो सकते। सुधार एवं विकास के सभी कार्य धरे के धरे रह जाते यदि उनके लिए योजनायें न बनाई जाती। हमारी सरकार देश की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कशतिक प्रगति एवं शिक्षा के विकास के लिए पंचवर्षीय योजनाएं बनाती है। प्रत्येक क्षेत्र में काम करने वाले अधिकारी अपने क्षेत्र के विकास के लिए आवश्यक योजनायें बनाते है और फिर उन योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक साधन जुटाये जाते है उन साधनों के प्रयोग के लिए आवश्यक विधियां बनाई जाती है कुशल व्यक्तियों को नियुक्त किया जाता है और निर्धारित समय में योजना कार्यान्वित कर दी जाती है फिर निर्धारित लक्ष्यों के आधार पर योजना का मूल्यांकन किया जाता है।

शिक्षा के क्षेत्र मे भी योजना अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षा का क्षेत्र बहुत व्यापक है। इस के कई भाग एवं विभाग है। शिक्षण, स्कूल गठन, प्रबन्ध, विद्यार्थियों का प्रवेश, अनुशासन, विद्यार्थियों की उचित देखभाल, परीक्षा, मार्गदर्शन–सनुपदेशन आदि विभिन्न भागों की व्यवस्था करनी होती है। योजना के बिना इतनी व्यापक व्यवस्था करना असम्भव है। शिक्षण को ही लें। कहा जा सकता है कि शिक्षण प्रदान करना शिक्षक का काम है। इसके लिए उसे शिक्षण सूत्रों शिक्षण विधियों तथा प्रविधियों का प्रशिक्षण दिया जाता है इनका प्रयोग कर के वह अपना कार्य भली भांति पूरा कर सकता है। परन्तु केवल शिक्षण सूत्रों तथा शिक्षण विधियों का ज्ञान एवं प्रशिक्षण ही पर्याप्त नहीं। कोई भी शिक्षण विधि अपनाते समय उसे देखना होता है कि उसे क्या पढ़ाना है? उसके पढ़ाने का लक्ष्य क्या है? विद्यार्थियों की शारीरिक, मानसिक एवं बौद्विक आवश्यकतायें क्या है? जिस विधि का वह प्रयोग कर रहा है वह कितनी उपयोगी है। विद्यार्थियों को कक्षा में सक्रिय कैसे बनाया जा सकता है? उन्हे प्रेरित कैसे किया जा सकता है? कितनी विषय सामग्री पढ़ानी है? उस विषय सामग्री को निर्धारित समय पर कैसे समाप्त करना है? ऐसे विभिन्न प्रश्नों पर अच्छी तरह विचार करने के पश्चात् वह शिक्षण कार्य को प्रभावशाली, सुव्यवस्थित तथा उपयोगी बना सकता है। अपने शिक्षण के चिन्तन एवं कार्यान्वत पक्ष को स्पष्ट तथा सुव्यवस्थित रूप देने के लिए उसे योजना की आवश्यकता होती है। यद्यपि उसके पास पाठ्य पुस्तकें होती है और शिक्षा बोर्ड द्वारा निर्धारित पाठ्य–क्रम भी होता है फिर भी उसे पाठय क्रम के अनुसार शिक्षण प्रक्रिया संचालित करने के लिए योजना बनानी होती है।

9.2 उद्‌देश्य

इस पाठ को ध्यानपूर्वक पढ़ने के बाद आप–

– पाठ योजना के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।

– पाठ योजना का प्रारूप तैयार कर सकेंगे।

– पाठ योजना के प्रकारों को स्पष्ट कर सकेंगे।

– हरवर्ट उपागम के गुणों को स्पष्ट कर सकेंगे।

– आर. सी. ई. एम. उपागम के गुण व दोष बता सकेंगे।

9.3 पाठ योजना निर्माण

दैनिक पाठ–योजना निर्माण अध्यापक के लिए उतना ही आवश्यक है जितना कि उसके द्वारा नियमित रूप से विद्यालय जाना और अपनी विषय की कक्षाएँ लेना तथा अन्य सम्बन्धित कार्य करना। किसी भी शिक्षक की शिक्षण में सफलता उसके द्वारा भली–भाँति नियमित रूप से पाठ–योजना निर्माण कार्य करने और उस पर चलकर अपने शिक्षण–कार्य को सम्पादित करने में है। अतः प्रत्येक अध्यापक को दैनिक पाठ–योजना निर्माण–कार्य में अपने आपको अनावश्यक रूप से प्रशिक्षित करने का प्रयत्न करना चाहिए। इसके लिए उसे पाठ–योजना निर्माण से सम्बन्धित विभिन्न उपागमों तथा पाठ–योजना किस रूप में बनाई जाए उससे सम्बन्धित आवश्यक रूपरेखा तथा ढाँचे इत्यादि का पूरा ज्ञान होना चाहिए। आगे के पश्ठों में हम पाठ–योजना कैसे बनाएं इससे सम्बन्धित आवश्यक जानकारी देने का प्रयास कर रहे है।

हिन्दी–शिक्षण में पाठ–योजना का प्रारूप तथा रूपरेखा

पाठ योजना निर्माण के लिए सामान्यतः प्रशिक्षण महाविद्यालयों में जिस प्रारूप या रूपरेखा का प्रयोग किया जाता है, वह निम्न प्रकार से है:

क्रम संख्या .... दिनांक...................................

छात्राध्यापक का नाम तथा अनुक्रमांक.................................. कक्षा......................................

विषय... छात्रों की औसत आय....................

उपविषय... कालांश की अवधि..........................

7. प्रकरण

8. पाठ के उद्‌देश्य– (i) सामान्य उद्‌देश्य (ii) विशिष्ट उद्‌देश्य

9. सहायक सामग्री

10. पूर्व–ज्ञान

11. प्रस्तावना

12. उद्‌देश्य–कथन

13. प्रस्तुतीकरण

14. श्यामपट सारांश

15. बोध–प्रश्न

16. पुनरावृत्ति

17. गृह–कार्य

इनमें प्रथम बातें सामान्य जानकारी के लिए आवश्यक होती है। शेष का विवरण, उनसे सम्बन्धित भ्रान्तियां तथा उनका वर्णन नीचे दिया जा रहा है।

7. **प्रकरण–** सफल अध्ययन के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि बालकों को उतना ही पढ़ाया जाए जितना वे सरलता से समझ सकें। इसके लिए विषय की दुरूहता तथा लम्बाई आदि को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक पाठ को कुछ भागों में विभाजित कर दिया जाए। प्रतिदिन उतना ही पढ़ाया जाए जितना कि बालक एक निश्चित अवधि में सरलता से ग्रहण कर सके। जिस भाग में जिस प्रकार की प्रधानता होती है उसी के आधार पर प्रकरण निर्धारित किया जाता है। उदाहरण के लिए 'राम का वनगमन' पढ़ाना है तो सम्भव है उसमें वनगमन के कारणों, कठिनाईयों आदि सभी का उल्लेख हो। यदि है तो सभी को एक ही घण्टे में नहीं पढ़ाया जा सकता, इसलिए एक दिन 'वनगमन के कारण' दूसरे दिन 'वनगमन के समय अयोध्यावासियों की दशा' तीसरे दिन 'वन में भगवान राम' चौथे दिन 'राम–वनगमन के पश्चात् अयोध्या निवासियों की दशा' आदि भागों में विभाजित कर दिया जाए। ये सभी अलग–अलग दिनों में पढ़ाए जाने वाले पाठों के प्रकरण होंगे।

8. **पाठ के उद्‌देश्य**–किसी भी कार्य को करने से पहले उसका उद्‌देश्य निर्धारित करना परमावश्यक है क्योंकि शिक्षण की सफलता इसी बात में निहित है कि उद्‌देश्य सामने हो। पाठ को पढ़ाने से पूर्व जो उद्‌देश्य निर्धारित किए जाते हैं उन्हें दो भागों में विभाजित कर सकते हैं:–

(i) सामान्य उद्‌देश्य (ii) विशिष्ट उद्‌देश्य

बहुत से शिक्षक सामान्य और विशिष्ट उद्‌देश्यों का स्पष्ट नहीं समझ पाते। सामान्य उद्‌देश्यों की विशिष्ट उद्‌देश्य और विशिष्ट उद्‌देश्यों को सामान्य उद्‌देश्य समझना और लिखना बहुत बड़ी भूल है। सामान्य और विशिष्ट उद्‌देश्यों में स्पष्ट अन्तर समझने के लिए सरल और साधारण नियम यह है कि विषय से सम्बन्धित उद्‌देश्य सामान्य तथा प्रकरण से सम्बन्धित उद्‌देश्य विशिष्ट उद्‌देश्य होते है। सामान्य उद्‌देश्य एक विषय के सभी विशिष्ट उद्‌देश्य प्रकरण के साथ बदलते रहते है। अर्थात् सामान्य उद्‌देश्यों का सीधा सम्बन्ध विषय से तथा विशिष्ट उद्‌देश्य का प्रकरण से होता है।

9. **सहायक सामग्री–**सहायक सामग्री वह साधन है, जिसके माध्यम से पाठ को प्रभावशाली बनाकर भलीभाँति समझाया जा सकता है।

- **भ्रान्ति निवारण–** सहायक सामग्री के सम्बन्ध में कुछ बातें ऐसी हैं, जिन्हें समझने में शिक्षक वर्ग प्रायः उलझन में पड़ जाता है। अतः इन सबका विशेष ध्यान रखना परमावश्यक है। इनमें से कुछ का उल्लेख नीचे किया जा रहा है :–

(i) क्या प्रत्येक पाठ में सहायक सामग्री का प्रयोग आवश्यक है? सहायक सामग्री की आवश्यकता और प्रयोग के सम्बन्ध में शिक्षाशास्त्रियों के दो मत है। प्रथम के अनुसार प्रत्येक पाठ में सहायक सामग्री का प्रयोग आवश्यक है। दूसरे मत के अनुसार सहायक सामग्री का प्रयोग केवल उसी समय अच्छा लगता है जब उसकी आवश्यकता पड़े। इनमें दूसरा मत ही अधिक समीचीन है। सहायक सामग्री का अनावश्यक प्रयोग पाठ को नीरस बना देता है। शिक्षक का उद्देश्य बालकों को एक विशिष्ट बात का ज्ञान कराना होता है। यदि वह अपने इस उद्देश्य की पूर्ति बिना सहायक सामग्री के प्रयोग से कर सकता है तो सर्वोत्तम है। प्रशिक्षण की सफलता बाह्यडम्बर दूर रहने पर ही है। इसका यह अर्थ कदापि नही कि जिस बात को साधारण प्रवचन द्वारा भालि भाति नही समझाया जा सके, उसे समझाने के लिए भी सहायक सामग्री का प्रयोग न किया जाए। इतिहास, भूगोल आदि के पाठों में भाषा के पाठों की अपेक्षा सहायक सामग्री के प्रयोग की अधिक आवश्यकता पड़ती है। सच तो यह है कि योग्य शिक्षक स्वयं एक सहायक सामग्री का पिटारा होता है, वह किसी न किसी प्रकार अपनी बात को पूर्णता स्पष्ट कर ही देता है। अतः स्पष्ट है कि सहायक सामग्री का प्रयोग सभी पाठों की बजाय वहीं किया जाए जहाँ उसकी आवश्यकता हो।

(ii) सहायक सामग्री का प्रयोग कक्षा के स्तर के अनुसार होना चाहिए। कभी–कभी शिक्षक ऐसी सामग्री का प्रयोग करतें हैं, जो बड़ी हास्यास्पद और अनुशासन भंग करने वाली होती है। उदाहरण के लिए नवीं, दसवीं कक्षाओं में महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू आदि के चित्र दिखाना। पहाड़ों के विषय में पढ़ाते समय कक्षा में पत्थरों आदि का प्रयोग पाठ को नीरस बनाने के अतिरिक्त उसके समझाने में किसी प्रकार भी सहायक नहीं होते। पाठ के समझाने में शिक्षक का उद्देश्य इस बात को स्पष्ट करना होना चाहिए कि जिसके विषय में बालक अनभिज्ञ है। जिस बात को ये भलीभाँति जानते है उसका दिखाना पाठ में नीरसता लाने के लिए उसके समझाने में किस प्रकार भी सहायक नहीं होता। अतः सहायक सामग्री का प्रयोग उचित स्थान पर करना ही उचित है।

(iii) सहायक सामग्री का पाठ सूत्र में उल्लेख करते समय श्यामपट, खड़िया, झाड़न आदि का नाम गिनाना किसी भी दशा में ठीक नही। ये सभी तो आवश्यक सामग्री के अन्तर्गत गिनी जानी चाहिए। सामान्य और विशिष्ट उद्देश्यों की भाँति जो सामग्री सभी पाठों में समान रूप से प्रयोग की जाती है। वह आवश्यक सामग्री है तथा विषय और प्रकरण के अनुसार पाठ को समझने के लिए बदलती

हुई सामग्री, सहायक सामग्री कहलाती है। इसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के चित्र, मानचित्र आदि आते है। अन्य सभी बातों का विस्तृत वर्णन 'भाषा शिक्षण में सहायक सामग्री' पाठ के अन्तर्गत किया गया है।

10. **पूर्व–ज्ञान–**नवीन ज्ञान को यदि बालकों के पूर्व– ज्ञान से सम्बद्ध कर दिया जाए तो बालक नई बातों को शीघ्र ही ग्रहण कर लेते हैं। पूर्व–ज्ञान की सीमा के सम्बन्ध में शिक्षकों का दृष्टिकोण उतना विस्तृत नहीं है जितना होना चाहिए। प्रायः कुछ शिक्षक उसी को पूर्व–ज्ञान समझते हैं जो उन्होंने पहले दिन पढ़ाया था। वस्तुतः पूर्व ज्ञान का क्षेत्र इतना सीमित न होकर बड़ा विस्तृत है। बालक किसी भी माध्यम से जो कुछ भी सीख चुके है, वहीं उनके पूर्व– ज्ञान में सम्मिलित किया जा सकता है। घर में पाठशाला में और समाज में जहाँ भी बालक रहता है वहाँ से अवश्य कुछ न कुछ सीखता है, यही सीखा हुआ ज्ञान उसके पूर्व–ज्ञान में जुड़ता जाता है। इस ज्ञान का संग्रह जितना अधिक होगा बालक की जानकारी उतनी ही अधिक होगी। इस जानकारी के लिए दो बातें आवश्यक हैः–

(i) व्यक्ति या बालक की किसी बात को ग्रहण करने या समझने की क्षमता, जो बहुत कुछ उसकी बुद्धि की प्रखरता पर आधरित है।

(ii) ज्ञान की उपदेयता अर्थात् वे स्थान, वस्तु और बातें जिनके द्वारा ज्ञान प्राप्त होता है, सभी वातावरण पर आधारित होती है। गश्ह, पाठशाला तथा समाज के जैसे वातावरण में बालक, रहेगा, वह वैसा ही ज्ञान प्राप्त करेगा। बालक ने घर में रहकर, पाठशाला में पढ़कर तथा साथियों के साथ खेलकर जो कुछ सीखा है, वही उसका पूर्व–ज्ञान है।

♦ **भ्रान्ति–निवारण –(i)** पूर्व–ज्ञान के आधार पर पूछे जाने वाले प्रस्तावना के प्रश्नों में केवल पिछले दिन पढ़ाई हुई बात ही पूर्व–ज्ञान नहीं होती अपितु जो कुछ भी जहाँ से भी और जैसे भी बालक सीख चुका है, वही उसका पूर्व–ज्ञान है। **(ii)** शिक्षक यदि आवश्यक समझें कि पढ़ाए जाने वाले पाठ में पूर्व–ज्ञान के प्रयोग की कोई आवश्यकता नहीं तो वह बिना पूर्व–ज्ञान का प्रयोग किए ही अपना पाठ प्रारम्भ कर सकता है। अध्यापक आवश्यकता तथा परिस्थिति के अनुसार लाभ उठाकर पाठ का प्रारम्भ कर सकता है। परन्तु यह विशेष परिस्थितियों में ही होगा, सभी परिस्थितियों में नही।

11. **प्रस्तावना–** पूर्व–ज्ञान के आधर पर नवीन ज्ञान ग्रहण हेतु तैयार करने के स्थल का नाम प्रस्तावना है। प्रस्तावना का अभिप्राय रुचिकर ढंग छात्रों के पूर्व निर्मित ज्ञान को आधार मान कर वहाँ पहुँचा देना है, जहाँ से प्रस्तुत पाठ प्रारम्भ करना है। बालकों को नवीन ज्ञान की देहरी दिखा देना प्रस्तावना का प्रमुख कार्य है। प्रस्तावना में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिएः–

(i) प्रस्तावना प्रश्न, चित्र, उदाहरण, कहानी आदि के माध्यम से निर्मित की जाती है।

(ii) प्रस्तावना के प्रश्न सरल, आकर्षक एवं छोटे हों।

(iii) प्रश्नों के बीच घनिष्ट सम्बन्ध होना चाहिए।

(iv) प्रश्न क्रमशः हों। पहले सरल, सरल से किंचित कठिन और अंतिम प्रश्न नवीन ज्ञान की देहरी तक पहुँचाने वाला हो।

(v) प्रश्न संख्या 3 से 5 तक होनी चाहिए।

(vi) प्रश्न छात्रों के जीवन एवं रुचि से सम्बन्ध हो।

(vii) प्रारम्भिक प्रश्न बालकों के पूर्वज्ञान से सम्बन्धित हों।

(viii) प्रस्तावना में व्यर्थ के प्रश्नों के लिए कोई स्थान नहीं है।

12. **उद्देश्य कथन**—उद्देश्य—कथन प्रस्तावना के अंतिम प्रश्न के समाप्त होने पर कहा जाता है। इसमें शिक्षक बालकों के पाठ का निश्चित उद्देश्य बतलाता है। इस स्थान का निम्नलिखित महत्व हैः—

(i) इससे छात्रों को पाठ का अभीष्ट उद्देश्य मालूम हो जाता है।

(ii) इससे बालक निश्चित पाठ की ओर प्रेरित होकर आगे बढ़ते है।

(iii) इससे छात्रों का ध्यान विषय या प्रकरण पर केन्द्रीभूत हो जाता है।

(iv) यह पाठ को क्रम एवं निश्चित दिशा प्रदान करता है।

(v) यह अध्यापक को सही दिशा में आगे बढ़ाता है।

उद्देश्य कथन नवीन ज्ञान एवं पूर्वज्ञान का मिलन बिन्दु है। यहीं से छात्र नवीन ज्ञान की ओर उन्मुख होते है। रायबर्न ने लिखा है कि प्रस्तावना के बाद उदेश्य कथन का सोपान आता है। इस बात में तो कोई संदेह नही है कि शिक्षक के लिए पाठ का उदेश्य जानना आवश्यक है, पर छात्रों के लिए भी यह आवश्यक है कि वे पाठ के उद्देश्य से परिचित हो।

13. **प्रस्तुतीकरण**—प्रस्तुतीकरण पर कालांश का 2/3 भाग व्यतीत किया जाता है। पूरे पाठ का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान यही है। प्रस्तुत ज्ञान जो देना है, उसका सारा तथ्य यही निहित रहता है। यही स्थल है, जहां अध्यापक शिक्षण विधियां कथा, कहानियों उदाहरणों एवं सहायक साम्रगी का प्रयोग करता है। ये सोपानों के अनुसार बाँट कर पाठ को व्यवस्थित करके प्रभावशाली ढंग से ज्ञान देना चाहिए। प्रत्येक सोपान के अन्त में दूसरे सोपान का पूर्वाभ्यास मिलना चाहिए। विषय के स्पष्टीकरण के लिए सहायक सामग्री, उदाहरण, कथा—कहानी आदि का भी प्रयोग किया जाना चाहिए। इससे पाठ दिलचस्प होते है। प्रक्रमानुसार व्यवस्थित ढंग से होने चाहिए।

हिन्दी में पहले अध्यापक आदर्श वाचन करता है। फिर छात्र अनुभव वाचन करते है। गद्य में उच्चारण

अभ्यास व अशुद्धियों का निवारण भी कर जाता है। बोधप्रश्न व्याख्या लिखित एवं निरीक्षण के उपरान्त रसानुभूति में व विचार विश्लेषण गद्य में के प्रश्न किऐ जाते है। पद्य में कक्षा वातावरण काव्यमय बनाए रखने के लिए पुनः रसानुभूति पाठ प्रस्तुत किया जाता है। प्रस्तुतीकरण में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए।

(i) पाठ के के उद्‌देश्य की पूर्ति होनी चाहिए।

(ii) छात्रों को अपेक्षित ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए।

(iii) पाठ्य–वस्तु मनोविज्ञान तर्क एवं स्वाभाविकता पर आधरित हों।

(iv) हिन्दी में मुख्यतया कविता में सोपानों की आवश्यकता नहीं है।

(v) प्रस्तुतीकरण में प्रश्न, उदाहरण, कहानी, सहायक सामग्री आदि का प्रयोग होना चाहिए।

(vi) पाठ क्रमबद्ध रूप से क्रमशः बढाया जाए।

(vii) कक्षा का वातावरण रुचिकर एवं सरल बनाना आवश्यक है।

(viii) प्रस्तुतिकरण में वैयक्तिक विभिन्नता का ध्यान रखा जाना चाहिए।

(ix) प्रस्तुतिकरण में छात्र एवं शिक्षक दोनों को ही सहयोग के साथ सक्रिय रूप में पाठ को आगे बढ़ाना चाहिए।

(x) प्रस्तुतीकरण के स्थलों में शिक्षण–सिद्धातों व सूत्रों का ध्यान रखना चाहिए।

(xi) बालकों में साहित्यिक प्रवशत्ति पैदा करने के लिए चेष्टा करना चाहिए।

14. **श्यामपट सारांश** –श्यामपट सारांश का उद्‌देश्य पढ़ाए हुए पाठ की मुख्य–बातों को सारांश रूप में लिखा देना है, ताकि बालक पाठ को घर पर दुहरा सकें। इसकी आवश्यकता भाषा के पाठों में रचना पाठों को छोड़कर इतनी अधिक नहीं पड़ती जितनी सामाजिक विषयों (इतिहास, भूगोल आदि) में, फिर भी यदि भाषायी पाठों में श्यामपट सार लिखने की आवश्यकता पड़े, तो सारांश लिखते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए।

(i) श्यामपट सारांश सारगभित वाक्यों में और सूक्ष्म हो, किन्तु कोई मुख्य बात न छूट जाऐं।

(ii) कुछ अध्यापक श्यामपट सारांश मे ही समय का अधिकाश भाग व्यतीत कर देते है, यह ठीक नहीं है।

(iii) श्यामपट पर सारांश शिक्षक को स्वंय लिखना चाहिए या बालकों द्वारा लिखवाना चाहिए। इस विषय में कोई एक राय नहीं। ऐसे समय पर शिक्षक को कक्षा की स्थिति को ध्यान रखते हुए अपनी सुझबूझ से काम लेना चाहिए। फिर भी श्यामपट सारांश में बालको की

सहायता लेने से एक तो बालक सतर्क रहते हैं, साथ ही उनका संकोच दूर होकर उनका साहस बढ़ता है।

(iv) श्यामपट–सार लिखते समय शिक्षक को बोलना चाहिए या नही। इस विषय में कोई निश्चित राय नहीं यह सब कक्षा और समय की परिस्थिति पर निर्भर करता है। यदि कक्षा बड़ी हैं या श्यामपट ठीक न होने से पीछे बढ़े हुए बालक श्यामपट पर लिखे हुए वाक्यों को भली प्रकार नहीं पढ़ पाते तो लिखने के साथ–साथ बोलना ठीक रहता है। परन्तु यदि बच्चे शिक्षक के लेख को ठीक–ठीक पढ़ने में समर्थ है तो बोलने की कोई आवश्यकता भी नहीं रहती अतः श्यामपट सारांश लिखते समय बोलने या न बोलने का कार्य परिस्थित्यानुकूल होना चाहिए।

(v) **बोध प्रश्न–** सामाजिक विषयों में (इतिहास भूगोल आदि) बोध प्रश्न मूल्यांकन प्रश्नों के रूप में पूछे जाते है और इन्ही प्रश्नों के उत्तर के आधार पर श्यामपट सार लिखा जाता है। परन्तु हिन्दी शिक्षण की कुछ पुस्तकों में बोध प्रश्नों को इस रूप में नहीं पूछा गया। पाठ्यांश में जो कठिन शब्द आये है। उनकी व्याख्या करने के लिए जो प्रश्न पूछे गए है। उन्हें विद्वानों ने बोध प्रश्न नाम दिया है परन्तु इस सम्बन्ध में हमारी स्पष्ट राय है कि भाषायी पाठों में जो प्रश्न किसी कठिन स्थल की व्याख्या करने के लिए पूछे जायें वे विचार विश्लेषण या भाव विश्लेषण के प्रश्न पूछे जाऐंगे, वे बोध प्रश्न कहलायेंगे। कुछ भी हो, बोध प्रश्न पूछते समय यह ध्यान रखना आवश्यक हैं कि :

(vi) कम से कम बोध प्रश्न अधिक से अधिक पाठ की जानकारी दे सकें।

(vii) पाठ के महत्वपूर्ण भाग में से बोध प्रश्न अवश्य पूछे जायें।

(viii) यदि पाठ एक से अधिक अन्वितियों में पढ़ाया जाये तो प्रत्येक अन्विति के पश्चात् बोध प्रश्न पूछे जायें।

16. **पुनरावृति–**किसी भी विषय का कोई भी पाठ क्यों न हो उसे पढ़ाने के पश्चात् यह जानना आवश्यक है कि पाठ किस सीमा तक बालकों की समझ में आया, पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति में शिक्षक सफल रहा या नहीं और यदि सफल रहा तो किस सीमा तक? इन सब बातों की जानकारी के लिए जो प्रश्न पूछे जाते है उन्हें पुरावृति प्रश्न कहते है। अतः पुनरावृत्ति प्रश्नों के सम्बन्ध में सदैव ध्यान रखा जाना चाहिए कि–

(i) इनका सम्बन्ध 'रूचि' के उद्देश्य को छोड़कर शेष सभी उद्देश्यों से होता है जबकि बोध प्रश्नों का सम्बन्ध विषय–वस्तु या भाषा तत्त्वों सम्बन्धी ज्ञानात्मक उद्देश्यों के पाठान्तर्गत मूल्यांकन से।

(ii) पुनरावृति प्रश्न समूचे पाठ को पढ़ाने के पश्चात् ही पूछे जाते हैं जबकि बोध प्रश्न पाठ के बीच में।

(iii) पुनरावृति में प्रश्नों की संख्या अधिक नहीं होनी चाहिए। प्रश्नों की संख्या निश्चित नहीं होती फिर भी मोटे तौर पर पुनरावशति में उतने ही प्रश्न पूछे जा सकते है जितने पाठ के पूर्व में निर्धारित उद्देश्य।

17. **गृह–कार्य–** किसी भी पाठ को पढ़ने के पश्चात् पाठ से सम्बन्धित कुछ ऐसे प्रश्नों के उत्तर बालकों को लिखित रूप में देने के लिए कहा जाना चाहिए जिनका सम्बन्ध पढ़ाये जोने वाले पाठ से हो तथा बालक घर से करके ला सकें। इसी का नाम गश्ह–कार्य है। गश्ह–कार्य के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित है–

(i) बालक अर्जित ज्ञान को परिपुष्ट कर सकें।

(ii) अवकाश के समय का सदुपयोग कर सकें।

(iii) विचारों की लिखित अभिव्यक्ति का अभ्यास कर सकें।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए गश्ह–कार्य देते समय जिन विशेष बातों का ध्यान रखना चाहिए, वे हैं–

(i) गृह–कार्य पढ़ाये गये पाठ से सम्बन्धित होना चाहिए।

(ii) उतना गृह–कार्य दिया जाये जितना बालक सरलता से घर पर कर सकें और वे इसे भार न समझने लग जायें।

(iii) गृह–कार्य बालकों की योग्यता और रूचि के अनुकूल हो।

(iv) जो गृह–कार्य दिया जाय उसे देख अवश्य लिया जाये।

इस प्रकार से उपरोक्त रूपरेखा के आधर पर पाठ–योजना का निर्माण किया जाता है। परन्तु यह जरूरी नहीं कि अध्यपाक इन सोपानों का अन्धनुकरण करे। पाठ–योजना तो शिक्षण को सफल, सुनियोजित एवं प्रभावशाली बनाने के लिए होती है। अतः अध्यापक को कक्षा की परिस्थिति एवं आवश्यकतानुसार अपनी कल्पनाशील एवं सृजनात्मक क्षमता से काम लेते हुए शिक्षण को रोचक, गतिशील एवं उद्देश्यपूर्ण बनाने का प्रयास करना चाहिए।

उपरोक्त रूपरेखा पर आधारित दैनिक पाठ–योजनाओं को गद्य, पद्य, व्याकरण एवं रचना आदि के शिक्षण सम्बन्धी अध्यायों में देखा जा सकता है। अब हम पाठ योजना के निर्माण के सम्बन्ध में प्रचलित विद्वानों के मतों की चर्चा करेंगे।

अभ्यास के लिए प्रश्न

(1) हिन्दी शिक्षण के पाठ–योजना का प्रारूप तथा रूपरेखा का वर्णन कीजिए।

9.4 पाठ योजना के विभिन्न उपागम

अब हम पाठ–योजना के निर्माण के संबंध में प्रचलित विद्वानों के मतों की चर्चा करेंगे। पाठ योजना निर्माण हेतु शिक्षाशास्त्रियों ने पाठ योजना निर्माण हेतु कई उपागमों को विकसित किया है। जिनमें से प्रमुख रूप से निम्न उपागम उल्लेखनीय है :–

1. हरबर्ट का पंचपदीप उपागम
2. ब्लूम का मूल्यांकन उपागम
3. मॉरीसन का इकाई उपागम
4. आर0 सी0 ई0 एम0 उपागम

इन सभी उपागमों में से प्रथम दो उपागमों का उपयोग हमारे देश के प्रशिक्षण महाविद्यालयों में प्रायः किया जाता है। यह बात दूसरी है कि ये प्रशिक्षण महाविद्यालय अपनी–अपनी रूचि के अनुसार इन उपागमों में थोड़ा बहुत परिवर्तन करके इनको पाठ–योजना निर्माण के लिए अपना रहे है। इन दोनों उपागमों का विवेचना यहां किया जा रहा है।

9.5 हरबर्ट उपागम

प्रसिद्व जर्मन शिक्षाशास्त्री हरबर्ट ने पाठ–योजना का निर्माण करने के लिए पद्धति को विकसित किया उसे ही हरबर्ट उपागम कहा जाता है। हरबर्ट, पूर्वानुवर्ती प्रत्यक्ष के सिद्धान्त को मानते थे। उनका विचार था कि हम जिन वस्तुओं व्यक्तियों या विचारों के सम्पर्क में आते है वे हमारे मन के किसी कोने में जाकर सुप्तप्राय हो जाते हैं। वे उनसे मिलते–जुलते विचारों, व्यक्तियों या वस्तुओं के सम्पर्क मे आने पर पुनः जागश्त हो जाते है। अतः पूर्वज्ञान के आधार पर नया ज्ञान दिया जाए तो बच्चा नवीन ज्ञान को आसानी से ग्रहण कर लेता है परन्तु इसके लिए बच्चे का स्वयं क्रियाशील होना आवश्यक है हरबर्ट ने अपने उन्हीं विचारो के आधार पर शिक्षण की प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए निम्न क्रम निश्चित किया है–

(i) सबसे पहले छात्र के सामने पाठ्यपुस्तक के तथ्यों को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया जाए।

(ii) फिर पाठ्यवस्तु का सम्बन्ध बच्चों के पूर्व अर्जित ज्ञान से जोड़ा जाए।

(iii) पाठ्यवस्तु को व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाए।

(iv) सीखे हुए नवीन ज्ञान का स्वयं प्रयोग करने के अवसर छात्रों को प्रदान किए जाएँ।

- ♦ जर्मन के प्रसिद्व शिक्षाशास्त्री हरबर्ट पूर्वानुवर्ती प्रत्यक्ष के सिद्धान्त में विश्वास रखते है। यह सिद्धान्त निम्नलिखित बातों पर आधारित है।

(i) मन और पर्यावरण के सम्पर्क से विचार उत्पन्न होते है।

(ii) यह विचार पहले चेतन मस्तिष्क में प्रवेश करते है।

(iii) फिर ये विचार मन के किसी कोने (अचेतन मन) में जाकर सुप्त प्राय हो जाते है।

(iv) जब अवचेतन में पडे हुए विचारों से सम्बन्धित कोई नया विचार सामने आता है तो अवेचतन में पड़े हुए विचार पुन चेतन मन पर आ जाते है और नये विचार के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के पश्चात् पुनः अवचेतन में चले जाते हैं।

(v) इसी प्रकार पूर्वानुवर्ती प्रत्यक्ष से विचारों की श्रृंखला बनती जाती है।

पूर्वानुवर्ती प्रत्यक्ष सिद्धांत का अनुसरण करते हुए हरबर्ट महोदय ने इस बात पर बल दिया है कि शिक्षण ज्ञात से अज्ञात की ओर चलना चाहिए अर्थात् बच्चे के पूर्वज्ञान के आधर पर उसे नया ज्ञान दिया जाना चाहिए। पूर्वज्ञान पर आधारित नये ज्ञान को बच्चा सुगमता से समझ लेता है परन्तु इसके लिए बच्चे का मानसिक रूप से सक्रिय होना अत्यन्त अवश्यक है। बच्चे को मानसिक रूप से सक्रिय बनाने के लिए हरबर्ट महोदय ने शिक्षण– प्रक्रिया का निम्नलिखित क्रम निश्चित किया है।

हरबर्ट द्वारा बताये गये पांच पद बड़े मनोवैज्ञानिक एवं तार्किक क्रम में प्रस्तुत किये गये है। इस क्रम में शिक्षण करने से आगमन और निगमन, दोनो विधियों का प्रयोग होता है और स्थायी रूप से सीखना सम्भव होता है। इन्ही पांच पदों या सोपानो के आधार पर तैयार की गई पाठ योजना को पंचपदीय प्रणाली की पाठ योजना के रूप में जाना जाता है। जिन पांच पदों का उल्लेख किया है वे इस प्रकार हैं–

1. तैयारी
2. प्रस्तुतीकरण
3. सम्बन्धीकरण अथवा तुलना
4. सामान्यीकरण
5. प्रयोग

1. **तैयारी–** शिक्षक को सबसे पहले विद्यार्थियों का मस्तिष्क नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए तैयार करना चाहिए। नवीन ज्ञान मस्तिष्क में तभी समा सकता है जब इसका सम्बन्ध पूर्व ज्ञान से हो। पूर्व ज्ञान से शिक्षक यह जान सकता है कि छात्रों का स्तर क्या है ? छात्र इस बात का अनुभव करने लगते

हैं कि उनके ज्ञान में कुछ कमी है जो पूरी होनी चाहिए। इस प्रकार छात्र नया ज्ञान प्राप्त करने के लिए जिज्ञासाशील हो जाते है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु शिक्षक निम्न ढंग अपना सकता है–

(i) प्रश्न पूछ कर।

(ii) कहानी सुनाकर।

(iii) दृश्य–श्रव्य साधनों का प्रयोग करके।

(iv) सम्बन्धित विषय की चर्चा करके।

2. **प्रस्तुतीकरण**–छात्रों को तैयार करने के बाद पाठक का उददेश्य घोषित करने के पश्चात् शिक्षक पाठ का उद्देश्य स्पष्ट शब्दों में घोषित कर देता है। ऐसा करने से नये पाठ की भूमिका की तैयारी हो जाती है और पूर्व ज्ञान परीक्षा भी हो जाती है। इसके पश्चात् पाठ को प्रस्तुत कर सकता है। यहां पर शिक्षक शिक्षण के कई तरह के साधनों का प्रयोग करता है जैसे कि प्रश्नोत्तर, कहानी सुनाना, व्याख्या करना, दृश्य श्रव्य साधनों का प्रयोग करना आदि इससे छात्रों का सहयोग लेना चाहिए। उसको विषय–वस्तु इस प्रकार प्रस्तुत करनी चाहिए कि इसको छात्र बिना कठिनाई से समझ सकें। इसमें क्रियाशीलता भी होनी चाहिए। शिक्षक को विषय–वस्तु को छात्रों के क्रियाशील सहयोग के साथ समझानी चाहिए। शिक्षक को ऐसा करने हेतु निम्न सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए

(i) **चुनाव और विभाजन का सिद्वान्त** – प्रस्तुत विषय–वस्तु का निपुणतापूर्वक चयन छात्रों के स्तर के अनुसान करना चाहिए। इसको सुविधपूर्वक भागों में विभाजित करना चाहिए।

(ii) **उत्तरोत्तर स्पष्टता का सिद्वान्त**– शिक्षक को शिक्षण करते समय यह देखना चाहिए कि जो कुछ पढ़ाया जा रहा है वह छात्रों की समझ में आ रहा है या नहीं। शिक्षक को आगे का भाग तभी शुरू करना चाहिए जब पीछे का भाग उनकी समझ में आ जाए।

(iii) **एकीकरण का सिद्वान्त** – शिक्षक पहले पाठ के एक अंश को समाप्त करे और फिर पाठ के सभी भागों को आपस में जोड़ें ताकि सारा पाठ समझ में आ जाए।

3. **सम्बन्धीकरण अथवा तुलना**–शिक्षक को प्रस्तुत तथ्यों और उदाहरणों के सम्बन्धों का तुलनात्मक और विरोधात्मक अध्ययन करना चाहिए ताकि छात्र उनका परस्पर सम्बन्ध समझ सकें और नियम निकाल सकें।

4. **सामान्यीकरण**–इससे पहले के पद (चरण) में छात्र विभिन्न तथ्यों का परस्पर सम्बन्ध समझते हैं। वह कुछ समान और विभिन्न सम्बन्धों का निष्कर्ष निकालते हैं। यह कुछ सामान्य सिद्वान्तों और नियमों की रचना करने में सहायता देते हैं। जबकि शिक्षक को स्वयं सामान्यीकरण नहीं करना पड़ता। शिक्षक छात्रों को इस प्रकार शिक्षण देता है। कि वे स्वयं सामान्यीकरण करने योग्य हो जाते हैं।

5. **प्रयोग–** जब छात्र सामान्यीकरण करने के योग्य हो जाते हैं तो शिक्षक को उन्हें समान समस्याएं और अभ्यासों में नियमों को प्रयोग करने के लिए कहना चाहिए। ज्ञान तभी लाभप्रद होता है। जब वो प्रयोग में आए। प्रयोग दोहराई पर बल देता है और ज्ञान स्थायी रूप को धारण करता है।

- **पाठ योजना की उपयोगिता–** हरबर्ट पाठ उपागम ज्ञान पाठों के लिए पूर्ण रूप से उपयोगी है। कला और रसानुभूति पाठों के लिए उपयोगी नहीं है क्योंकि इस उपागम में ज्ञान देने और ज्ञान अर्जित करने पर बल दिया जाता है। शिक्षक छात्र को पढ़ाता है और छात्र उसे चुपचाप सुनता है। कौशल पाठ में छात्रों की कला की क्रिया पर बल दिया जाता है। रस पाठों में छात्रों को ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं होती बल्कि सौन्दर्य की रसानुभूति और आनन्द की अनुभुति होती है।

  सामान्यीकरण का पद सोपान रसानुभूति और कला के पाठों के लिए उपयुक्त नहीं है। हां तैयारी, प्रस्तुतीकरण और प्रयोग पद सब प्रकार के पाठों में लाभप्रद है। इस प्रकार हरबर्ट के पद किसी भी प्रकार के पाठ मे पूरी तरह से प्रयोग में नहीं लाए जा सकते। ये पद केवल सुझाव मात्र हैं। आदेश देने वाले नही है। शिक्षक इनको पाठ के प्रकार के अनुसार परिवर्तित कर सकता है।

- **गुण–** हरबर्ट की पंचपदीय प्रणाली पूर्वानुवर्ती प्रत्यक्ष के सिद्वान्त पर आधरित होने के कारण शिक्षण को मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया बनाती है। इस उपागम के मुख्य गुण निम्नलिखित हैः–

(i) यह प्रणाली पूर्वानुवर्ती प्रत्यक्ष के सिद्धान्त पर आधरित होने के कारण मनोवैज्ञानिक है।

(ii) इस में विषय वस्तु ज्ञात से अज्ञात और सरल से कठिन की ओर चलती है। इसलिए इसे विद्यार्थियों के लिए अधिगम सुबोध हो जाता है।

(iii) विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान से सम्बन्धित होने के कारण नया ज्ञान उनके मन मस्तिष्क में स्थायी हो जाता है।

(iv) पाठ्य सामग्री के तार्किक रूप से क्रमबद्ध करने से अध्यापक के लिए शिक्षण सुव्यवस्थित हो जाता है और विद्यार्थियों के लिए अधिगम सुबोध हो जाता है।

(v) इस में आगमन तथा निगमन विधियों का प्रयोग सरलता से किया जा सकता है।

(vi) पाठ–योजना की इस प्रणाली से विद्याथियों को सक्रिय रखने में बहुत सहायता मिलती है, और विद्याथियों की सक्रियता शिक्षण एवं अधिगम की उपयोगिता एवं प्रभावशीलता का द्योतक है।

- **सीमायें–**हरबर्ट प्रणाली द्वारा पाठ को नियोजित करने से शिक्षण को क्रमबद्ध तथा सक्रिय बनाने में सहायता अवश्य मिलती है, परन्तु इस की कई सीमाएं भी हैं जिन की ओर ध्यान देना अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रणाली के मुख्य दोष इस प्रकार हैं :–

(i) इस प्रणाली से नियोजित पाठ–योजना द्वारा विद्यार्थियों के ज्ञानात्मक पक्ष के विकास में जितनी सहायता मिलती है उतनी भावात्मक एवं क्रियात्म्क पक्ष के विकास में सहायता नहीं मिलती। अर्थात् यह प्रणाली गद्य पाठ (ज्ञानात्मक उद्देश्य) के नियोजन में अपेक्षाकृत अधिक सहायक है। कविता पाठ तथा लेखन–कार्य के पाठ नियोजन में सहायक सिद्ध नहीं होती।

(ii) इस प्रणाली द्वारा गद्य के भी सभी पाठों को नियोजित करना कठिन होता है। भावप्रधान गद्य, व्यंग्य–विनोदात्मक गद्य तथा नाटक के शिक्षण के लिए इस प्रणाली द्वारा पाठ योजना का निर्माण करना बहुत कठिन होता है।

(iii) सभी पाठों में सामान्यीकरण की आवश्यकता नहीं होती। इस प्रणाली का अन्धानुकरण करते हुए यदि शिक्षक आवश्यकता न होने पर भी सामान्यीकरण का प्रयास करेगा तो उस का शिक्षण अस्वताभाविक, नीरस, बोझल तथा दुर्बोध बन कर रह जायेगा। सामान्यीकरण के स्थान में क्या होना चाहिए– इस प्रणाली में इस का कोई उल्लेख नहीं।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. पाठ–योजना की उपयोगिता क्या है?

2. पाठ–योजना के गुण व दोष कौन–कौन से है?

◆ **हरबर्ट उपागम की पाठ योजना का नमूना–**उपर्युक्त सीमाओं के होते हुए भी इस बात की उपयोगितायें प्रबल हैं। आवश्यकता इस बात की है कि पाठ की प्रकृति को देखते हुए इस के सोपानों में कुछ परिवर्तन किये जायें। आजकल शिक्षा कॉलेजों में हरबर्ट–उपागम के सोपानों को कुछ परिवर्तन कर के प्रयोग मे लाया जा रहा है। इस का परिष्कृत प्रारूप इस प्रकार है–

1. कक्षा.. दिनांक...

कालांश.. अवधि..

2. विषय ....(गद्य / पद्य / नाटक) उप विषय अथवा प्रकरण....................

3. **उद्देश्य**

(क) सामान्य उदेश्य .... हिन्दी शिक्षण के सम्बन्ध में व्यापक उदेश्य

(ख) विशिष्ट उदेश्य .... (पाठ विशेष के सन्दर्भ में) ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं कौशलात्मक उदेश्य

4. **सहायक सामग्री–** उन सब श्रव्य–दश्श्य सहायक साधनों – श्यामपट, चित्र, मानचित्र, चार्ट, मॉडल आदि का उल्लेख करना चाहिए जिन का शिक्षण के दौरान प्रयोग किया जाना है।

5. **पूर्वज्ञान–** यहां यह बताना चाहिए कि विद्यार्थी प्रस्तुत पाठ के सम्बन्ध मे पहले क्या जानते है

6. **पूर्वज्ञान परीक्षण अथवा प्रस्तावना –** यहां विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान का परीक्षण करना होता है और उसे नवीन पाठ के साथ सम्बन्धित करना होता है। अध्यापक को यह बात स्पष्ट करनी चाहिए कि वह किन विधियों तथा युक्तियों से पूर्वज्ञान का परीक्षण करेगा और किस प्रकार पूर्वज्ञान का सम्बन्ध नवीन ज्ञान के साथ स्थापित करेगा। पूर्वज्ञान का परीक्षण संक्षिप्त होना चाहिए और उसे यथाशीघ्र प्रस्तावना में परिणत कर देना चाहिए। यदि पाठ में किसी ऐतिहासिक अथवा पौराणिक कथा का उल्लेख हो तो उसके स्पष्ट विवरण को प्रस्तावना के रूप में प्रर्युक्त किया जा सकता है। प्रस्तावना का उदेश्य विद्यार्थियों को पाठ के प्रति आकर्षित एवं प्रेरित करना होता है।

7. **उद्देश्य–कथन–**प्रस्तावना द्वारा विद्यार्थियों में नवीन ज्ञान के प्रति जिज्ञासा तथा उत्सुकता उद्दीप्त करने के पश्चात् अध्यापक उद्देश्य कथन करता है– "आज हम .... पाठ पढ़ेगे"और विद्यार्थियों को पाठ–पुस्तक खोलने को कहता है।

8. **प्रस्तुतीकरण–**इस सोपान पर विद्यार्थियों के सम्मुख पाठ्य–सामग्री विधिवत प्रस्तुत की जाती है। इस में अध्यापक को पाठ प्रस्तुत करने के प्रत्येक क्रम, उस में प्रयुक्त होने वाली विधियो, साधनों, युक्तियों आदि का स्पष्ट उल्लेख करना चाहिए। केवल अपनी क्रियाओं का ही नहीं बल्कि विद्यार्थियो की क्रियाओं का ही नहीं बल्कि विद्यार्थियों की क्रियाओं का भी उल्लेख करना चाहिए। जैसे :

गद्य–पाठ के लिए

(i) अध्यापक द्वारा आदर्श वाचन (ii) विद्यार्थियों द्वारा व्यक्तिगत वाचन (iii) व्याख्या –व्याख्या की विधि ा (पअ) मौन पाठ (अ) विद्यार्थियों की बोध परीक्षा के लिए प्रश्न – आदि

(ii) कविता पाठ के लिए – (i) अध्यापक द्वारा भावानुकूल आदर्श पाठ (ii) एक /दो विद्यार्थियों द्वारा अनुकरण पाठ (iii) व्याख्या एवं भाव विश्लेषण – प्रयुक्त की जाने वाली विधियों का उल्लेख (iv) वाचन की पुनरावशति

(iii) व्याकरण पाठ के लिए – (i) आगमन विधि से उदाहरण प्रस्तुत करना– उदाहरणों का स्पष्ट उल्लेख (ii) उदाहरणों की समीक्षा– विद्यार्थियों से किस प्रकार समीक्षा कराई जायेगी। (iii) नियमीकरण – विद्यार्थियों से किस प्रकार नियम निकलवाये जायेंगे। (iv) निगमन प्रणाली द्वारा नियमों का प्रयोग –प्रयोग की युक्तियों का भी स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए।

पाठ की प्रकशति के अनुसार सभी विधियों, प्रश्नों, युक्तियों, अपनी क्रियाओं तथा विद्यार्थियों की क्रियाओं का स्पष्ट उल्लेख करना होता है। इस के अतिरिक्त श्याम–पट का भी आवश्यक प्रयोग करना होता है। इस सोपान को इस विधि से लिखा जा सकता है।

पाठ्य वस्तु	शिक्षण विधियों एवं अध्यापक क्रियायें	श्यामपट कार्य एवं छात्र क्रियायें
....	....	....
....	....	....
....	....	....

9. **पुनरावृति** –इस सोपान पर पाठ को दोहराया जाता हैं पुनरावृति का उद्देश्य विद्यार्थियों के नये ज्ञान को स्थायी बनाना होता है और इस बात की जांच करना होता हैं कि विद्यार्थियों को पाठ समझ में आ गया या नहीं। पुनरावृत्ति के लिए कौन से प्रश्न पूछे जायेंगे और पाठ के किन अंशों को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जायेगा। इसका भी स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए।

10. **गृहकार्य–** प्राप्त ज्ञान को स्थायी बनाने के लिए अभ्यास अत्यन्त आवश्यक है। प्रायः कक्षा में अभ्यास कार्य के लिए समय नही होता। इसलिए विद्याथियों को गृहकार्य दिया जाता है। गृहकार्य रोचक, रचनात्मक तथा इतना होना चाहिए जितना विद्यार्थी सुविधापूर्वक कर सके। अतः गृहकार्य भी सोच समझ कर देना चाहिए। गृहकार्य केवल खानापुरी के लिए नहीं होता और न ही वक्त काटने के लिए दिया जाता है। अभ्यास,

11. चिन्तन तथा रचनात्मकता की दृष्टि से इस का बहुत महत्व है। अतः गृहकार्य का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए।

9.6 आर.सी.ई.एम उपागम

आर.सी.ई.एम. अर्थात रिजनल कॉलेज ऑफ एजुकेशन, मैसूर द्वारा तैयार इस पद्धति को बहुत उपयोगी माना जाता है। यह शिक्षण संस्था द्वारा तैयार की गई है। इसे 'सात पदीय' या 'सेवन स्केल' पद्धति भी कहते है। केन्द्रीय शिक्षा माध्यमिक बोर्डो के स्कूलों में इसे बड़ी सुगमता से प्रयोग किया जाता है। यह प्रत्येक विषय के लिए तैयार की जा सकती है। इस पद्धति की पाठ योजना में अध्यापक की योग्यता परखी जाती है क्योंकि इसमें उन्हें 'समवाय' के लिए अतिरिक्त ज्ञान की आवश्यकता रहती है। भारतीय स्कूलों में यह पद्धति अपनाई जा रही है, परन्तु शिक्षण संस्थाएं इससे दूर भागती हैं क्योंकि यह श्रम साध्य कार्य है और इसका निर्माण विशेष प्रकार की विशेषज्ञता की मांग करता है।

♦ पाठ योजना के सोपान

पाठ योजना के विभिन्न सोपान होते है इनकी विस्तार सहित चर्चा इस प्रकार हैः–

(1) **प्रस्तावना**–इसे तैयारी भी कहते है। प्रस्तावना में विषय को विद्यार्थी के सामने इनकी रूचि तथा

पूर्वाजित ज्ञान के आधार पर उपस्थित करने का प्रयास किया जाता है। अध्यापक विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान की सहायता से उन्हें इस प्रश्न पूछता है जिनके उत्तर से पाठ के उद्‌देश्य स्पष्ट हो जाएं। इसके सहयोग से प्रस्तुत पाठ का सम्बन्ध स्थापित हो जाए। प्रस्तावना एक प्रकार से कक्षा का वातावरण तैयार करने को कहते है। जिसके लिए अध्यापक विभिन्न प्रकार की गतिविधियां करता है। जैसे पूर्व ज्ञान सम्बन्धित प्रश्न, कवि परिचय, कोई घटना का संक्षिप्त वर्णन आदि।

(2) **तुलना**–अध्यापक नए तथ्यों को बच्चों के पूर्व ज्ञान से संबंधित करते हुए प्रस्तुत करता है। विकासात्मक प्रश्नों की सहायता से प्रस्तुतीकरण किया जाता है। इस सोपान पर यह निश्चित हो जाता है कि वह किस विधि का प्रयोग पाठ के प्रस्तुतिकरण में करेगा। वह सहायक सामग्री का भी प्रयोग कर सकता है।

(3) **तुलना**–अध्यापक को बच्चों के अर्जित ज्ञान का पूर्व अनुमान हो जाने पर वह उन्हें नवीन ज्ञान प्रदान करता है। अध्यापक बच्चों के पूर्व ज्ञान से नवीन ज्ञान से तुलना करके उसका सम्बन्ध स्थापित करके पढ़ाता है। भाषा शिक्षण में यह सोपान उपयोगी नहीं है। गद्य के पढ़ाने में कही इसका प्रयोग हो सकता है अन्यथा नहीं।

(4) **सामान्यीकरण**–इस सोपान में छात्र दो या दो से अधिक तथ्यों में सम्मिलित तत्वों को बताने का प्रयास करता है जिससे वह कोई अधिनियम निकाल सके। यह सोपान भी भाषा शिक्षण में उपयोगी नही है। इसका प्रयोग व्याकरण शिक्षण में किया जा सकता है। सभी पाठों में सामान्यीकरण की आवश्यकता नहीं होती।

(5) **प्रयोग**–इस सोपान में अर्जित ज्ञान के व्यवहारिक उपयोग पर बल दिया जाता है। प्राप्त ज्ञान तभी सार्थक समझा जा सकता है अगर उसे वास्तविक परिस्थितियों में प्रयोग किया जाए। इस सोपान पर विद्यार्थियों को अभ्यास करवाया जाता है कि वे सीखे हुए ज्ञान का प्रयोग कर सकें। ऐसा करने से ज्ञान स्थाई होता है।

उपर्युक्त विवेचन से हम पाते है कि पाठ–योजना के विभिन्न सोपानों को ध्यान में रखकर ही प्रभावशाली शिक्षण किया जा सकता है।

♦ आर.सी.ई.एम. उपागम के तत्व

1. **संशोधित रूप**– यह उपागम पूर्व प्रतिपादित उपागमों का संशोधित रूप है। इसमें शिक्षण उद्‌देश्यों के वर्गीकरण की ओर भी ध्यान दिया गया है। इस विधि के अनुसार उद्‌देश्यो को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिए 17 मानसिक योग्यताओं को सम्मिलित किया जाता है। ये 17 मानसिक योग्यताएं इस प्रकार हैं–

ब्लूम को उद्देश्यों का वर्गीकरण	आर.सी.ई.एम. के उद्देश्यों का वर्गीकरण	मानसिक क्रियाएं या योग्यताएं
1. ज्ञान	1. ज्ञान	1. प्रत्यास्मरण
		2. पहचान
2. बोध	2. समझ	1. संबंध देखना
		2. उदाहरण देना
		3. भेद करना
		4. वर्गीकरण करना
		5. व्याख्या करना
		6. जांच करना
		7. सामान्यीकरण
3. प्रयोग	3. प्रयोग	1. तर्क देना
		2. अनुमान लगाना
		3. अनुमान स्थापित करना
		4. परिणाम निकालना
		5. पूर्व कथन
4. विश्लेषण	4. रचनात्मक	1. विश्लेषण करना
5. संश्लेषण		2. संश्लेषण करना
6. मूल्यांकन		3. मूल्यांकन करना

इस विधि में विद्यार्थी के पूर्व–व्यवहार को ध्यान में रखते हुए विषय वस्तु की रचना तथा उद्देश्यों की पहचान की जाती है। पहले एक उचित मानसिक प्रक्रिया चुनी जाती है और फिर उसके साथ विषय वस्तु को संबोधित करके उद्देश्यो को व्यावहारिक नाम दिया जाता है। इस प्रयोजन के लिए निम्नलिखित सात रूप चुने जा सकते है।

1. **ज्ञान उद्देश्य –(i) पहचान** –विद्यार्थी शब्दों, परिभाषाओं, प्रक्रियाओं तथा नियमों आदि की पहचान कर सकता है। **(ii) प्रत्यास्मरण** –छात्र में शब्दों, परिभाषाओं, प्रक्रियाओं तथा नियमों आदि का प्रत्यास्मरण करने की योग्यता।

2. **समझ उद्देश्य**

   (i) **संबंध देखना–** छात्र में संबंध देखने की योग्यता है।

   (ii) **उदाहरण देना–** छात्र में उदाहरण देने की क्षमता है।

   (iii) **भेद करना–** छात्र में भेद करने की क्षमता है।

   (iv) **वर्गीकरण करना–** छात्र में वर्गीकरण करने की क्षमता है।

   (v) **अर्थ निकालना–**छात्र में अर्थ या व्याख्या करने की योग्यता है।

   (vi) **जाँच करना –** छात्र में जाँच करने की क्षमता है।

   (vii) **सामान्यीकरण –** छात्र में सामान्यीकरण की योग्यता है।

3. **प्रयोग उद्देश्य**

   (i) **तर्क देना –** छात्र में तर्क देने की योग्यता है।

   (ii) **प्राक कल्पना का प्रतिपादन–** छात्र में प्राक्कल्पना का प्रतिपादन करने की योग्यता है।

   (iii) **निष्कर्ष निकालना** –छात्र में निष्कर्ष निकालने की योग्यता है।

   (iv) **पूर्व कथन–** छात्र में निष्कर्ष निकालने की योग्यता है।

4. **रचनात्मकता का उद्देश्य**

   (i) **विश्लेषण –** छात्र में विश्लेषण कर सकने की योग्यता है।

   (ii) **संश्लेषण–** छात्र में संश्लेषण कर सकने की योग्यता है।

   (iii) **मूल्यांकन–** छात्र में मूल्यांकन कर सकने की योग्यता है।

स्कूल में पढ़ाए जाने वाले सभी विषयों, उद्देश्यों को उपर्युक्त 17 कथनों की सहायता से लिखा जा सकता है। उद्देश्यों की पहचान के बाद विषय वस्तु को रिक्त स्थान में भर कर उद्देश्यों के व्यवहारिक रूप प्राप्त किया जा सकता है।

अनुदेशानात्मक उद्देश्य	उद्देश्यों को व्यावहारिक शब्दों में लिखना
ज्ञान	छात्र दिए गए वाक्यों में संबा के विभिन्न प्रकारों को पहचानने की योग्यता है।
समझ	छात्रों में संबा के विभिन्न प्रकारों के उदाहरणों के लिखने की योग्यता है।
प्रयोग	संज्ञाओं की भूमिका का तर्क संगत महत्व बताने की योग्यता है।
रचनात्मकता	विद्यार्थी में संबा के अर्थ एवं परिभाषा को समझने के लिए संबा के विभिन्न प्रकारों का संश्लेषण करने के योग्यता है।

◆ **प्रणाली उपागम का प्रयोग–** इस उपागम में प्रणाली उपागम की अवधारणा का प्रयोग किया जाता है।

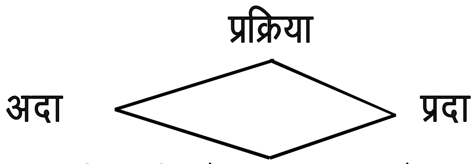

चित्रः विश्लेषण एवं पृष्ठ पोषण

शिक्षा की जटिल समस्याओं के उपचार तथा शैक्षिक अभिक्रमों के निर्माण की अपूर्व क्षमता रखता है। प्रणाली एक ऐसी आत्म नियमित, आत्म– परिक्षित एवं आत्म प्रशासित पूर्ण इकाई है जिसमें अन्तः निर्भर एवं अन्त संबंधित तत्वों का विधिवत् गठन होता है और जो पूर्व निर्धारित विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति मे अधिकतम मितव्ययिता, कार्य कुशलता एंव उत्पादनशीलता से अपनी भूमिका निभाते हैं। यह विचारों, सिद्धातों, नियमों की विधिवत व्यवस्था है। यह उपागम पहले विद्यार्थी और उससे अपेक्षित निष्पतियों पर विचार करती है। इसके पश्चात् यह कोर्स की विषय वस्तु अधिगम अनुभवों, प्रभावशाली ज्ञान, माध्यमों तथा अनुदेशन नीतियों का निर्णय करती है। इसका अनुदेशन के सभी तत्वों के साथ संबंध है। तीन सोपान – इस उपागम में तीन सोपान या चरण होते है। पाठ योजना की संरचना अदा, प्रक्रिया तथा प्रदा की सहायता से विकसित की जाती है। ये प्रस्तावना, प्रस्तुतीकरण एवं मूल्यांकन जैसे हैं।

1. **अदा–**इस सोपान में उद्देश्यों की पहचान तथा उनका विशिष्टीकरण शामिल है। इन्हें अपेक्षित व्यावहारिक परिणाम भी कहा जाता है। ये उद्देश्य व्यापक रूप में वर्गीकृत किए जाते हैं।

(i) ज्ञान

(ii) बोध

(iii) प्रयोग

(iv) रचनात्मकता

इसमें 17 मानसिक योग्यताओं का प्रयोग किया जाता है। छात्रों के पूर्व व्यवहार अथवा पूर्व ज्ञान की भी पहचान की जाती है। इन उद्देश्यों की सहायता से अनुदेशनात्मक प्रक्रिया का क्रम निर्धारित किया जाता है।

2. **प्रक्रिया** –प्रक्रिया हरबशियिन उपागम के प्रस्तुतीकरण अथवा ब्लूम उपागम के अधिगम अनुभव के सोपान से मेल खाती है। इसमें विषय–वस्तु के प्रभावशाली प्रस्तुतीकरण के लिए सम्प्रेषण नीति का प्रयोग किया जाता है। इसमें अध्यापक और छात्रों की अन्तक्रिया निहित होती है। प्रक्रिया का मुख्य कार्य छात्रों को उचित अधिगम अनुभव प्रदान करने के लिए अधिगम स्थितियों का निर्माण करना होता है। इसमें अध्यापक और छात्रों की क्रियाएं, शिक्षण नीतियां एवं युक्तियां, श्रव्य–दश्श्य साधन, अभिप्रेरणा की प्रविधियां उचित कक्षीय अन्तक्रिया प्राप्त करने के उपाय आदि सम्मिलित है। इन्ही की सहायता से विषय वस्तु प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत की जाती है और निर्धारित उद्देश्य प्राप्त किए जाते है।

3. **प्रदा** – प्रदा में वास्तविक अधिगम परिणाम शामिल है। व्यवहार के परिवर्तन ही वास्तविक अधिगम परिणाम कहा जाता है। वास्तविक अधिगम परिणाम मूल्यांकन के लिए विभिन्न मापन प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। अतः प्रायः मौखिक एवं लिखित प्रश्नों द्वारा वास्तविक परिणामों का मापन करते पाठ के मूल्यांकन का सोपान है।

◆ **गुण**

(i) सरल– उद्देश्यों को व्यावहारिक शब्दों में लिखना सरल व उपयोगी।

(ii) सभी प्रकार के उद्देश्यों के लिए व्यावहारिक इस विधि का तीनों के उद्देश्यों ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

(iii) सभी विषयों के लिए व्यावहारिक इस उपागम द्वारा सभी विषयों को प्राप्त किया जा सकता है।

(iv) अधिगम प्रक्रिया पर बल इसमें अधिगम प्रक्रिया पर अधिक बल दिया गया है।

(v) सन्देह व भ्रम नहीं– इस उपागम के सभी चरण स्पष्ट व सरल हैं जिससे भी सन्देह व भ्रम नहीं होता है।

(vi) भारतीय सन्दर्भ यह उपागम भारतीय सन्दर्भ को ध्यान में रखकर बल दिया गया है।

◆ **दोष**

(i) सन्तुलन का अभाव

(ii) भ्रामक मान्यता

(iii) केवल ज्ञानात्मक उद्देश्यों के लिए अधिक उपयोगी

(iv) मानसिक प्रक्रिया के चयन मे कठिनाई।

(v) कई उद्देश्यों एवं विषय क्षेत्रों के लिए उपयोगी नहीं।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. आर. सी. ई. एम. उपागम क्या है।
2. आर. सी. ई. एम. के गुण व दोष क्या है
3. आर. सी. ई. एम. के तत्त्व कौन–कौन से है।

9.7 निष्कर्ष :

इस प्रकार अध्यापक दोनों उपागमों की उपयोगिताओं को सम्मुख रखकर पाठ की प्रकशति के अनुरूप पाठ–योजना का निर्माण कर के अपने शिक्षण को उपयोगी, प्रभावशाली, विद्यार्थी–केन्द्रित, व्यवस्थित तथा लक्ष्योन्मुख बना सकता है। किसी भी उपागम का अन्धनुकरण नहीं करना चाहिए। पाठ–योजना केवल साधन है, साध्य नहीं। उपर्युक्त उपागम या उनका समन्वित रूप केवल निर्देश प्रस्तुत करते हैं, उन्हें आदेश रूप में स्वीकार नहीं करना चाहिए। पाठ–योजना के सभी सोपान अत्यावश्यक हैं इसलिए उनका जैसे तैसे प्रयोग अवश्य करना चाहिए– यह सोच कर शिक्षण कार्य करने वाला अध्यापक अपने शिक्षण को कभी सफल नही बना सकता। आवश्यकता इस बात की है कि पाठ– योजना के सभी सोपान अत्यावश्यक है इसलिए उनकों जैसे तैसे प्रयोग अवश्य करना चाहिए– यह सोच कर शिक्षण कार्य करने वाला अध्यापक अपने शिक्षण को कभी सफल नहीं बना सकता। आवश्यकता इस बात की है कि पाठ योजना गतिशील हो, शिक्षण को रोचक एवं प्रभावशाली बनाने में सहायक हो, लक्ष्योन्मुख हो और विद्यार्थियों को सक्रिय रखने में सहायक हो। अध्यापक को शिक्षण प्रक्रिया में स्वयं क्या करना है और विद्यार्थियों से क्या करवाना है– इस का स्पष्ट उल्लेख पाठ योजना में अवश्य होना चाहिए परन्तु शिक्षण के दौरान यदि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाये कि उनमे परिवर्तन करना पडे तो इस में संकोच नहीं करना चाहिए। याद रहे कि शिक्षण रूढ़िवादी क्रिया नहीं बलिक प्रगतिशील क्रिया है। अतः इस के लिए बनाई गई पाठ–योजना में भी परिवर्तन की गुंजायश होनी चाहिए। अध्यापक को अपने विवके एवं कल्पना शक्ति से पाठ की प्रकशति तथा विद्यार्थियों की मानसिक एवं बौद्विक स्तर के अनुरूप शिक्षण लक्ष्य निर्धारित कर के ऐसी पाठ–योजना का निर्माण करना चाहिए जिसे सुगमतापूर्वक कार्यान्वित किया जा सके।

9.8 आत्मजांच और परिक्षण

- पाठ योजना के विभिन्न उपागम कौन कौन से है ? पाठ योजना के हरबर्ट उपागम के गुण दोष व

उसके चरणों पर प्रकाश डालिए।

- पाठ योजना के मूल्यांकन उपागम व आर. सी. ई. उम उपागम का तुलनात्मक विवेचन कीजिए।
- हिन्दी शिक्षण में पाठ योजना का प्रारूप तैयार कीजिए।
- आप पाठ योजना निर्माण मे हरबर्ट उपागम और ब्लूम उपागम दोनों को किस प्रकार से अपना सकते है। विस्तार से लिजिए।

9.9 सहायक ग्रन्थ सूची :

1. वरवाल, जसपाल सिंह (2005) हिन्दी भाषा शिक्षण, गुरूसर बुक डिपो, सुधार (लुधियाना)
2. खन्ना, ज्योति (2000), हिन्दी शिक्षण, धनपत राय एण्ड कम्पनी दिल्ली।
3. भाई योगिन्दरजीत (1984), हिन्दी भाषा शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
4. भाटिया एम. एम. (1999), हिन्दी शिक्षण विधियां टण्डन पब्लिकेशन्ज, लुधियाना।
5. पाण्डे रामशकल (1968), हिन्दी शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
6. शर्मा, बी. एन. (1968) हिन्दी शिक्षण, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।
7. सफाया, रघुनाथ (1986–97), हिन्दी शिक्षण विधि, दिल्ली पुस्तक सदन, पटना।
8. सूद विजय (1997), हिन्दी शिक्षण विधियां, टण्डन पब्लिकेशन्ज, लुधियाना।

....

UNIT - 4(इकाई – 4) **पाठ/ LESSON : 10**

मूल्यांकन

सरंचना

10.1 भूमिका

10.2 उद्देश्य

10.3 मूल्यांकन का अर्थ एवं परिभाषा

10.4. मूल्यांकन के प्रकार

10.5 मूल्यांकन का महत्त्व

10.6 मूल्यांकन प्रविधियां – अर्थ

10.7 भेद

10.8 महत्व और उपयोग

10.9 निष्कर्ष

10.10 आत्मजांत और परीक्षण

10.11 सहायक ग्रन्ध सूची

10.1 भूमिका

शिक्षण मूल्यांकन शिक्षण अधिगम व्यवस्था का अन्तिम सोपान है। शिक्षण मूल्यांकन का कार्य शिक्षक ही करता है। इस सोपान में शिक्षक यह निश्चित करता है कि इसके द्वारा की गई शिक्षण व्यवस्था तथा शिक्षण को आगे बढ़ाने की क्रियायें कितनी सफल रही है। यह सफलता शिक्षण उदेश्यों की प्राप्ति में पृष्ठ–पोषण का कार्य करती है। ग्लेसर ने अपने शिक्षण प्रतिमान में इस सोपान का प्रमुख कार्य पृष्ठपोषण ही माना है। यदि

उदेश्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकी है तब अपनी शिक्षण परिस्थितियों का मूल्यांकन करके उनमें सुधार तथा परिवर्तन करता है। इस अध्याय में मापन एवं मूल्यांकन प्रत्ययों को समझाया गया है।

मूल्यांकन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा अधिगम–परिस्थितियों तथा सीखने के अनुभवों के लिये प्रयुक्त की जाने वाली सभी विधियों एवं प्रविधियों की उपादेयता की जांच की जाती है। मूल्यांकन प्रक्रिया का सम्बन्ध शिक्षण के मापन और अधिगम के उद्देश्यों की प्राप्ति से होता है। परम्परागत प्रणाली में पाठ्यवस्तु तथा छात्रों की निष्पतियों को ही महत्व दिया जाता है। छात्रों की सफलता तथा असफलता का उत्तदायित्व शिक्षक का न होकर उन्हीं का माना जाता है। इसलिये शिक्षण की प्रक्रिया में अधिक विकास एवं परिवर्तन नहीं हो सका है। मूल्यांकन प्रक्रिया अधिगम–उद्देश्यों की प्राप्ति के आधार पर अपने शिक्षण–विधियों, प्रविधियों तथा सहायक सामग्री की उपादेयता का मूल्यांकन करती है, क्योंकि छात्रों की सफलता और असफलता के लिये अधिगम परिस्थितियां ही वास्तव में उत्तरदायी होती है, परन्तु अभी इस प्रक्रिया का उपयोग शिक्षा में पूरी तरह नहीं हो पा रहा है क्योंकि मूल्यांकन के लिये शिक्षा एवं प्रशिक्षण के उद्देश्य स्पष्ट नहीं है तथा शैक्षिक मापन अकसर कठिन होता है।

शिक्षा प्रक्रिया तथा मूल्यांकन आयाम दोनों एक–दूसरे से घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित हैं। बिना मूल्यांकन के शिक्षा प्रक्रिया की प्रभावशीलता एवं उपादेयता का पता चलना कठिन है। शिक्षण की समस्त क्रियाओं का मूल्यांकन किया जाता है। छात्रों की उपलब्धियों के आधार पर सीखने के अनुभवों के समस्त साधनों के सम्बन्ध ा में निर्णय लिया जाता है। इस आयाम के अन्तर्गत मानदण्ड परीक्षा का उपयोग किया जाता है। शिक्षण की सभी क्रियाओं को उद्देश्य–केन्द्रित बनाने का प्रयास किया जाता है। इस में वार्षिक योजना तथा इकाई योजना के विवेचन के साथ उसी पश्ष्ठभूमि का भी उल्लेख किया गया है। छात्र इस भूमिका के आधर पर वार्षिक तथा इकाई योजना को बोधगम्य कर सकेंगे।

मूल्यांकन की प्रक्रिया में ''शिक्षण तथा परीक्षण'' साथ–साथ सम्पादन किया जाता है। इसलिये मूल्यांकन का प्रयोग अधिक व्यापक रूप में किया जाता है। इसमें मापन छात्रों की निष्पत्तियों तक ही सीमित नहीं होता है, अपितु शिक्षण की सम्पूर्ण प्रक्रिया का 'मूल्यांकन' किया जाता है। 'परीक्षा' केवल बालकों के निष्पत्तियों के मापन तक सीमित है। 'मापन' वह प्रक्रिया है, जिसमें मानवी गुणों को मात्रा में मापन कर लिया जाता है। 'मूल्यांकन' में बालक के सम्पूर्ण व्यवहार–परिवर्तन और शिक्षण की प्रक्रिया के उपकरणों एवं विधियों का मापन किया जाता है। विद्यालय में बालक शिक्षा ग्रहण करने के लिये आता है। वह विशेष प्रकार के अनुभव अपने विद्यालय के जीवन में प्राप्त करता है। इन अनुभवों से उसके ज्ञान में वश्द्धि, सोचने का ढंग बदलता है, उसकी कार्य शैली में परिवर्तन होता है तथा उसकी संवेदनशीलता एवं अभिवश्त्ति विकसित होती है। बालक इस सम्पूर्ण विकास को 'व्यवहार–परिवर्तन' कहते हैं। इस 'व्यवहार –परिवर्तन' में बालक के ज्ञानात्मक, क्रियात्मक तथा भावात्मक पक्ष सम्मिलित हैं। शिक्षा प्रणाली की सफलता व्यवहार–परिवर्तन से ही ज्ञात की जाती है।

10.2 उद्‌देश्य

इस पाठ को ध्यानपूर्वक पढ़ने के बाद आप–

- मूल्यांकन का अर्थ स्पष्ट कर पाएंगें।
- मूल्यांकन का महत्व बता पाएंगें ।
- मूल्यांकन के प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे ।

10.3 मूल्यांकन का अर्थ एवं परिभाषा

परीक्षा का उद्देश्य पूर्णरूप से समझने के लिए एक और शब्द का प्रयोग किया जाता है, जिसे मूल्यांकन कहते हैं। यह शब्द अधिक व्यापक अर्थ देता है और बालक की समस्त प्रगति की जाँच करने के प्रयोग में आता है। साथ ही साथ यह शिक्षण पर भी अपना प्रभाव डालता है और इसलिए इस पूरी प्रणाली को मूल्यांकन शिक्षण प्रणाली कहते हैं। इसका उद्देश्य परीक्षा में सुधर करने के साथ–साथ शिक्षण विधियों में भी सुधार करता है। इसका आधार यह है कि जितना पढ़ाया गया है उस सबकी जाँच हो और जिसकी जाँच की जाती है वह सब पढ़ाया गया हो। बालकों के सीखने के अनुभव बहुत महत्त्व रखते हैं और यदि उनको उचित अनुभव प्रदान नहीं किये गये तो परीक्षा किसकी होगी ?

दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि परीक्षा लेने से पहले हमें ये स्पष्ट हो जाना चाहिए कि किस–किस की परीक्षा लेनी है, कितना ज्ञान किस रूप में बालकों को दिया जा चुका है, जिसकी जांच करती है, बालकों में कौन से परिवर्तन हो गये हैं जो उनकी प्रगति के सूचक हैं और हमें परीक्षा के द्वारा यह देखना है कि उनमें ये परिवर्तन हुए भी हैं या नहीं। अगर हो गये हैं तो ठीक है, अगर नहीं हो गये हैं तो क्यों नहीं हुए हैं, इस बात की जानकारी करना आवश्यक है।

यहां पर एक शब्दावली को स्पष्ट करना आवश्यक है। शिक्षा का कार्य व्यापक रूप में बालकों में कुछ परिवर्तन लाना है। ये परिवर्तन उनके व्यवहार में तथा उनके आचरण में होंगे। यह स्तर शारीरिक, मानसिक अथवा आत्मिक हो सकता है। व्यवहार–परिवर्तन बिना किसी शिक्षा के नहीं होता। शिक्षा द्वारा बालकों को अनुभव प्राप्त होते हैं और उन अनुभवों के आधार पर वह अपने व्यवहार को बदलता, सुधरता, परिवर्तित व संशोधित करता जाता है। यही नहीं, वह अपने ज्ञान में वृद्धि करता जाता है और अपनी मानसिक शक्तियों का प्रयोग करना, अपना व्यवहार उनसे निर्दिष्ट करता है। ये व्यवहार–परिवर्तन इस बात के सूचक हैं कि अमुक व्यक्ति ने कितनी शिक्षा पाई है।

चूँकि व्यवहार–परिवर्तन सीखने के अनुभवों के आधार पर होते हैं, अतः सीखने के अनुभव प्रमुख हैं। बालकों को ऐसे अनुभव दिये जायें कि उनमें वांछनीय व्यवहार–परिवर्तन हों और वे शिक्षा द्वारा निर्धारित उद्देश्यों

की पूर्ति कर सकें।

सीखने के अनुभव उद्देश्यों के ऊपर निर्भर हैं। जब हम बालकों को सीखने के अनुभव देते हैं तो हमें कुछ उद्देश्यों के आधर पर उन अनुभवों को निश्चित करना होता है। इस प्रकार मूल्यांकन शिक्षण प्रणाली एक पूरी शिक्षण प्रणाली का केन्द्र–बिन्दु बन जाती है। आगे दिये हुए त्रिभुज से यह बात व सम्बन्ध स्पष्ट हो जाते हैं।

मूल्यांकन हमें बालकों की प्रगति की जाँच ही नहीं कराता बल्कि इसका संकेत भी देता है कि बालकों को पर्याप्त अनुभव दिये गये हैं अथवा नहीं। साथ ही साथ हमें यह भी स्पष्ट होता है कि हमारे उद्देश्य ठीक हैं अथवा नहीं। उद्देश्य, सीखने के अनुभव व मूल्यांकन तीनों का समन्वय व मिलान ही, मूल्यांकन शिक्षण प्रणाली का सार है। यह प्रणाली शिक्षण का केन्द्र–बिन्दु है और मूल्यांकन शिक्षण का अभिन्न अंग है।

मूल्यांकन आयाम में शिक्षण के उद्देश्यों, सीखने के अनुभवों तथा व्यवहार–परिवर्तनों में घनिष्ठ सम्बन्ध ा स्थापित किया जाता है। शिक्षण एवं परीक्षण क्रियायें साथ–साथ सम्पादित होती है और इनका लक्ष्य उद्देश्य–केन्द्रित होना चाहिये। मूल्यांकन में छात्र की सफलताओं अथवा व्यवहार–परिवर्तन का सही अनुमान लगाया जाता है। उनकी असफलताओं के कारणों का गम्भीरतापूर्वक निदान किया जाता है। इसके लिये शिक्षण की सभी प्रक्रियाओं की पर्याप्तता का निदान होना आवश्यक है, क्योंकि छात्रों की असफलताओं के लिये उन्हें उत्तरदायी माना जाता है परन्तु शिक्षा की सम्पूर्ण प्रक्रियायें उनकी असफलताओं के लिये समान रूप से उत्तरदायी है। अतः मूल्यांकन के अन्तर्गत शिक्षण की सम्पूर्ण प्रक्रियाओं के लिये सम्पूर्ण प्रक्रियाओं के महत्व को बालक के व्यवहार–परिवर्तन को उद्देश्यों की दशष्टि से आकलन किया जाता है।

विद्यालय में पढ़ाये जाने वाले सभी विषय बालक के विकास एवं वशद्धि में योगदान करते हैं क्योंकि शिक्षण की प्रक्रिया में 'सीखने के अनुभव' विद्यालय के विषयों द्वारा ही प्रदान किये जाते हैं। यहां संक्षेप में यह उल्लेख किया है कि हिन्दी शिक्षण में मूल्यांकन–विधि का प्रयोग किस प्रकार किया जा सकता है। मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा निम्नाकित बातों के बारे में निश्चय किया जाता है–

(1) शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हुई है?

(2) सीखने के अनुभव कितने प्रभावशाली हैं?

(3) बालकों के व्यवहार–परिवर्तनों के स्तर का मापन किया जाता है।

शिक्षा की प्रक्रिया को बी.एस. ब्लूम ने त्रि–पदी प्रक्रिया से प्रदर्शित किया है–

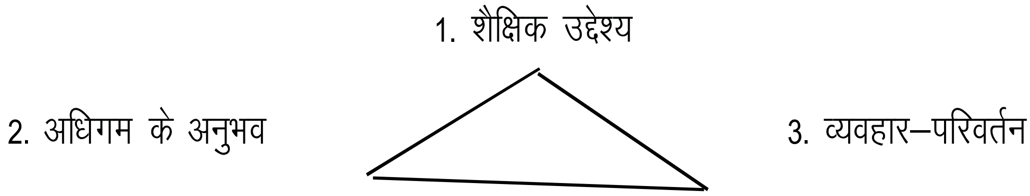

चित्रः शिक्षण की त्रिपदी प्रक्रिया

मूल्यांकन की विशेषताएं

दोषपूर्ण परीक्षा समस्त मूल्यांकन परिणामों को महत्त्वहीन बना देती है। इसीलिए अच्छी परीक्षा के गुणों से अवगत होना आवश्यक है। एक अच्छी परीक्षा में निम्नलिखित विशेषताएं होती हैं–

1) **विश्वसनीयता –** एक अच्छी परीक्षा विश्वसनीय होती है। इसका तात्पर्य यह है कि परीक्षा द्वारा होने वाला मापन प्रायः अविचल होता है। विश्वसनीयता का अर्थ है– अचलता। यदि परीक्षा विश्वसनीय है तो उसमें बालकों द्वारा प्राप्त किए जाने वाले अंक प्रायः एक– से रहेंगे। हो सकता है कि परिपक्वता एवं अभ्यास आदि तत्त्वों के कारण उन अंकों में थोडा अन्तर हो जाए, परन्तु यह विचलन नगण्य होगा।

2) **वैधता –** वैधता का अभिप्राय है – 'अभिप्राय–सापेक्षता' अर्थात् जब परीक्षा द्वारा अभीष्ट लक्ष्य का मापन होता है, तभी उसे वैध कहा जा सकता है उदाहरणस्वरूप, भाषा की 'निष्पत्ति परीक्षा' तभी वैध मानी जाएगी, जब उसके द्वारा होने वाला मापन भाषा की निष्पत्ति का प्रतीक हो, न कि इतिहास सम्बन्धी योग्यता का।

3) **वस्तुनिष्ठता –** एक अच्छी परीक्षा वस्तुनिष्ठ होती है। वस्तुनिष्ठता में व्यक्तिनिष्ठ तत्वों का लोप होता है। वस्तुनिष्ठ परीक्षा उसे कहते हैं, जिसमें परीक्षा लेने वाले के व्यक्तित्व, उसकी रूचियों तथा पक्षपातों के लिए कोई स्थान न हो। उसमें छात्र–छात्राओं का मूल्यांकन निष्पक्ष भाव से होता है।

4) **व्यापकता –** व्यापकता से तात्पर्य है कि– मापित होने वाली 'चल–राशि' में अधिक से अधिक तत्त्वों को सम्मिलित करना उदाहरण्स्वरूप, यदि भाषा की निष्पत्ति परीक्षा द्वारा व्यापक रूप से पाठ्य–वस्तु से अधिक से अधिक पहलुओं का मापन हो जाता है तो उसे अच्छी परीक्षा की श्रेणी में गिना जायगा।

5) **विभेदीकरण –** एक अच्छी परीक्षा की पाँचवी विशेषता है, उसका विभेदकारी होना। ऐसी परीक्षा के द्वारा उच्च और निम्न योग्यता वाले छात्र–छात्राओं में विभेद हो जाता है। परीक्षा विभेदकारी उसी सूरत में होती है, जबकि उसके सभी प्रश्न विभेदकारी हों। यदि किसी परीक्षा में ऊँची योग्यता वाले छात्र–छात्राएं बुरा करते हैं और कम योग्यता वाले अच्छा, तो ऐसी परीक्षा को 'नकारात्मक विभेदकारी' कहेंगे। इस प्रकार की परीक्षा त्याज्य है।

6) **उपयोगिता तथा व्यवहारशीलता** – इसका अर्थ यह है कि अच्छी परीक्षा एक तो उपयोगी होती है और दूसरे सरलतापूर्वक व्यवहार में लायी जा सकती है। **मूल्यांकन की परिभाषा इस प्रकार से दी गई है–**

- **क्लार एवं स्टार का विचार** – ''मूल्यांकन वह निर्णय या विश्लेषण है जो विद्यार्थी के कार्य से प्राप्त सूचनाओं से निकाला जाता है।''

- **सी. सी. रॉस का विचार** – ''मूल्यांकन और मापन में अन्तर है। इस का प्रायः बच्चे के पूरे व्यक्तित्व अथवा समूची शिक्षा–स्थितियों की जांच प्रक्रिया के लिए प्रयोग किया जाता है।''

- **डा0 हिल का विचार** –''पुरानी प्रणाली में परीक्षा समूचे–पाठ्यक्रम तथा शिक्षण–विधि को निर्देशित किया करती थी जबकि नई प्रणाली में परीक्षा एवं शिक्षण दोनों विशिष्ट शिक्षण–उद्देश्यों द्वारा निर्धारित किये जाएंगे। अतः इन्हीं पर समूची शिक्षा एवं मूल्यांकन आधारित होनी चाहिए।''

- **जे0 डब्ल्यू0 राईटस्टोन का विचार** – ''मूल्यांकन में व्यापक व्यक्तित्व से सम्बन्धित परिवर्तनों तथा शिक्षा–कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्यों पर बल दिया जाता है। इस में केवल विषय–वस्तु का मूल्यांकन ही सम्मिलित नहीं बल्कि प्रवशत्तियों, रूचियों, आदर्शों, चिन्तन–विधियों काम की आदतों तथा वैयक्तिक एवं सामाजिक समायोजन–योग्यताओं का मूल्यांकन भी सम्मिलित है।''

10.4 मूल्यांकन के प्रकार :

वर्तमान समय में पाठ्यक्रम में शैक्षिक एवं गैर–शैक्षिक दोनों प्रकार के विषयों का महत्व बढ़ गया है, इसी प्रकार मूल्यांकन का क्षेत्र भी विस्तृत हो गया है । पाठ्यक्रम तथा मूल्यांकन में घनिष्ठ संबंध को देखते हुए स्करीवन (Scriven) ने 1967 में रचनात्मक मूल्यांकन तथा ऑकलित मूल्यांकन या संल्पनात्मक मूल्यांकन के बारे में बताया है। इसके अतिरिक्त मौखिक और लिखित अन्य प्रकार हैं –

रचनात्मक (Formative) मूल्यांकन –

शिक्षिण प्रक्रिया मूल्यांकन को रचनात्मक मूल्यांकन कहते हैं । स्करीवन ने रचनात्मक मूल्यांकन का कार्य पाठ्यक्रम में लगातार सुधार करना है। रचनात्मक मूल्यांकन एक ऐसी प्रकिया है जो समय तथा स्थिति के अनुसार पाठ्यक्रम में परिवर्तन लाती है, दूसरे शब्दों में रचनात्मक मूल्यांकन का लक्ष्य पाठ्यक्रम में सुधार लाना है ।

रस्किन के अनुसार – ''रचनात्मक ऑकलन पूरे शिक्षण सत्र में चलने वाली प्रक्रिया है, जिससे इस तथ्य का निर्धारण किया जाता है कि किसी निश्चित कार्य को पूर्ण करने में छात्र ने कितनी प्रगति की है ।''

शिक्षण तथा अनुदेशन के प्रस्तुतीकरण के लिए पाठ्य वस्तुओं को इकाईयों में बॉटकर शिक्षण का कार्य

किया जाता है । प्रत्येक इकाई के शिक्षण उपरांत परीक्षण किया जाता है । छात्रों के द्वारा अपेक्षित उद्देश्यों की प्राप्ति न होने पर निदान किया जाये और पुनः सुधारात्मक शिक्षण किया जाए और उसके बाद इकाई परीक्षण किया जाये । रचनात्मक मूल्यांकन के अधिगम, शिक्षण को प्रभावपर्णू बनाकर उद्देश्यों की प्राप्ति को महत्व दिया जाता है ।

परिभाषा –

गिलबर्ग सैक्स के अनुसार (1989) – ''निर्माधात्मक मूल्यांकन या रचनात्मक मूल्यांकन वह पद्धति है, जिसके माध्यम से शिक्षण के उद्देश्य किस हद तक प्राप्त हो रहें हैं तथा उनके प्राप्त करने में दृष्टिगत कमियों का निवारण कैसे किया जाए, इन तथ्यों पर प्रकाश डालता है ।''

रचनात्मक मूल्यांकन की विशेषताऐं –

1. रचनात्मक मूल्यांकन शिक्षण प्रक्रिया से संबंधित होता है ।
2. रचनात्मक मूल्यांकन शैक्षिक कार्यक्रम तथा नीति निर्धारण उद्देश्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
3. इसके द्वारा शिक्षण प्रक्रिया में परिवर्तन एवं सुधार किया जाता है ।
4. जब कार्यक्रम पूर्व से निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सक्षम नहीं होता है, तब रचनात्मक, मूल्यांकन, शैक्षिक कार्यक्रमों की निर्माण प्रक्रिया में पृष्ठ पोषण प्रदान करता है ।
5. रचनात्मक मूल्यांकन की प्रक्रिया में शिक्षण की प्रक्रिया शामिल है ।
6. सेनेट्री ने रचनात्मक मूल्यांकन को सूक्ष्म (Micro) मूल्यांकन कहां है ।

संकलित

एडम्स के अनुसार समकलित मूल्यांकन सत्र के अन्त में प्रदत्त किया गया, ऐसा ऑकलन होता है, जिसमें छात्र के किसी विशेष विषय पर जानकारी एवं ज्ञान का ऑकलपन किया जाता है । समकलित मूल्यांकन इस तथ्य को बताता है कि छात्र ने वर्षभर जो क्रियाकलाप या ज्ञान प्राप्त किया है, उस निश्चित विषय में उसको कितना ज्ञानार्जन हुआ है और उसकी प्रगति क्या है ।

समकलित मूल्यांकन का संबंध पाठ्यक्रम के परिणाम का मूल्यांकन करना है । पाठ्यक्रम का निर्माण विशेष उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया जाता है । शिक्षा के द्वारा छात्रों का सर्वोगीण विकास है । समकलित मूल्यांकन का उद्देश्य पाठ्यक्रम में सुधार के फलस्वरूप छात्र के मूल्यांकन से उसमें सुधार लाना है ।

पाठ्यवस्तु की समस्य इकाईयों का शिक्षण के उपरांत ऑकलित मूल्यांकन किया जाता है, इससे छात्रों की सफलता के आधार पर शिक्षण व अनुदेशन की प्रभावशीलता का मूल्यांकन होता है । जिससे शिक्षक

तथा अनुदेशन को पुनबर्लन मिलता है और शिक्षक को अपने आगे के शिक्षण की योजना तथा व्यवस्था करने में सहायता मिलती है ।

परिभाषा – समकलित :

एन.ईत्र ग्रनलन (1985) के अनुसार – समकलित मूल्यांकन विशेषतः किसी पाठ्यक्रम या अनुदेशन की सभी इकाई के पूरा हो जाने पर लागू होता है । इस प्रकार के मूल्यपापन की व्यवस्था यह ज्ञान करने के लिए की जाती है कि अनुदेशक शिक्षण के उद्देश्य कहां तक प्राप्त हो सके ।''

समकलित मूल्य मापन में शिक्षण विद्यार्थियों के व्यवहार में परिलक्षित परिवर्तनों को आंकने पर विशेष बल दिया गया है ।

समकलित मूल्यांकन की विशेषताएं –

1. शैक्षणिक उत्पादन संबंधी मूल्यांकन को ऑकलित मूल्यांकन कहा जाता है ।
2. आंकलित मूल्यांकन का संबंध पाठ्यक्रम के परिणाम का मूल्यांकन करना है ।
3. आंकलित मूल्यांकन सत्र के अन्त में किया जाता है ।
4. सेनेट्री के आंकलित मूल्यांकन को वृहद् (Micro) मूल्यांकन कहा है ।
5. आंकलित मूल्यांकन में शिक्षक के द्वारा किये गये स्म्पूर्ण प्रयासों के प्रभावों का अध्ययन किया जाता है ।
6. आंकलित मूल्यांकन पाठ्क्रम में सफलता की भविष्यवाणी करता है ।

मौखिक मूल्यांकन :

मौखिक मूल्यांकन का सर्वप्रथम उपयोग ग्लेडाइइस ने शुरू किया था । मौखिक परीक्षा को यूनान के महान दार्शनिक और पश्चिमी दर्शन के जनक सुकरात ने भी महत्वपूर्ण स्थान दिया था । छात्र के ज्ञान के मूल्यांकन की यह विधि मुख्यतः व्यक्तिगत होती मतलब छात्र को अकेले बुलाकर उससे प्रश्न पूंछे जाते हैं।

इसमें छात्र से मौखिक रूप से प्रश्न करके उसके ज्ञान, अभिव्यक्त की क्षमता और उसके आत्मविश्वास को परखा जाता है । मौखिक प्रश्न पूछते समय कुछ बातों का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए।

- लम्बे उत्तरों वाले प्रश्नों को नहीं पूछना चाहिए ।
- प्रश्न में द्विअर्थी शब्दों का प्रयोग करने से बचना चाहिए ।
- छात्रों को उत्तर देते समय, बीच में नहीं टोकना चाहिए ।

■ लम्बी शब्दावली वाली प्रश्नों से बचना चाहिए ।

लिखित मूल्यांकन :

वर्तमान समय में लिखित परीक्षाओं के माध्यम से मूल्यांकन का परचलन सबसे अधिक है । इस परीक्षा में चार प्रकार के प्रश्नों को पूछा जा सकता है –

1. वस्तुनिष्ठ प्रश्न
2. अति लघुउत्तरीय प्रश्न
3. लघु उत्तरीय प्रश्न
4. दीर्घ उत्तरीय या निबन्धात्मक प्रश्न

10.5 मूल्यांकन का महत्त्व

किसी भी कार्य के उपरान्त यह जानना आवश्यक होता है कि उसमें कहाँ तक सफलता प्राप्त हुई है। हिदी भाषा जो कि सभी विषयों की ज्ञान प्राप्ति का माध्यम है, इसके शिक्षण में मूल्यांकन का बहुत महत्व है–

1. **हिन्दी भाषा शिक्षण के उद्देश्यों में सहायक –** शिक्षा के विभिन्न स्तरों में भाषा शिक्षण के उद्देश्य निध ार्रित किए जाते हैं। इन उद्देश्यों की प्राप्ति की जानकारी मूल्यांकन से जानी जा सकती है। जैसे भाषा शिक्षण का उद्देश्य है विद्यार्थियों को हिन्दी भाषा के साहित्य का ज्ञान प्रदान करता। अध्यापक एवं विद्यार्थी द्वारा इस उद्देश्य की प्राप्ति में जो प्रयत्न किए गए तथा उनको कहां तक सफलता प्राप्त हुई, इसकी जानकारी मूल्यांकन द्वारा की जा सकती है।

2. **पाठ्यक्रम का पुनर्गठन –** भाषा–शिक्षण के उद्देश्यों के अनुसार पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्तों को अपनाते हुए पाठ्यक्रम निर्धारित किया जाता है। मूल्यांकन द्वारा यह जाना जा सकता है कि पाठ्यक्रम कहां तक उचित है क्योंकि पाठ्यक्रम यदि कठिन अथवा विद्यार्थियों के मानसिक स्तर के अनुरूप नहीं होगा तो उसका परिणाम सामूहिक रूप से ठीक नहीं होगा। अतः मूल्यांकन द्वारा भाषा शिक्षण के पाठ्यक्रम का पुनर्गठन किया जा सकता है।

3. **भाषा शिक्षण विधियों में मूल्यांकन की महत्ता –**भाषा शिक्षण में साहित्य के विभिन्न रूपों का ज्ञान प्रदान किया जाता है जैसे गद्य, पद्य व व्याकरण शिक्षण। इसके लिए भिन्न–भिन्न शिक्षण विधियां अपनाई जाती हैं। अध्यापक उन विधियों को अपनाने में कहां तक सफल हुआ है, इसकी जानकारी उसे मूल्यांकन द्वारा होती है। मूल्यांकन के परिणाम के अनुरूप अध्यापक अपनी शिक्षण विधियों में परिवर्तन ला सकता है।

4. **अध्यापके के लिए मूल्यांकन की महत्ता** – अध्यापक एक आदर्श भाषा अध्यापक के गुणों को कितना आत्मसात् करता हुआ शिक्षण व्यवस्था करता है, उसकी जांच विद्यार्थियों के मूल्यांकन से होती है। उसे मूल्यांकन द्वारा शिक्षण प्रक्रिया में अपनी कमियों का आभास होता है। उन्हें सुधारने के लिए अध्यापक शिक्षण उपकरणों का प्रयोग कर, विभिन्न शिक्षण सिद्धान्तों व सूत्रों का परिपालन कर एंव भाषा शिक्षण की व्यावहारिक शिक्षण विधियों को अपनाता हुआ अपने शिक्षण में विभिन्नता लाता है। अध्यापक विद्यार्थियों के मानसिक स्तर के अनुसार उनका वर्गीकरण मूल्यांकन द्वारा कर सकता है।

5. **विद्यार्थी के लिए मूल्यांकन की महत्ता** – विद्यार्थी के लिए मूल्यांकन की उपयोगिता सर्वोपरि है। मूल्यांकन से उसे अपने भाषा ज्ञान की योग्यता का पता लगता है। मूल्यांकन ही विद्यार्थी की शैक्षणिक प्रगति का मापदण्ड है। भाषा शिक्षण द्वारा विद्यार्थी के व्यक्तित्व में किस प्रकार का परिवर्तन हुआ है, उसे भाषागत कितनी उपलब्धि हुई है, भाषा सम्बन्धी उसकी अशुद्धियां क्या है, उसमें कहाँ तक अभिव्यक्ति की योग्यता विकसित हुई है, उसकी साहित्य के प्रति रूचि एवं योग्यता की जानकारी मूल्यांकन द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है।

6. **पाठ्य पुस्तक निर्माण में मूल्यांकन की महत्ता** – मूल्यांकन से पाठ्य पुस्तक की भी जांच होती है। पाठ्यपुस्तक विद्यार्थियों के मानसिक स्तर के अनुरूप होनी चाहिए। उसकी विषय सामग्री में विविधता होनी चाहिए। ऐसा होने पर विद्यार्थियों पर इसका अपेक्षित प्रभाव पड़ेगा जिसका परिचय उनके मूल्यांकन के परिणाम से प्राप्त होता है। अतः पुस्तक के औचित्य की जांच मूल्यांकन द्वारा हो सकती है।

7. **अभिभावकों को बालकों की योग्यता का परिचय** – मूल्यांकन से विद्यार्थियों की भाषा सम्बन्धी योग्यता एवं शैक्षणिक क्रियाओं का परिचय अध्यापक के साथ उनके अभिभावकों को भी होता है जिससे वह बालकों को शिक्षण के उचित साधन जुटा उनकी मदद कर सकते हैं।

8. **विद्यार्थियों के लिए प्रेरणास्रोत** – शिक्षण व्यवस्था में मूल्यांकन ध्येय एवं लक्ष्य का काम करता है जिसकी प्राप्ति के लिए विद्यार्थी सतत् परिश्रम करता है। वह भाषा व साहित्य का विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर परीक्षण में सफलता प्राप्त करता है। अतः मूल्यांकन उनका मार्गदर्शन करता है।

9. **भावी जीवन मे मूल्यांकन की आवश्यकता** – मूल्यांकन शिक्षा के साथ बालक के भावी जीवन का भी अपरिहार्य अंग है। शैक्षिक एवं व्यावसायिक क्षेत्रों में बालक की शिक्षा का मूल्य उसके मूल्यांकन के परिणाम द्वारा आंका जाता है। मूल्यांकन द्वारा विद्यार्थियों के शैक्षिक व व्यावसायिक निर्देशन में सहायता मिलती है। कौन–सा विद्यार्थी किस विषय में उच्च अध्ययन कर सकता है उसका निर्णय मूल्यांकन द्वारा होता है।

10. **अनुसंधान में मूल्यांकन की आवश्यकता –** शिक्षण व्यवस्था में अनुसंधन व शोध कार्य मूल्यांकन पर आधारित हैं। भाषा शिक्षण क विभिन्न पहलुओं में शोध कार्य के लिए मूल्यांकन द्वारा जांच की जाती है कि वर्तमान शिक्षण व्यवस्था कैसी है। उसका उन्नत करने के लिए किस प्रकार के कार्यक्रमों को सम्मिलित किया जा सकता है? अतः मूल्यांकन समस्त शिक्षण प्रक्रिया की स्थिति प्रकट करता है तथा इसमें शोध व अनुसंधान कार्य की ओर उन्मुख करता है।

मूल्यांकन विधि के उपयोग में सावधानियाँ

- शिक्षण–उद्देश्यों को बालक के व्यवहार–परिवर्तनों के रूप में स्पष्ट ढंग से निश्चित कर लेना चाहिए।
- इसके अन्तर्गत जिस विषय–वस्तु का बोध बालकों का कराना है, उसका मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विश्ले विश्लेषण करके इकाई–योजना तालिका तैयार करनी चाहिये।
- शिक्षण के समय सीखने की क्रियाओं एवं अनुभवों का आयोजन करने के लिये यह आवश्यक है कि ऐसा वातावरण उत्पन्न किया जाये जिससे बालक सक्रिय होकर अधिक से अधिक सीखने के अनुभवों का सृजन कर सके।
- शिक्षण एवं परीक्षण बिन्दुओं को पहले ही निश्चित कर लेना चाहिये।
- परीक्षण बिन्दुओं तथा शिक्षण बिन्दुओं में समन्वय स्थापित करना परमावश्यक है। परीक्षण, शिक्षण बिन्दुओं पर ही आधारित होता चाहिए।
- विषय की शिक्षा में बालकों की निष्पत्तियों का मूल्यांकन करते सयम पाठ्य–पुस्तकों, शिक्षण–विधियों तथा सहायक सामग्री के सम्बन्ध में भी जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये जिससे उनमें अपेक्षित सुधर लाया जा सके।
- शिक्षण में पाठ–योजनाओं, शिक्षण, परीक्षण का निर्माण उद्देश्य केन्द्रित होना चाहिए।
- मूल्यांकन–विधि की तीनों प्रक्रियाओं (उद्देश्य, सीखने के अनुभव तथा व्यवहार परिवर्तन) को परस्पर सम्बन्धित तथा गतिशील समझना आवश्यक है।
- बालकों की उपलब्ध्यिों के मापन में विश्वसनीय तथा वैध उपकरणों का प्रयोग करना चाहिए।
- बालकों की निष्पत्तियों की जानकारी के लिये निबन्धत्मक, सूक्ष्म उत्तर तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं को सम्मिलित रूप में प्रयोग करना चाहिये।

मूल्यांकन विधि की सीमाएं

- शिक्षण में मूल्यांकन–विधि का प्रयोग करने के लिये विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

- विषय–वस्तु तथा शिक्षण उद्देश्यों के विश्लेषण की तालिका वस्तुनिष्ठ नहीं होती है।
- शिक्षण तथा परीक्षण बिन्दुओं के निर्धारण के लिये कोई भी प्रामाणिक मानदण्ड उपलब्ध नहीं है।
- शिक्षण एवं परीक्षण बिन्दुओं को एक ही अध्यापक निश्चित करता है। इसलिये व्यक्तिगत पक्षों का समावेश रहता है।
- मूल्यांकन विधि के कार्यान्वयन में शिक्षक रूचि नहीं लेते हैं।

छात्राध्यापकों का अपने शिक्षण–अधिगम की व्यवस्था का बोध प्रशिक्षण काल में होना नितान्त आवश्यक है। अब तक प्रशिक्षण संस्थाओं में हर्बर्ट की पंचपदी योजना का अनुसरण किया जाता रहा है–

1) तैयारी
2) प्रस्तुतीकरण
3) तुलना एवं समरूपता
4) सामान्यीकरण
5) प्रयोग

इस पंचपदी योजना में प्रस्तुतीकरण पर बल दिया जाता है। शिक्षण की सार्थकता को महत्व नहीं दिया जाता है। जबकि शिक्षण को सोद्देश्य प्रक्रिया माना जाता है। शिक्षण की व्यवस्था विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति हेतु की जाती है। आई0 के0 डेवीज ने शिक्षण को उच्चतम व्यावसायिक प्रक्रिया माना है। इन्होंने शिक्षा के क्षेत्रा में नये प्रत्यय 'शिक्षण–अध्गिम व्यवस्था' को दिया है। जिसमें शिक्षण–अधिगम व्यवस्था के लिये व्यावहारिक सोपानों की व्याख्या की जाती है। छात्राध्यापक इन सोपानों का अनुसरण अपने शिक्षण के नियोजन में भली प्रकार कर सकता है।

10.6 मूल्यांकन प्रविधियां अर्थ

मूल्यांकन की प्रक्रिया ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के सम्बन्ध में प्रदत्त का संकलन करती है। परम्परागत परीक्षाओं से ज्ञानात्मक उद्देश्यों का ही मापन किया जाता है। मूल्यांकन की प्रक्रिया का क्षेत्र अधिक व्यापक होता है। इसमें अनेक प्रकार का प्रविधियां प्रयुक्त की जाती हैं।

- ज्ञानात्मक उद्देश्यों के लिये मौखिक, लिखित, निबन्धात्मक परीक्षायें तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षायें तथा प्रयोगात्मक परीक्षायें उपयोग में लाई जाती हैं। निरीक्षण प्रविधि का भी प्रयोग करते हैं।
- भावात्मक उद्देश्यों के लिये अभिरूचि सूची, रेटिंग स्केल तथा मूल्यों की परीक्षा आदि प्रयुक्त किये जाते

है। निबन्धात्मक परीक्षायें भी आंशिक रूप से प्रयुक्त की जा सकती हैं। निरीक्षण–प्रविधि को भी प्रयोग में लाया जाता है।

- क्रियात्मक उद्देश्यों के लिये प्रयोगात्मक परीक्षा अधिक उपयोगी मानी जाती है। इसमें छात्रों को कुछ क्रियायें करनी पड़ती है और उनके कौशल का मूल्यांकन किया जाता है।

मूल्यांकन में मानदण्ड परीक्षा को विशेष महत्व दिया जाता है। इसकी तीन प्रमुख विशेषतायें होती हैं–

(i) **समुचितता** – मानदण्ड परीक्षा समुचित मानी जाती है क्योंकि इसमें उद्देश्यों को विशेष महत्त्व दिया जाता है। परीक्षा के प्रश्न विशिष्ट उददे्श्यों की प्राप्ति का मापन करते हैं।

(ii) **प्रभावशीलता** – मानदण्ड परीक्षा के मापन का कार्य भली प्रकार करना चाहिये। परीक्षा विश्वसनीय तथा वैध होनी चाहिये।

(iii) **व्यवहारिकता** – मानदण्ड परीक्षा का प्रशासन सरल होना चाहिये। अंकन भी सरल हो तथा प्रदत्तों का अर्थापन सार्थक होना चाहिए। परीक्षा छात्रों तथा शिक्षकों को मान्य होनी चाहिए।

अभिक्रमित अनुदेशन के मूल्यांकन में प्रमुख रूप में मानदण्ड परीक्षा को प्रयुक्त किया जाता है। यदि मानदण्ड परीक्षा में छात्रों को अच्छे अंक (90/90 मानदण्ड) नहीं प्राप्त हुये तो यह इस बात का सूचक है कि अधिगम प्रक्रिया प्रभावशाली नहीं है। इसमें परिवर्तन तथा सुधार लाना चाहिये। इस प्रकार अनुदेशन अभिक्रमित की प्रभावशीलता के सम्बन्ध में निर्णय लिया जा सकता है। छात्रों की प्रतिक्रियाओं को एवं उनकी कमजोरियों को जानने के लिये भी मानदण्ड परीक्षा प्रयुक्त कर सकते हैं और उनमें सुधार ला सकते हैं।

10.7 भेद :

विद्यालयों में प्रयुक्त की जाने वाली सभी मूल्यांकन प्रविधियों को प्रमुख रूप से दो वर्गों में विभाजित किया जाता है–

1. **परिमाणात्मक परीक्षायें**–मूल्यांकन में इस प्रकार की प्रविधियां अधिक उपयोगी, विश्वसनीय तथा वैध होती है। यह तीन प्रकार की होती है–

(i) **मौखिक** – इसमें मौखिक प्रश्न, वाद–विवाद–प्रतियोगिता तथा नाटक आदि को प्रयुक्त किया जाता है।

(ii) **लिखित** – इसमें प्रश्न लिखित रूप में पूछे जाते हैं, छात्रों को उनका उत्तर लिखना होता है। लिखित परीक्षायें दो प्रकार की होती हैं–(क) निबन्धत्मक परीक्षायें। (ख) वस्तुनिष्ठ परीक्षायें।

(iii) **प्रयोगात्मक** – इसमें छात्रों को कोई निर्धारित कार्य पूरा करना होता है। विज्ञान, भूगोल, गश्ह विज्ञान, कला, क्राफ्रट आदि विषयों में इन्हें प्रयुक्त किया जताा है।

2. **गुणात्मक परीक्षाएं–** विद्यालय में गुणात्मक परीक्षाओं का उपयोग आन्तरिक मूल्यांकन के लिये किया जाता है यह साधरणतः पांच प्रकार की होती है–

(i) **संचयी आलेख –** विद्यालयों में प्रत्येक छात्र के सम्बन्ध में सूचनाओं को क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित किया जाता है। इसमें शैक्षिक प्रगति, मासिक परीक्षा–फल, उपस्थिति, योग्यता तथा अन्य विद्यालयों की क्रियाओं में भाग लेने आदि का आलेख प्रस्तुत किया जाता है। छात्र की प्रगति तथा कमजोरियों को जानने के लिये अभिभावकों, शिक्षकों तथा प्रधानाचार्य के लिये यह अधिक उपयोगी आलेख होता है।

(ii) **एनेकडोटल आलेख –** इनमें बालकों के व्यवहार के सम्बन्धित महत्वपूर्ण घटनाओं, तथा कार्यों का वर्णन किया जाता है। इन कार्यों तथा घटनाओं का आलेख सही रूप में किया जाता है। निरीक्षण करने वाले छात्र की रूचियों तथा झुकावों को उत्पन्न करने वाले घटकों का भी उल्लेख करता है, इनके आधार पर छात्र के सम्बन्ध में सामान्यीकरण किया जा सकता है और निर्देशन में इसे प्रयुक्त करते हैं।

(iii) **निरीक्षण–** इसका प्रयोग विशेष रूप से छोटे बालकों के मूल्यांकन के लिये किया जाता है, क्योंकि उनको अन्य कोई परीक्षा नहीं दी जा सकती है और उनके व्यवहार में वास्तविकता होती है। इसका प्रयोग उनकी योग्यता तथा व्यवहारों के सम्बन्ध में किया जाता है। उच्च कक्षाओं में छात्र स्वयं आत्मनिरीक्षण के लिये भी इसे प्रयोग करता है।

♦ **जाँच सूची –** लिखित तथा मौखिक परीक्षायें छात्रों के ज्ञानात्मक पक्ष की परीक्षा करती है और प्रयोगात्मक परीक्षायें कौशल तथा क्रियात्मक पक्ष की जाँच करती है। जाँच सूची का प्रयोग अभिरूचियों, अभिवशतियों तथा भावात्मक पक्ष के लिये किया जाता है। इसमें कुछ कथन दिये जाते हैं। उन कथनों के सम्बन्ध में छात्रों को हाँ अथवा नहीं में उत्तर अंकित करना होता है। इस प्रकार के कथनों की सूची की रचना करते समय उद्देश्य स्पष्ट होने चाहिए। प्रत्येक कथन को किसी विशिष्ट उद्देश्य का मापन करना चाहिए। जैसे–

- ♦ आपको शिक्षण–सोपानों का स्मरण करने में रूचि है। हाँ/नहीं
- ♦ आप पाठ–योजना की रचना करने में रूचि लेते हैं। हाँ/नहीं
- ♦ आपको कक्षा–शिक्षण के प्रस्तुतीकरण में आनन्द मिलता है। हाँ/नहीं
- ♦ आपको छात्रों के कार्यों की प्रशंसा करना अच्छा लगता है। हाँ/नहीं

इस जाँच सूची से छात्राध्यापकों की शिक्षण में रूचि का मूल्यांकन किया जा सकता है।

(अ) **अनुस्थिति मापनी** – इसमें कुछ कथन दिये जाते हैं, उनका तीन, पाँच, सात बिन्दुओं तक सापेक्ष निर्णय करना होता है। इसका प्रयोग उच्च कक्षाओं के छात्रों के लिये ही किया जा सकता है, क्योंकि निर्णय लेने की शक्ति छोटी आयु के छात्रों में नहीं होती हैं। शिक्षक भी प्रत्येक छात्र के मापन के लिये इसका प्रयोग करता है, परन्तु शिक्षक को प्रत्येक छात्र से भली प्रकार परिचित होना चाहिये। अनुस्थिति मापनी के कथन स्पष्ट तथा विशिष्ट व्यवहारों से सम्बन्धित होने चाहिये।

10.8 महत्व और उपयोग

शिक्षण के अनुदेशनात्मक उद्देश्यों के निर्धरण का प्रयोजन छात्र–छात्राओं के व्यवहार में वांछनीय परिवर्तन लाने से होता है। इसलिये कक्षा शिक्षण के परिवर्तनों से शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है। उद्देश्य विशिष्ट, प्रत्यक्ष और व्यावहारिक हो सकते हैं। यही कारण है कि शिक्षक के लिये इनका बहुत अधिक महत्व होता है। शिक्षण–उद्देश्यों का प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध सीखने के उद्देश्य से होता है। प्रोफैसर बी0 एस0 ब्लूम ने सीखने के उद्देश्य को तीन भागों में विभाजित किया है। ये तीनों पक्ष सीखने वाले से सम्बन्धित है अर्थात् छात्र छात्राओं से सम्बन्धित हैं। सीखने के उद्देश्यों का सम्बन्ध छात्र–छात्राओं के व्यवहार परिवर्तन से होता है। व्यवहार परिवर्तन तीन प्रकार से होता है– (1) ज्ञानात्मक (2) भावात्मक और (3) क्रियात्मक। ब्लूम के कथनानुसार सीखने के उद्देश्य भी तीन प्रकार के होते हैं जो निम्नलिखित हैं–

ज्ञानात्मक उद्देश्य – ज्ञानात्मक उद्देश्यों का मुख्य रूप से सम्बन्ध सूचनाओं, ज्ञान तथा तथ्यों की पर्याप्त जानकारी से होता है। अधिकांश शैक्षिक क्रियाओं द्वारा इसी उद्देश्य की प्राप्ति की जाती है।

भावात्मक उद्देश्य – भावात्मक उद्देश्य का सम्बन्ध रूचियों, अभिवशत्तियों तथा मूल्यों के विकास से होता है। यह शिक्षा के किसी विषय के शिक्षण का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य होता है।

क्रियात्मक उद्देश्य – क्रियात्मक उद्देश्य का सम्बन्ध छात्र–छात्राओं की क्रियात्मक गतिविधियों के प्रशिक्षण से होता है और साथ–साथ उनमें कौशल के विकास करने से होता है। इसके अतिरिक्त इस उद्देश्य का सम्बन्ध औद्योगिक और व्यावसायिक प्रशिक्षण से होता है।

ब्लूम तथा उसके सहयोगियों ने शिकागो विश्वविद्यालय में इन तीनों पक्षों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया है। ज्ञानात्मक पक्ष ब्लूम ने (1956) में भावात्मक पक्ष ब्लूम, करथवाल और मसीआ (1964) में और क्रियात्मक पक्ष का सिम्पसन ने (1969) में वर्गीकरण प्रस्तुत किया था। इस वर्गीकरण की सहायता से शिक्षक अपने शिक्षण और सीखने के उद्देश्यों को सुगमता से निर्धारित कर सकता है। इन शिक्षण उद्देश्यों को लिखने के लिए कई विधियों का प्रयोग किया जाता है। परन्तु सभी ने ब्लूम के वर्गीकरण की ही सहायता ली है। ब्लूम ने स्वयं भी इस वर्गीकरण का प्रयोग परीक्षण की रचना में यह जानने के लिए किया है कि विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के सम्बन्ध में निर्णय लेने के प्रश्न का स्वरूप किस प्रकार का हो ? उसने परीक्षण को उद्देश्य केन्द्रित बनाने का

प्रयत्न किया है।

प्रत्येक पक्ष के विस्तार क्रम को प्रस्तुत करते हुए आगे चलकर तालिका की सहायता से समझाया गया है। जैसे ज्ञानात्मक पक्ष का विस्तार ज्ञान से लेकर मूल्यांकन तक है। मूल्यांकन तक पहुंचने के लिए ज्ञान से संश्लेषण तक की क्षमताओं का विकास होना आवश्यक होता है। यह वर्गीकरण क्रमबद्धता से होता है। जिसे चढ़ाव क्रम कहते है। इसके वर्गों से शैक्षिक उद्देश्यों के क्रम का ज्ञान होता है। शिक्षक अपने उद्देश्यों को निर्धारित करने के लिए क्रम का ज्ञान होता है। शिक्षक अपने उद्देश्यों को निर्धारित करने के लिए क्रमबद्धता को ही अपनाता है। छात्र शिक्षक अपने शिक्षण नियोजन में ज्ञानात्मक पक्ष के उद्देश्यों का विशेष रूप से प्रयोग करता है। इसलिए ज्ञानात्मक पक्ष के उद्देश्यों, पाठ्य सामग्री तथा सीखने की उपलब्धियों का वर्णन विस्तार से किया गया है क्योंकि ज्ञानात्मक पक्ष का महत्व छात्र शिक्षकों के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध होता है। ब्लूम द्वारा सूझाए गए शिक्षण उद्देश्यों के वर्गीकरण निम्नलिखित तालिका द्वारा दर्शाया गया है–

शैक्षिक उद्देश्य का वर्गीकरण

ज्ञानात्मक पक्ष	भावात्मक पक्ष	क्रियात्मक पक्ष
(Cognitive Domain)	Affective Domain)	(Psychomotor Domain)
1. ज्ञान	ग्रहणता	उद्दीपन
2. बोध	अनुक्रिया	कार्य करना
3. प्रयोग	आंकलन	नियन्त्रण
4. विश्लेषण	प्रत्ययीकरण	समायोजन
5. संश्लेषण	व्यवस्थापन	स्वागीकरण
6. मूल्यांकन	चरित्रनिर्माण	आदत पड़ना और कौशल का निर्माण

ब्लूम के ज्ञानात्मक शैक्षिक उद्देश्यों के वर्गीकरण से पहले हमारे लिए मुख्य रूप से उद्देश्यों के प्रकार के बारे में और उन दोनों उद्देश्यों के भेद (अन्तर) के बारे में जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है। मुख्य रूप से उद्देश्यों के दो प्रकार हैं जो निम्नलिखित हैं–

1. शैक्षिक उद्देश्य (Educational objectives)
2. शिक्षण उद्देश्य (Teaching objectives)

शैक्षिक उद्देश्यों तथा शिक्षण उद्देश्यों में अन्तर – इन दोनों में मुख्य रूप से अन्तर तो क्षेत्रों का होता है। शैक्षिक उद्देश्य का आधार दर्शन शास्त्र और सामाजिक शास्त्र होता है परन्तु शिक्षण उद्देश्यों का आधार

मनोविज्ञान होता है। शैक्षिक उद्देश्यों की अगर प्राप्ति होती है तो शिक्षण उद्देश्यों की भी प्राप्ति हो जाएगी क्योंकि शैक्षिक उद्देश्यों में शिक्षण उद्देश्य निहित होते हैं। दूसरी तरफ शिक्षण उद्देश्य साधन मात्र है जो शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होते हैं। शैक्षिक उद्देश्यों की अवधि सीमित नहीं होती जबकि शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति 40 मिनट की अवधि के कालांश में भी सम्भव है। शैक्षिक उद्देश्य जैसे कि इसके नाम से पता चलता है ये समूची शिक्षा से सम्बन्धित होते हैं और शिक्षण उद्देश्यों का सम्बन्ध विषय विशेष के शिक्षण से होता है। शैक्षिक उद्देश्यों का सम्बन्ध व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास से होता है और शिक्षण उद्देश्यों का सम्बन्ध व्यक्ति के ज्ञान कौशल और उसकी अभिरूचियों से होता है।

ज्ञानात्मक शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण

ब्लूम ने अपनी पुस्तक ''ज्ञानात्मक शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण'' में ज्ञानात्मक पक्ष को व्यापक रूप में छः (6) वर्गों में विभाजित किया है। प्रत्येक वर्ग के सीखने की क्रियाओं को पहचानने का प्रयत्न भी किया गया है। जिनका व्यावहारिक रूप से अवलोकन और मूल्यांकन सम्भव है। इस पक्ष के सभी वर्गों की विशिष्ट सीखने की उपलब्ध्यिों तथा पाठ्य वस्तु की प्रकृति को निम्नलिखित चार्ट में दर्शाया गया है–

	वर्ग	**सीखने की उपलब्ध्यिाँ**
1.	ज्ञान	विशिष्ट वस्तुओं का ज्ञान, साधनों का ज्ञान और सार्वभौम वस्तुओं का ज्ञान
2.	बोध	अनुवाद करना, व्याख्या देना और उल्लेख करना।
3.	प्रयोग	सामान्यीकरण करना, निदान करना और प्रयोग करना।
4.	विश्लेषण	विश्लेषण करना, सम्बन्ध स्थापित करना और सिद्धान्त का विश्लेषण करना।
5.		अनोखा सम्प्रेषण करना, योजना का निर्माण करना और सम्बन्ध स्थापित करना।
6.	मूल्यांकन	बाहरी एवं आन्तरिक निर्णय लेना।

शिक्षण के अनुदेशानात्मक उद्देश्यों के निर्धारण में इन्हीं ज्ञानात्मक पक्ष के वर्गों की सहायता ली जाती है। वर्गों के शिक्षण तथा सीखने के उद्देश्यों के निर्धारण के लिये इसका प्रयोग किया जाता है। इन वर्गों का अथवा उद्देश्यों का संक्षिप्त विवरण निम्न है–

1. ज्ञान – ज्ञान से छात्र–छात्राओं के प्रत्यास्मरण और अभिज्ञान क्रियाओं को तथ्यों, शब्दों, नियमों तथा सिद्धान्तों की सहायता से विकसित किया जाता है। छात्र–छात्राओं हेतु परम्पराओं, वर्गीकरण, मानदण्डों, नियमों तथा सिद्धान्तों के प्रत्यास्मरण तथा अभिज्ञान के लिये परिस्थितियां पैदा की जाती हैं। ज्ञान वर्ग के भी पाठ्य–सामग्री की दृष्टि से तीन स्तर होते हैं जो निम्नलिखित हैं–

(i) विशिष्ट बातों का ज्ञान देना (तथ्य, शब्द आदि)।

(ii) उपायों तथा साधनों का ज्ञान देना।

2. बोध – बोध के लिये ज्ञान का होता आवश्यक होता है। जिस पाठ्य वस्तु (तथ्य, शब्द, उपाय, साधन, नियम तथा सिद्धान्तों) का ज्ञान प्राप्त किया है अर्थात् प्रत्यास्मरण और अभिज्ञान की क्षमताओं का विकास हो चुका है उन्हीं का अपने शब्दों में अनुवाद करना, व्याख्या करना तथा उल्लेख करना आदि क्रियाएं बोध उद्देश्य के स्तर पर की जाती है। बोध में सम्बन्ध स्थापित करने पर बल नहीं दिया जाता है। बोध उद्देश्यों की क्रिया के भी तीन स्तर होते हैं।

(i) तथ्यों, शब्दों, नियमों, साधनों और सिद्धान्तों को अनुवाद करके अपने शब्दों में अभिव्यक्त करना।

(ii) इसी पाठ्य वस्तु (सामग्री) की व्याख्या करना।

(iii) इसी पाठ्य सामग्री की बाहरी गणना और उल्लेख करना।

3. **प्रयोग** – प्रयोग के लिये ज्ञान तथा बोध होना आवश्यक है तभी छात्र प्रयोग स्तर की क्रियाओं में समर्थ हो सकते हैं। पाठ्य सामग्री को भी प्रयोग उद्देश्यों में तीन स्तर पर प्रस्तुत करते हैं –

(i) नियमों, साधनों, सिद्धान्तों में सामान्यीकरण करना (यह बाहरी गणना के निकट की क्रिया है)।

(ii) उनकी कमज़ोरियों को जानने के लिए निदान करना।

(iii) छात्र–छात्राओं द्वारा पाठ्य–सामग्री का प्रयोग करना (अर्थात् छात्र–छात्राएं इन शब्दों और नियामों को अपने कथनों में कर लेते हैं)।

4. विश्लेषण – इसके लिये तीनों ही उद्देश्यों की प्राप्ति का होता आवश्यक है। इसमें पाठ्य सामग्री के नियमों, सिद्धान्तों, तथ्यों और प्रत्ययों को तीन स्तरों पर प्रस्तुत किया जाता है–

(i) उनके तत्त्वों का विश्लेषण करना।

(ii) उनके सम्बन्धों का विश्लेषण करना।

(iii) उनका व्यवस्थित सिद्धान्तों के रूप में विश्लेषण करना।

बोध तथा प्रयोग उद्देश्यों की अपेक्षा विश्लेषण उच्च स्तर का उद्देश्य होता है। इसमें पाठ्य–सामग्री के बोध तथा प्रयोग के बजाए उसके तत्त्वों का अलग–अलग करना होता है।

5. **संश्लेषण** – इसको सश्जनात्मक या रचनात्मक उद्देश्य भी कहा जाता है इसमें विभिन्न तत्त्वों को एक नवीन रूप में व्यवस्थित किया जाता है। संश्लेषण के भी तीन स्तर होते हैं–

(i) विभिन्न तत्त्वों के संश्लेषण में सम्प्रेषण करना।

(ii) तत्त्वों के संश्लेषण से नवीन योजना प्रस्ताविक करना।

(iii) तत्त्वों के अमूर्त सम्बन्धयों का अवलोकन करना।

सश्लेषण में छात्रों को अनेक स्त्रोतों में तत्त्वों को निकालना होता है। विभिन्न तत्त्वों को मिलाकर 'नया ढांचा' तैयार करना होता है। इससे सश्जनात्मक क्षमताओं का विकास होता है।

6. **मूल्यांकन** – यह ज्ञानात्मक पक्ष का अन्तिम तथा सबसे उच्च उद्देश्य माना जाता है। इसमें पाठ्य वस्तु के नियमों, सिद्धान्तों तथा तथ्यों के सम्बन्ध में आलोचनात्मक दश्ष्टिकोण अपनाया जाता है। उनके सम्बन्ध में निर्णय लेने में आन्तरिक तथा बाह्म मानदण्डों को प्रयुक्त किया जाता है। वास्तव में मूल्यांकन को नियमों, तथ्यों, प्रत्ययों तथा सिद्धान्तों की कसौटी का स्तर माना जाता है।

स्कूल के शिक्षण विषयों की पाठ्य वस्तु में शब्दावली, तथ्य, नियम, उपाय, साधन, विधियां, प्रत्यय, सिद्धान्त तथा सामान्यीकरण ही होते हैं। इतिहास की पाठ्य वस्तु में तथ्य होते हैं। विज्ञान की पाठ्य वस्तु में नियम, विधियां तथा सिद्धांत होते हैं। भाषा की पाठ्य वस्तु में शब्दावली, साधन, प्रत्यय और नियम होते हैं। इस प्रकार शिक्षण विषयों की सहायता से ज्ञान उद्देश्य से मूल्यांकन उद्देश्यों तक की प्राप्ति की जाती है और इस प्रकार ज्ञानात्मक पक्ष का विकास होता है।

◆ **अनुदेशनात्मक उद्देश्यों के सीखने की उपलब्धियां** – इन उद्देश्यों की प्राप्ति से सीखने की उपलब्धियां भी अलग–अलग होती है–

(i) **तथ्यों की सूचना** – ज्ञान तथा बोध उद्देश्यों की प्राप्ति से होती है।

(ii) **प्रत्ययों की अनुभूति** – बोध उद्देश्य से विश्लेषण उद्देश्य तक की प्राप्ति से सम्भव होती है।

(iii) **सामान्यीकरण** – बोध उद्देश्य से संश्लेषण तक की प्राप्ति से होता है।

(iv) **समस्या समाधन** – प्रयोग उद्देश्य से मूल्यांकन उद्देश्य तक प्राप्ति से होता है।

(v) सश्जनात्मक चिन्तन का विकास विश्लेषण से मूल्यांकन उद्देश्यों तक की प्राप्ति से होता है।

(vi) सिद्धान्तों तथा व्यवस्थित ज्ञान की क्षमताओं का विकास भी विश्लेषण से मूल्यांकन उद्देश्य की प्राप्ति से होता है।

♦ हिन्दी शिक्षण के उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप में प्रतिपादन

किसी भी विषय की शिक्षण प्रक्रिया आरम्भ करने से पूर्व शैक्षिक उद्देश्यों का प्रतिपादन करना आवश्यक होता है। इन उद्देश्यों को सामान्य, विशिष्ट एवं व्यवहारपरक ढंग से निरूपित किया जा सकता है। श्रिक्षा विधियों का अध्ययन करते समय प्रायः यह देखा जाता है कि इन विधियों में शिक्षा उद्देश्यों को स्पष्ट किया जाता है। वर्तमान में हम देखते हैं कि प्रशिक्षण, अनुदेशन (शिक्षण) और अधिगम के क्षेत्र में व्यवहारपरक उद्देश्यों को प्रतिपादन की परम्परा बहुत चर्चित है और इसको प्रयोग में लाया जा रहा है।

अनुदेशन के निर्माण का दूसरा सोपान अनुदेशात्मक उद्देश्यों का प्रतिपादन करके उनको फिर व्यावहारिक रूप में लिखना होता है। उद्देश्यों को निर्धारित करने हेतु 'ब्लूम ने शैक्षिक उद्देश्यों के वर्गीकरण' की सहायता ली जाती है। अभिक्रमित अनुदेशन से ज्ञानात्मक उद्देश्यों की आसानी से प्राप्ति की जा सकती है। इसके लिये ब्लूम का ज्ञानात्मक शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण का अनुसरण बहुत सहायक है। ज्ञानात्मक शिक्षण के उद्देश्यों को ब्लूम ने ज्ञान, बोध प्रयोग, विश्लेषण, संश्लेषण तथा मूल्यांकन की दृष्टि से विभाजित किया है। इन अनुदेशनात्म उद्देश्यों को इन्हीं वर्गों के आधर पर निर्धारित किया जाता है। बाद में फिर इन उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखा जाता है।

उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में प्रभावशाली ढंग से लिखने के लिए राबर्ट मेगर ने एक सशक्त अर्थपूर्ण नियोजित विधि का प्रतिपादन किया है जो अनुदेशन के उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिए अधिक कारगर मानी जाती है, क्योंकि अभिक्रमित अनुदेशन प्रत्यय और मेगर विधि व्यवहारवादी विधि मनोविज्ञान के सिद्धान्तों पर आधारित है। राबर्ट मेगर विधि की शुरूआत (1962) में हुई और (1963) से अभिक्रमित अनुदेशन के प्रत्यय में व्यावसायिक उद्देश्यों को पर्याप्त महत्व दिया गया। उद्देश्यों के सन्दर्भ में मेगर का कथन है–

"**अनुदेशन–** उद्देश्य वे कथन होते हैं जिनमें उन शब्दों या संकेतों को सम्मिलित किया जाता है, जिनसे शैक्षिक लक्ष्यों का बोध होता है"

♦ अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना

प्रो0 ब्लूम द्वारा प्रस्तुत उद्देश्यों के वर्गीकरण में शिक्षण क्रियाओं को विशिष्ट रूप में लिखने का संकेत नहीं है। शिक्षण या अनुदेशनात्मक उद्देश्यों से एक ही स्तर का बोध होता है। उद्देश्यों में कहीं भी यह स्पष्टता नहीं है कि अनुदेशन के पश्चात् छात्र किस प्रकार का कार्य करने में सक्षम हो जाएगा अर्थात् योग्यता प्राप्त कर लेगा। दूसरे अर्थों में छात्र–छात्राओं के अन्तिम व्यवहार के बारे में कोई स्पष्टता नहीं है। इसलिये अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना आवश्यक है ताकि उद्देश्यों की विशिष्टता शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को अधिक सशक्त एवं सार्थक और उद्देश्यपूर्ण बना सके।

अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है–

1. अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन

2. व्यवहार में परिवर्तन लाने वाली पाठ्य सामग्री

अनुदेशनाात्मक उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप शब्दावली में लिखने के लिये मुख्य रूप से निम्न मूलभूत आधार है–

(i) अनुदेशनात्मक उद्देश्य की प्रकशति जिसके अन्तर्गत ज्ञान बोध आदि की चर्चा।

(ii) सीखने वाले के व्यवहार का पक्ष जिसके अन्तर्गत ज्ञानात्मक, भावात्मक और मनोपेशी क्षेत्रों की चर्चा।

- स्केफील्ड के अनुसार, अनुदेशनात्मक उद्देश्यों की विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

(i) इन उद्देश्यों को स्वरूप का विशिष्टीकरण हो जाता है।

(ii) परीक्षण के प्रश्नों को बनाने में पर्याप्त रूप से सहायता मिलती है।

(iii) शिक्षण और परीक्षण में समन्वय स्थापित किया जा सकता है।

- उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के निम्न लाभ हैं–

(i) इन उद्देश्यों से शिक्षण व सीखने की क्रियाएं सीमित तथा सुनिश्चित हो जाती हैं।

(ii) इससे समुचित शिक्षण युक्तियों का चयन करके अपेक्षित सीखने से सम्बन्धित परिस्थितियों को उत्पन्न किया जा सकता है।

(iii) इससे उद्देश्य केन्द्रित मानदण्ड परीक्षा का निर्माण किया जा सकता है।

(iv) इससे परीक्षण को शिक्षण पर आधारित किया जा सकता है और उद्देश्यों की परिमाण में गणना की जा सकती है।

मेगर ने केवल ज्ञानात्मक एवं भावात्मक पक्ष के वर्गों के लिए ही विभिन्न सूचकों का वर्णन किया है तथा प्रत्येक उद्देश्य में अनेक क्रियाएं हैं जिनका पूरा विवरण नीचे दिया जा रहा है–

ज्ञानात्मक पक्ष से सम्बन्धित कार्यसूचक क्रियाएं

	उद्देश्य (Objectives)	**कार्य–सूचक क्रियाएं** (Action Verbs)
1.	ज्ञान	सूची देना, परिभाषा देना, कथन देना, चयन करना, पहचानना,

		मापन करना, लिखना, प्रत्यास्मरण करना, रेखांकित करना आदि।
2.	बोध	व्याख्या करना, उदाहरण देना, संकेत करना, प्रस्तत करना, प्रतिपादन करना, वर्गीकरण करना, अनुवाद करना।
3.	प्रयोग	पूर्व कथन, जांच करना, पाना, प्रयोग करना, बनाना, प्रदर्शन करना, उल्लेख करना।
4.	विश्लेषण	विश्लेषण करना, निष्कर्ष निकालना, पुष्टि करना, तुलना करना, भेद करना, आलोचना करना, अलग करना।
5.	संश्लेषण	तर्क करना, व्यवस्थित करना, सामान्यीकरण करना, निष्कर्ष देना, पुनः कथन करना, संक्षिप्त करना।

भावात्मक उद्देश्य

राबर्ट मेगर ने भावात्मक उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप मे लिखने के लिए विभिन्न उद्देश्यों के व्यावहारिक रूप के लिए कार्य–सूचक क्रियाओं की सूची प्रस्तुत की है, जो निम्नलिखित हैं–

भावात्मक उद्देश्यों के लिए कार्य सूचन क्रियाओं की सूची

	उद्देश्य (Objectives)	**कार्य–सूचक क्रियाएं** (Action Verbs)
1.	आग्रहण या ध्यान आकर्षण	सुनना, पसन्द करना, आग्रहण, स्वीकार करना।
2.	अनुक्रिया	उत्तर देना, कथन करना, सूची बनाना, विकास करना, चयन करना, लिखना, आलेखन बनाना।
3.	आंकलन	चुनना, पूरा करना, भाग लेना, पहचानना, संकेत करना, विभेद करना, वशद्धि करना, निश्चय करना।
4.	संगठन	पाना, बनाना, चयन करना, व्यवस्थित करना, संश्लेषित करना, जोड़ना, समन्वय करना, निश्चित करना।

क्रियात्मक उद्देश्य

क्रियात्मक पक्ष

उद्देश्य (Objectives)	**कार्य–सूचक क्रियाएं** (Action Verbs)

1.	प्रत्यक्षीकरण	चित्र बनाना, निर्माण करना
2.	व्यवस्था	बनना, प्रारूप तैयार करना।
3.	निर्देशाल्य अनुक्रिया	पहचानना, व्यवस्थित करना।
4.	कार्य–प्रणाली	सुधार करना, अभ्यास।

	क्रियात्मक पक्ष के उद्देश्य	**उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना**
1.	प्रत्यक्षीकरण	छात्र ताज महल 'मॉडल' का निर्माण कर सकते हैं
2.	व्यवस्था	छात्र ताज महल 'मॉडल' का प्रारूप तैयार कर सकते हैं
3.	निर्देशाल्य अनुक्रिया	छात्र ताज महल 'मॉडल' के विभिन्न अवयवों को व्यवस्थित कर सकते हैं
4.	कार्य–प्रणाली	छात्र ताज महल 'मॉडल' में सुधार कर सकते हैं
5.	जटिल प्रत्यक्ष अनुक्रिया	छात्र ताज महल 'मॉडल' के सम्बन्धित अवयवों का पता लगाकर इनका सश्जन कर सकते हैं

यहां 'मॉडल' का तात्पर्य किसी वस्तुगत प्रतिमान से है।

10.9 निष्कर्ष :

मूल्यांकन प्रविधियाँ के भेद और अर्थ से ज्ञात होता है कि निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु मूल्यांकन बहुत महत्वपूर्ण रखता है ।

10.10 आत्मजांत और परीक्षण

1. मूल्यांकन प्रविधियाँ से क्या अभिप्राया है ?
2. मूल्यांकन प्रविधियाँ के भेद स्पष्ट करें ।

10.11 सहायक ग्रन्थ सूची :

1. वरवाल, जसपाल सिंह (2005) हिन्दी भाषा शिक्षण, गुरूवर बुक डिपो, सुधार (लुधियाना)
2. खन्ना, ज्योति (2000), हिन्दी शिक्षण,धनपत राय एण्ड कम्पनी दिल्ली।
3. भाई, योगिन्द्रजीत (1984), हिन्दी भाषा शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
4. भाटिया, एम. एम. (1999), हिन्दी शिक्षण विधियां टण्डन पब्लिकेशन्ज, लुधियाना।

5. पाण्डे, रामशकल (1999), हिन्दी शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

6. शर्मा, बी. एन. (1968) , हिन्दी शिक्षण, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।

7. सफाया, रघुनाथ (1986–97), हिन्दी शिक्षण विधि, दिल्ली पुस्तक सदन, पटना।

8. सूद, विजय (1997), हिन्दी शिक्षण विधियां, टण्डन पब्लिकेशन्ज, लुधियाना।

....

UNIT - 4(इकाई – 4) **पाठ/ LESSON : 11**

मौखिक कौशलों को जांचे

11.1 भूमिका

11.2 उद्देश्य

11.3 भाषा कौशल और उसका क्रम

11.4 मौखिक प्रश्नों का स्वरूप और अभ्यास

11.5 लिखित प्रश्नों का स्वरूप और अभ्यास

11.6 निष्कर्ष

11.7 आत्मजांच और परीक्षण

11.8 सहायक ग्रन्थ सूची

11.1 भूमिका

व्यक्ति में भाषा सीखने की प्रवृति स्वभावित रूप से रहती है । बचपन में वह अनुकरण द्वारा छोटे–छोटे प्रयासों से अपने माता–पिता के अन्य सदस्यों से ध्वनियाँ ग्रहण करता है, ध्वनि समूहों को समझने लगता है । भाषा एक कला है और दूसरी कलाओं की भांति इसे सीखा जाता है और सतत अभ्यास से इसमें प्रवीणता प्राप्त की जाती है । जिस प्रकार दूसरी कलाओं में साधनों की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार भाषा सीखने के लिए भी साधन की आवश्यकता होती है । साधन का दूसरा नाम अभ्यास है । भाषा का सशक्त साधन अवश्यक है, परन्तु सबसे पहले भाषा कौशलों–सुनना, बोलना, लिखना में प्रवीणता प्राप्त करने की आवश्यकता होती है । भाषा सीखते समय बच्चा इन कौशलों का स्वाभाविक क्रम से अभ्यास करता है । पहले बच्चा भाषा को सुनता है । सन्ने की यह प्रक्रिया घर से आरम्भ होती है और जीवन भर चलजी रहती है । सुनने के बाद बच्चा बोलता है । यह सब अनुकरण द्वारा होता है । सुनने बोलने के बाद वह पढ़ने की ओर

प्रवृत होता है । साथ–साथ वह लिखने की ओर भी ध्यान देने लगता है । इन चारों क्षमताओं का सम्मिलित महत्त्व है। इस पाठ में हम इन चारों कौशलों के विकास के विषय में जानकारी प्राप्त करेगें ।

11.2 उद्देश्य :

इस पाठ को पढ़ने के उपरान्त आप में यह क्षमता पैदा हो जाएगी कि आप निम्नलिखित को भलि–भांति स्पष्ट कर पाएंगे ।

1. आप भाषा कौशलों व उसे क्रम को समझ सकेंगे ।
2. आपको जानकारी हो जाएगी कि मौखिक कौशल के मूल्यांकन के प्रश्न कौन से हैं ।
3. आपको ज्ञात हो जाएगा कि लेखन कौशल का मूल्यांकन कैसे विकसित होता है ।

11.3 भाषा कौशल और उसका क्रम :

भाषा कौशल व्यक्ति को भाषा द्वारा विचार, भावों तथा सुचनाओं को ग्रहण करने तथा अभिव्यक्त करने की क्षमता प्रदान करते हैं । भाषा सीखते समय बच्चा इन कौशलों का स्वाभाविक क्रम से अभ्यास करता है। पहले बच्चा भाषा को सुनता है । सुनने की यह प्रक्रिया घर से शुरू होती है और जीवन भर चलती है । सुनने के बाद बालक बोलना सीखता है । बालक घर में यह नकल से सीखता है । जीवन भर यह मौखिक रूप से अपने विचारों एवं भावों को व्यक्त करता है । जीवन के विभिन्न कार्य–कलाप वह मौखिक भाषा के माध्यम से पूरे करता है । सुनने और बोलने के पश्चात् वह पढ़ने की ओर प्रवृत्त होता है और पढ़ने के साथ–साथ वह लिखने की ओर प्रवृत्त होने लगता है । इस प्रकार सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना – यह भाषा सीखने का स्वाभाविक क्रम है । भाषा के प्रयोक में विद्यार्थियों को सक्षम बनाने के लिए यह आवश्यक है कि इन चारो क्षमताओं का सम्यक विकास किया जाये । इन चारों क्षमताओं का सम्मिलित महत्त्व है। यह क्रमवार इस प्रकार है :–

क. श्रवण कौशल
ख. वाचन कौशल
ग. मौखिक कौशल
घ. लेखन कौशल

11.4 मौखिक प्रश्नों का स्वरूप और अभ्यास

जब शिक्षक कक्षा में विषय–वस्तु पढ़ाता है उस समय वो कई प्रकार के क्रियाकलाप करता है जैसे विषय–वस्तु को विस्तृत करना, छात्रों से अनेक गतिविधियों करवाना पुनर्बलन देना आदि । इसी तरह के अनेक कार्यों में एक महत्वपूर्ण कार्य प्रश्न पूछना भी है । शिक्षक का कोई भी कार्य यदि अधिगत से संबंधित है तो उसे पूर्ण रूप से प्राप्त करने के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता है प्रशिक्षण (अभ्यास) के द्वारा किसी कार्य में

दक्षता प्राप्त की जा सकती है । प्रश्न की संरचना किस तरह से करें ? कक्षा में प्रश्न पूछते समय किन–किन बातों को ध्यान में रखना चाहिये ? सही समय पर इसका प्रयोग कैसे करें आदि ।

परिभाषा –

''प्रश्न कौशल निर्धारित विशिष्टताओं पर प्रश्नों की रचना करने की प्रक्रिया एवं कक्षा में प्रश्नों को उचित रूप से पूछने की कला है ।''

Skill questioning is defined as the process of phrasing the questions with specified characteristics and art of asking the questions in classrooms.

प्रश्न पुछने का उद्‌देश्य –

1. छात्रों में उत्सुकत्ता व कौतुहल बढ़ाना ताकि वे अधिगम में अतिक रूचि ले सके ।
2. विद्यार्थियों में चिंतन की प्रवृत्ति को बढ़ाना जिससे वे सक्रियता से अधिगम कर सकें ।
3. प्रश्नों के द्वारा शिक्षक छात्रों के ध्यान को किसी विशिष्ट बिन्दु पर आकर्षिक कर सकता है ।
4. प्रश्न रच–शिक्षण में सहायक है । इसमें आने वाली कठिनाईयों को ध्यान में रखकर उसका समाधान किया जा सकता है ।
5. इसके द्वारा विद्यार्थियों में सम्प्रेषण एवं अभिव्यक्ति संबंधी विकास होता है । विद्यार्थी उत्तर देते समय विचारों को तर्क संगतता, क्रमबद्धता का ध्यान रखते हैं साथ ही अन्य विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करने में योग्यता विकसित करता है ।
6. प्रश्न विद्यार्थियों द्वारा अर्जित ज्ञान का आंकलन एवं मूल्यांकन करने में सहायता प्रदान करते हैं ।
7. विद्यार्थियों में परीक्षण एवं जांच की क्षमता का विकास होता है जिससे सही गलत का पता चल सके।
8. प्रश्नोत्तर के माध्य से शिक्षक एवं विद्यार्थियों के मध्य अंतः क्रिया में वृद्धि होती है ।
9. प्रश्नों के माध्यम से विद्यार्थियों को पुनर्लबन प्राप्त होता है ।
10. मूल्यांकन के द्वारा शिक्षक को यह ज्ञात हो जाता है कि विद्यार्थी सही दिशा में अधिगम कर रहे है या नहीं ?
11. विद्यार्थियों को पाठ्‌य–वस्तु व पाठ की ओर उन्मुख करना ।
12. पूर्वज्ञान का केंद्रीकरण व नवीन ज्ञानोन्मुख बनाना ।
13. विद्यार्थियों ने कितना ज्ञान प्राप्त किया इसका पूर्ण अनुमान लगाकर अग्रिम के लिए व्यवस्था करना।
14. विचार शक्ति, कल्पना एवं तर्कशक्ति का विकास करना ।

15. मस्तिष्क की क्रियाशीलता एवं मानसिकता का विकास करना ।

16. आकांक्षाओं, अभिलाषा आवश्यकता, महत्वकांक्षा का ध्यान रखना ।

17. ज्ञान का प्रयोग व उचित प्रदर्शन की व्यवस्था करना ।

18. विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान को जानने के लिये ।

19. विद्यार्थियों में विषय–वस्तु के प्रति अवधान, रूचि एवं जिज्ञासा बनाए रखने के लिए ।

20. विद्यार्थियों को सैद्धांतिक व व्यवहारिक रूप से तैयार करने के लिए ।

21. विद्यार्थियों की प्रगति एवं तर्कशक्ति का विकास करने हेतु ।

22. विद्यार्थियों के ज्ञान के परीक्षण एवं पाठ की आवृत्ति में सहायक ।

विषय का पूर्ण ज्ञान प्रश्न के माध्यम से प्राप्त होता है । प्रश्न की यह प्रक्रिया आदिकाल से किसी न किसी रूप में चली आ रही है । शंकाओं का समाधान प्रश्न के माध्यम से होता आ रहा है । प्रश्न शिक्षक के लिए एक अच्छे साथी के रूप में सहयोग देते हैं ।

11.5 लिखित प्रश्नों का स्वरूप और अभ्यास :

भाषा कौशलों में महत्वपूर्ण चार कौशल होते हैं । सभी का अपना स्थान है किसी एक की अनुपस्थिति में भाषा पर पूर्ण रूप से अधिकार प्राप्त नहीं किया जा सकता है । इन कौशलों में सबसे जटिल लेखन कौशन है । शिक्षा के दृष्टिकोण से लेखन–कौशल का विकास अनिवार्य माना जाता है इसके बिना हमारी औपचारिक शिक्षा अधूरी है । घरेलू भाषा पढ़ने और लिखने की कुशलता औपचारिक शिक्षा का अनिवार्य अंग है । भाषा के अन्य कौशलों के साथ–साथ लेखन का विधिवत अभ्यास करना अनिवार्य हो जाता है ।

प्रभावपूर्ण लेखन का महत्व –

भाषा लिपि प्रतीकों का प्रयोग करके अपने भावों, विचारों, प्रथा, परम्परा विश्वास को अंकित करना लेखन है । प्रत्येक भाषा की अपनी लिपि है । जिन्हें लिपि की समझ है वे भाषा को समझ सकते हैं एवं विषय से संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकते हैं । जिसे भाषा विशेष की पहचान तथा लिपि व्यवस्था की पर्याप्त जानकारी है वो ही लेखन में कुशलता हासिल कर सकता है ।

रॉबर्ट लैडो के अनुसार – 'अन्य भाषा में लेखन–कौशल सीखने से तात्पर्य लेखन–व्यवस्था के परंम्परागत प्रतीकों की लिपिबद्ध करना है जिन्हें लिखते समय लेखक ने मौन अथवा सस्वर रूप से प्रयुक्त किया हो अथवा दोहराया हो ।''

लेखन कौशल के माध्यम से छात्र का ज्ञान क्षेत्र विस्तृत होता है । यह विविध प्रकार की सामग्री एवं विविध विषयों में न केवल लेखन के आधार पर जानकारी प्राप्त करता है बल्कि अपने भावों तथा विचारों को

भी लिपिबद्ध करने की योग्यता अर्जित करता है । ज्ञानात्मक तथा भावात्मक का गहन अध्ययन तथा तत्संबंधी विचारों की स्थायी अभिव्यक्ति की कुशलता, लेखन के माध्यम से ही संभव है ।

लेखन–कौशल साहित्यक सृजन का मूल आधार है । लिपि–प्रतीकों के माध्यम से विचारों तथा भावों की शाश्वत अभिव्यक्ति साहित्य का रूप ग्रहण करती है । यद्यपि भाषा के मौखिक रूप द्वारा भी साहित्य–सृजन होता है परन्तु वह अत्यन्त सीमित और देश–काल से नियंत्रित होता है । व्यापक धरातल पर साहित्य की अभिव्यक्ति को स्थायित्व प्रदान करने का गौरव लेखन–कौशल को ही प्राप्त है ।

वस्तुतः भाषाई कौशल में लेखन–कौशल का शिक्षण विशेष महत्व रखता है । इसका कारण यह है कि वाद–विवाद, वार्तालाप, तथा वाचन की तुलना में लेखन एक जटिल कौशल है । इसमें शैलीगत तत्व वार्तालाप की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है । वार्तालाप में विचारों की मौखिक अभिव्यक्ति वक्ता की भाव–भंगिमा, अनुतान साँचे तथा विवृति द्वारा अधिक स्पष्ट होती है परन्तु लेखन में भाषा के चयनित प्रयोग के साथ ही साथ शैलीगत विशेषताएँ भी अपेक्षित है साथ ही भाषा की संरचना और शब्द–भण्डार पर पर्यापत अधिकार भी आवश्यक होता है । अतः लेखन कौशल को विधि कुशलताओं का समान्वित रूप माना जा सकता है ।

प्रश्नों के प्रकार –

क) विकार–विमर्श के अनुसार –

विस्तृत प्रश्न – इस प्रकार के प्रश्नों का स्वरूप सामान्य परन्तु उत्तर विस्तृत होता है । उदाहरण रामायण में राम का स्वरूप क्या है ।

प्रकरणात्मक प्रश्न – इसमें प्रकरण या प्रसंग को महत्व होता है जैसे रामवनगमन में क्या कारण थे?

ख) शिक्षण कार्यानुसार –

स्वभाविक प्रश्न – जो प्रश्न स्वभाविक व सामान्य सहज रूप से पुछे जाते हैं उसे स्वाभाविक प्रश्न कहते हैं । जैसे आपका नाम क्या है ?

औपचारिक प्रश्न – प्रश्नोत्तर को प्रश्नकर्ता व उत्तरदाता (विद्यार्थी) दोनों ही जानते या समझते हैं उसे आपैचारिक प्रश्न कहते हैं ।

परीक्षात्मक प्रश्न – परीक्षात्मक प्रश्न में पूर्वज्ञान का परीक्षण करके पाठोन्मुख करता है। अध्यचयनकाल में बालक ने कितना ज्ञानार्जन किया है । प्रश्नों में प्रायः क्या, क्यों, बक, कौन, किसलिए इन शब्दों की प्रयोग किया गया । इसे दो भागों में बाँटा गया है ।

प्रारंभिक प्रश्न – ये प्रश्न पूर्वज्ञान हेतु प्रस्तुत किये जाते हैं । प्रारभिक प्रश्न के माध्यम से अध्यापक अध्ययन के केंद्र बिन्दु तक पहुंच जाते हैं इसे प्रस्तावना प्रश्न भी कहते हैं ।

पुनरावृत्ति प्रश्न – ऐसे प्रश्न पाठ के सम्पूर्ण अंश से पाठ की आवृत्ति के लिए किये जाते हैं । पाठ

को हम 2–3 भागों में बांटते हैं ताकि पुनरावृत्ति के प्रश्न अलग हो व अंत में पूर्ण पाठ से पुनः प्रश्नों की व्यवस्था की जाये ।

ग) प्रश्नों के उद्देश्यों के अनुसार –

प्रत्यास्मरण व अभिस्विकारात्मक पर आधारित स्मृति प्रधान होते हैं और जब हम आवृत्ति करते हैं तो इसका प्रयोग होता है ।

परिचयात्मक प्रश्न – जिन प्रश्नों में पाठ का या विषय का परिचय कराया जाता है उसे प्रस्तावना प्रश्न कहा जाता है । इन प्रश्नों में छात्रों की विवेक शक्ति एवं योग्यता, प्रतिमा का परीक्षण करने के लिए किये जाते हैं ।

घ) स्टर्लिंग विश्वविद्यालय के अनुसार –

निम्न स्तर के प्रश्न – यह सामान्य प्रश्न माने जाते हैं । छात्रों द्वारा तथ्यों, नियमों, परिभाषाओं को यादि किया जाता है व उसकी स्मृति के आधार पर प्रश्न किये जाते हैं ।

मध्यम स्तर के प्रश्न – इसमें प्रयोगात्मक विधि का प्रयोग किया जाता है । बालक द्वारा अर्जित ज्ञान या बालक में समाहित ज्ञान को व्यवहारिक रूप से परीक्षित किया जाता है ।

उच्च्य स्तर के प्रश्न – यह प्रश्न तर्क शक्ति के विकास में सहायक होते हैं जो छात्र को नवीन ज्ञान की और ले जाते हैं इन प्रश्नों का निर्माण कल्पना के द्वारा होता है ।

अनुवर्ति प्रश्न –

अनुवर्ति अनुबोध प्रश्न – इसमें अति लघु प्रश्नों की प्रश्नावली की जाती है । इसमें खण्डानवय विधि का आश्रय लिया जाता है । अध्यापक के संकेत मात्र से प्रश्नोत्तर की प्राप्ति की जाती है ।

अनुवर्ति खोजपूर्ण प्रश्न – पूर्वज्ञान व अर्जित ज्ञान दोनों को आधार मान यह प्रश्न तैयार होते हैं उदहारण – प्रशन का उत्तर आप अपने शब्दों में दीजिए ।

अनुवर्ति पुनःनिर्देशीय प्रश्न – इस प्रश्न में विद्यार्थियों को विचार–विमर्श करने के लिए सम्मिलित किया जाता है या फिर कक्षा में सभी तक व्यवस्थित रूप से पहुँच सकें इसके लिए उचित उत्तर पाने के बाद उत्तर की दो या तीन बार आवृत्ति की जाती है ताकि सभी छात्र समझ सकें ।

11.6 निष्कर्ष :

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के उपरान्त इस मौखिक कौशलों का विस्तृत ज्ञान पा जाते हैं । साथ–साथ इसके मूल्यांकन में मौखिक व लिखित प्रश्नों को भी जान पाए हैं ।

11.7 आत्मजांच और परीक्षण

1. मौखिक कौशल का अर्थ बताए ।
2. मौखिक प्रश्नों का स्वरूव स्पष्ट करें ।
3. लिखित प्रश्नों का स्वरूप बताएं ।

11.8 सहायक ग्रन्थ सूची :

1. वरवाल, जसपाल सिंह (2005) हिन्दी भाषा शिक्षण, गुरूवर बुक डिपो, सुधान (लुधियाना)
2. खन्ना, ज्योति (2000), हिन्दी शिक्षण,धनपत राय एण्ड कम्पनी दिल्ली।
3. भाई, योगिन्द्रजीत (1984), हिन्दी भाषा शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
4. भाटिया, एम. एम. (1999), हिन्दी शिक्षण विधियां टण्डन पब्लिकेशन्ज, लुधियाना।
5. पाण्डे, रामशकल (1999), हिन्दी शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
6. शर्मा, बी. एन. (1968) , हिन्दी शिक्षण, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।
7. सफाया, रघुनाथ (1986–97), हिन्दी शिक्षण विधि, दिल्ली पुस्तक सदन, पटना।
8. सूद, विजय (1997), हिन्दी शिक्षण विधियां, टण्डन पब्लिकेशन्ज, लुधियाना।

....

भाषा के मूल्यांकन के प्रश्न पत्र

12.1 भूमिका

12.2 उद्देश्य

12.3 स्वरूप

12.4 आदर्श प्रश्न पत्र व सिद्धान्त

12.5 निष्कर्ष

12.6 आत्मजांच और परीक्षण

12.7 सहायक ग्रन्थ सूची

12.1 भूमिका

परीक्षाओं का आयोजन प्रति वर्ष शिक्षा बोर्ड व संस्थाएं करती हैं। इस आयोजन में बहुत से लोगों का योगदान रहता है । अध्यापक इस आयोजन में बहुत सी भूमिकाएं निभाता है ।

यह भूमिकाएं निम्नलिखित हैं –

1. प्रश्नपत्र का निर्माण करता है ।
2. परीक्षा भवन में निर्देशन करता है ।
3. उत्तर पुस्तिकाएं जांचता है ।

12.2 उद्देश्य :

इस पाठ को पढ़ कर आप सक्षम जो जायेंगे यह बता पाने में –

1. प्रश्न पत्र क्या होता है ।

2. भाषा के मूल्यांकन में प्रश्न पत्र की भूमिका ।

3. आदर्श प्रश्न पत्र कैसे निर्मित होता है ।

12.3 स्वरूप :

इस कड़ी में सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य प्रश्न पत्र निर्माण का होता है । प्रश्न पत्र के निर्माण में एक कुशल अध्यापक अपनी योग्यता का परिचय देता है । प्रश्न पत्र के बिना कोई भी परीक्षा आयोजित करना सम्भव नहीं है। प्रश्न पत्र समय पर व श्रुटि रहित तैयार हो, इसका ध्यान बहुत से लोगों को रखना पड़ता है । प्रश्न पत्र बनवाने के लिए प्रत्येक संस्था व बोर्ड के अपने–अपने नियम होते हैं कि किन लोगों से यह प्रश्न पत्र बनवाने हैं । प्रश्न पत्र की छपाई भी एक समस्या युक्त कार्य है क्योंकि इसे गोपनीय रखना अति जरूरी है, नहीं तो छपते ही बाजार में फोटो स्टेट की दुकानों पर बिकने लगेगा । प्रश्न पत्र के निर्माण में कुशलता, योग्यता, विशेषज्ञता व दूर दृष्टि अध्यापक को बहुत सुविधा पहुंचाती है ।

12.4 आदर्श प्रश्न पत्र व सिद्धान्त

एक आदर्श प्रश्न पत्र के निर्माण के निम्नलिखित सिद्धान्त हैं –

उद्देश्यों की पूर्ति : हिन्दी भाषा शिक्षण के कुछ उद्देश्य निर्धारत किए जाते हैं कक्षा में जिन–जिन उद्देश्यों को लेकर पढ़ाया गया है, उस सभी उद्देश्यों से सम्बधित प्रश्न पूछे जाने चाहिए । इन प्रश्नों के अंक भी निर्धारित कर देने चाहिए । हिन्दी के एक आदर्श प्रश्न पत्र में निम्नलिखित उद्देश्य सम्मिलित होने चाहिए–

1. अर्थबोध

2. अभिव्यक्ति

3. ज्ञान (शब्द–ज्ञान, व्याकरण, पाठ्य–सामग्री)

अगर ये चारों 50 अकों के प्रश्न पत्र में विभाजित करने हो तो निम्नलिखित तालिका के रूप में बांटे जा सकते हैं :–

उद्देश्य	**अर्थबोध**	**अभिव्यक्ति**	**सौन्दर्य**	**ज्ञान**
अंक	10	15	10	15

विषय वस्तु :

आदर्श प्रश्न पत्र के प्रश्नों का सम्बन्ध पढ़ाए गए, समस्त विषय वस्तु के साथ होना चाहिए, जैसे–

पाठ्य सामग्री, शब्दावली, व्याकरण, वर्तनी, अपठित गद्य, कविता रस अलंकार, रचना आदि । इनका निर्धारण अंकों के रूप में इस प्रकार हो सकता है :–

विषय वस्तु	अंक
पाठ्य सामग्री	5
अपठित गद्य	10
शब्दावली	5
कविता	5
व्याकरण	5
रस अलंकार	5
सुलेख	5
रचना	10
कुल अंक	**50**

प्रश्नों के प्रकार

एक आदर्श प्रश्न पत्र में पाठ्य सामग्री के अनुकूल निबन्धात्मक, लघुत्तर तथा वस्तुगत आदि विभिन्न प्रकार के प्रश्न पूछने चाहिए और उनका भी अंक विभाजन होना चाहिए ।

प्रश्नों के प्रकार	निबंधात्मक	लघुत्तर	वस्तुगत
अंक	20	15	15

प्रश्न पत्र की रूप रेखा :

प्रश्न पत्र की रूप रेखा तैयार करने के लिए उद्देश्यों, विषय वस्तु और प्रश्नों के प्रकार के अंक विभाजन को सामने रखना चाहिए ।

प्रश्न बनाना

आर्दर्श प्रश्न पत्र में अंक विभाजन के उपरान्त प्रश्न बनाने का चरण आता है । अब तक अध्यापक को पता चल जाना चाहिए कि उसने कितने निबन्धात्मक, कितने वस्तुनिष्ठ प्रश्न और कितने लघुत्तर बनाए जाने चाहिए, जो सरल, सुबोध एवं स्पष्ट भाषा के लिए होने चाहिए ।

विशेष निदेश

आर्दश प्रश्न पत्र में विद्यार्थियों को प्रश्नों को करने के ढंग के लिए विशेष निर्देश दिए जाने चाहिए। बहु विकल्प जांच प्रश्न का एक नमूना प्रस्तुत किया जाना चाहिए । इन निर्देशों की भाषा सरल, सुबोध व स्पष्ट होनी चाहिए ।

उत्तर तालिका

आद्र्श प्रश्न पत्र अपने साथ उत्तर तालिका की मांग करना है । यह उत्तर पुस्तिका जांचने वाले की सहायता के लिए होती है । इस तालिका में लघुतर वस्तुनिष्ठ प्रश्न का उत्तर निश्चित किया गया होता है और निबन्धात्मक प्रश्न सम्बन्धी प्रमुख विचार बिन्दु प्रस्तुत किए जाते हैं ।

अंक विभाजन

प्रत्येक प्रश्न के सामने उसके अंक दिए जाने चाहिए । अगर प्रश्न दो हिस्सों में बंटा है तो उसके लिए अंक का विभाजन भी किया जाना चाहिए ताकि विद्यार्थी को पता हो कि उसे कितनी विषय सामग्री किस भाग के लिए लिखनी है ।

विश्लेषण

एक आदर्श प्रश्न पत्र में अध्यापक यह भी निर्देश दे सकता है कि यह प्रश्न किस पाठ्य विषय से सम्बन्धित है, किस उद्देश्य से सम्बन्धित है और प्रश्न का रूप क्या है । इससे पता चल जाता है कि किसी पक्ष की अपेक्षा तो नहीं हो गई ।

उपर्युक्त विवेचन से हिन्दी के आदर्श प्रश्न पत्र निर्माण के सिद्धान्तों (सोपानों) का पूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है । एक नया अध्यापक प्रश्न पत्र निर्माण में इससे लाभ ले सकता है ।

12.5 निष्कर्ष :

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन उपारन्त हम प्रश्न पत्र का स्वरूप और उसके निर्माण को सही प्रकार से समझ सकते हैं ।

12.6 आत्मजांच और परीक्षण

1. भाषा की परीक्षा में प्रश्न पत्र के सोपानों का परिचय देते हुए आदर्श प्रश्न पत्र की आवश्यक बातों का वर्णन करें ।
2. भाषा की परीक्षा में प्रश्न पत्र के सिद्धान्तों का परिचय देते हुए आदर्श प्रश्न पत्र के निर्माण पर दृष्टि डालें ।

3. प्रश्न पत्र क्या है ? उसके विभिन्न सोपानों की चर्चा करें ।

टिप्पणी

क. प्रश्नों के प्रकार

ख. प्रश्न बनाना

ग. विश्लेषण

12.7 सहायक ग्रन्थ सूची :

1. वरवाल, जसपाल सिंह (2005) हिन्दी भाषा शिक्षण, गुरूवर बुक डिपो, सुधान (लुधियाना)
2. खन्ना, ज्योति (2000), हिन्दी शिक्षण,धनपत राय एण्ड कम्पनी दिल्ली।
3. भाई, योगिन्द्रजीत (1984), हिन्दी भाषा शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
4. भाटिया, एम. एम. (1999), हिन्दी शिक्षण विधियां टण्डन पब्लिकेशन्ज, लुधियाना।
5. पाण्डे, रामशकल (1999), हिन्दी शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
6. शर्मा, बी. एन. (1968) , हिन्दी शिक्षण, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।
7. सफाया, रघुनाथ (1986–97), हिन्दी शिक्षण विधि, दिल्ली पुस्तक सदन, पटना।
8. सूद, विजय (1997), हिन्दी शिक्षण विधियां, टण्डन पब्लिकेशन्ज, लुधियाना।

....